KAIVALYADHAMA LONAVLA

वसिष्ठसंहिता

(योगकाण्ड)

आलोचनात्मक संस्करण

(परिवर्धित)

सम्पादक मण्डल

दार्शनिक साहित्यानुसंधान विभाग

कैवल्यधाम लोनावला

कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मन्दिर समिति

स्वामी कुवलयानन्द मार्ग,

लोनावला, जि. पुणे

महाराष्ट्र (भारत) पिन - ४१० ४०३

मानव संसाधन मन्त्रालय, भारत सरकार एवं

महाराष्ट्र सरकार द्वारा अनुदानीत संस्थान

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठसंहिता

(योगकाण्ड)

आलोचनात्मक संस्करण
(परिवर्धित)

सम्पादक मण्डल
दार्शनिक साहित्यानुसंधान विभाग

कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मन्दिर समिति
स्वामी कुवलयानन्द मार्ग,
लोनावला, जि. पुणे
महाराष्ट्र (भारत) पिन - ४१० ४०३

मानव संसाधन मन्त्रालय, भारत सरकार एवं
महाराष्ट्र सरकार द्वारा अनुदानीत संस्थान

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठसंहिता

(योगकाण्ड)

आलोचनात्मक संस्करण

(परिवर्धित)

सम्पादक मण्डल

दार्शनिक साहित्यानुसंधान विभाग

कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मन्दिर समिति

स्वामी कुवलयानन्द मार्ग,

लोनावला, जि. पुणे

महाराष्ट्र (भारत) पिन - ४१० ४०३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सम्पादक एवं व्याख्याकार (प्रथम संस्करण)
स्वामी दिगंबरजी
डा. पीताम्बर झा
श्री. ज्ञान शंकर सहाय

सम्पादक मण्डल (परिवर्धित संस्करण)
स्वामी महेशानन्द - निदेशक,
डा. बाबू राम शर्मा , सहायक निदेशक,
श्री. ज्ञान शंकर सहाय, शोधाधिकारी
श्री. रविन्द्रनाथ बोधे, शोधाधिकारी
डा. भक्तिकर झा, शोधाधिकारी
श्री. चमन लाल भारद्वाज, शोध सहाय्यक

प्रकाशन तिथि -
प्रथम संस्करण - ३० अगस्त १९८४
परिवर्धित संस्करण - ७ जुलाई २००९ (गुरु पूर्णिमा)

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य - रू. २००/-

प्रकाशक -
श्री. ओम् प्रकाश तिवारी, सचिव,
कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मंदिर समिति,
स्वामी कुवलयानन्द मार्ग, लोनावला - ४१० ४०३

मुद्रक -
एस एन्टरप्रायजेस,
मधुराज नगर, सी १/२५,
१३७/ए, पौड रोड, पुणे - ४११ ०३८

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः ।
अध्यात्मे भौतिके चापि दक्षः सर्वेषु कर्मसु ।।

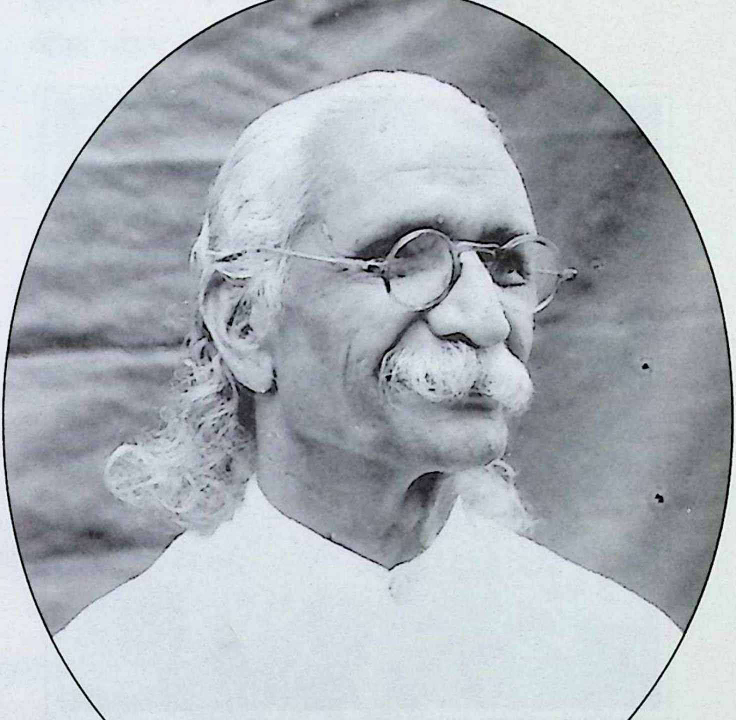

स्वामी कुवलयानन्दजी

(१८८३-१९६६)

संस्थापक

कैवल्यधाम योग-संस्थान

लोनावला - ४१० ४०३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

होता साकार, झाला निराकार ।
निरालंबाचा केला अवलंब ।।

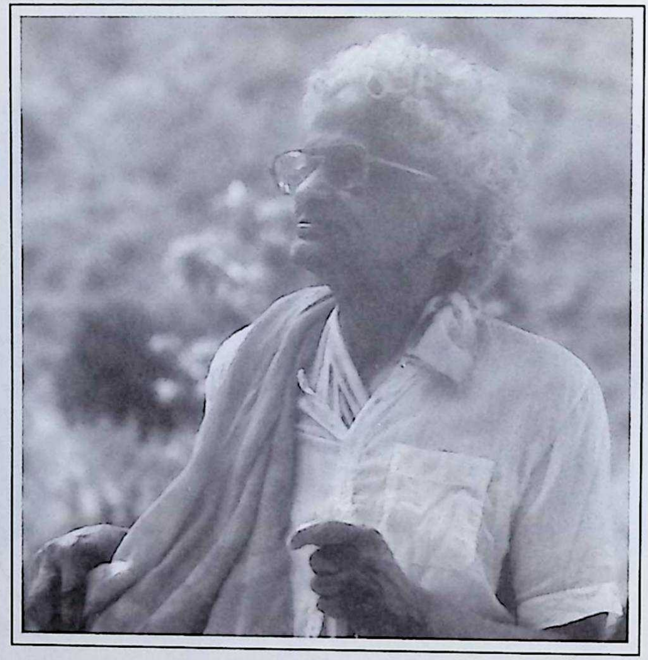

स्वामी दिगम्बरजी

(१९०३-१९९०)

अध्यक्ष/निदेशक : कैवल्यधाम

(१९६६-१९९०)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विषयसूची

प्राक्कथन (परिवर्धित संस्करण) ७
प्राक्कथन (प्रथम संस्करण) ९
भूमिका १
वसिष्ठ संहिता के अध्यायों का समीक्षात्मक सारांश ३१
मूल ग्रन्थ (अन्वय एवं अर्थ के साथ)
प्रथम अध्याय ४३
द्वितीय अध्याय ६४
तृतीय अध्याय ८२
चतुर्थ अध्याय १००
पंचम अध्याय ११७
षष्ठ अध्याय १३०

परिशिष्ट - १
ग्रन्थ संकेत सूची १४५

परिशिष्ट - २
हस्तलिखित ग्रन्थान्तरों के पाठभेद १४८

परिशिष्ट - ३
अन्य ग्रन्थों में वसिष्ठसंहिता के उद्धरण २०४

परिशिष्ट - ४
सप्तम अध्याय २१०
अष्टम अध्याय २२६

परिशिष्ट - ५
श्लोकार्ध - सूची २३६

परिशिष्ट - ६
विशेष शब्दसूची २५२

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते शक्ते बुद्धिमतां वर ।
वक्ष्यामि सुखदं नित्यमुपायं भवनाशनम् ।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राक्कथन
(परिवर्धित संस्करण)

वसिष्ठसंहिता के इस परिवर्धित संस्करण को अपने पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए जहाँ हमें हार्दिक प्रसन्नता एवं आत्मसन्तोष की अनुभूति हो रही है वहीं हम अपने उन सुधी पाठकों को हार्दिक साधुवाद देना भी अपना कर्त्तव्य समझते हैं जिन्होंने अपने सुझावों तथा अपनी जिज्ञासाओं के द्वारा हमें इस कार्य को सफलता पूर्वक पूर्ण करने में प्रेरित किया है।

इस ग्रन्थ की विशेषताओं से पाठक भलीभाँति परिचित ही हैं तथापि इस ग्रन्थ में प्रतिपादित यौगिक शरीरविज्ञान - जैसे नाडी, वायु, मर्मस्थान तथा मर्मस्थानों से सम्बन्धित प्रत्याहार की संकल्पना अपने आप में अनूठी है। इस के अतिरिक्त धारणा-ध्यान जैसे अभ्यासों की प्रक्रियाओं के प्रबोधकारी अनुदेश भी अपने आप में अद्वितीय ही हैं।

प्रस्तुत परिवर्धित संस्करण की भूमिका में, जैसे कि पाठक देख सकते हैं, प्रत्येक अध्याय का संक्षिप्त सारांश प्रस्तुत किया गया है ताकि पाठक वसिष्ठसंहिता के अन्तर्गत समस्त संकल्पनाओं एवं अभ्यासों को सुलभता से हृदयंगम कर सकें। इस के साथ साथ मूल श्लोकों के अन्वय तथा तदनुसार उनके अर्थ में परिवर्तन भी कई स्थानों पर देखा जा सकता है, जिस का उद्देश्य ग्रन्थकार के सूक्ष्म भावों को यथावत् पाठकों के सम्मुख रखना ही रहा है।

विभिन्न हस्तलेखों (जिन के आधार पर प्रस्तुत आलोचनात्मक संस्करण तैयार किया गया है) में प्राप्त पाठभेदों तक पाठक आसानी से पहुँच सकें इसलिए प्रत्येक श्लोक पर अंक निर्देश भी प्रस्तुत किये गये हैं जिन का विवरण परिशिष्ट - २ में उपलब्ध है। ग्रन्थ के बाह्य कलेवर तथा अन्य परिशिष्ट इत्यादि में भी सुधार का प्रयास किया गया है उदाहरणार्थ - श्लोकार्ध सूची ।

हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि वसिष्ठसंहिता का यह परिवर्धित तथा संशोधित संस्करण हमारे सुधी पाठकों की जिज्ञासाओं को शमन करने वाला सिद्ध होगा।

इस कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न करवाने में जिन महानुभवों ने अपने सहयोग द्वारा हमारा उत्साहवर्धन किया है उन सभी को धन्यवाद देना भी हमारा कर्त्तव्य है जिन में सर्वप्रथम श्री ओम् प्रकाश तिवारी जी, सचिव, कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मन्दिर समिति,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का नाम आता है जो विभाग के समस्त कार्यकलापों की निरन्तर जानकारी प्राप्त कर अपने अनुभूतिपरक विचारों द्वारा शोधकर्त्ताओं का उत्साह बढाते रहते हैं।

इस ग्रन्थ को परिवर्धित करने की स्वीकृति एवं इस संस्करण के प्रकाशन हेतु धनराशि का प्रबन्ध करने हेतु हम श्री सुबोध तिवारी, प्रशासन अधिकारी, कैवल्यधाम का भी हृदय से आभार प्रकट करते हैं।

हम उन सभी आश्रम बन्धुओं का हृदय से आभार प्रकट करते हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अपना अमूल्य सहयोग दिया है।

हम श्री पी. एच्. राऊत, सहायक लेखापाल, का हृदय से आभार प्रकट करते हैं जिन्होने इस संस्करण के निर्माण में टंकलेखन का कार्य बडी कुशलता पूर्वक किया है।

हम एस् इन्टरप्रायजेस् के संचालक श्री नितिन तनपुरे, का भी हृदय से आभार प्रकट करते हैं जिन्होंने अल्पसमय में इस संस्करण को मुद्रित करने का कार्य कुशलता पूर्वक सम्पन्न किया है।

हमारे सुधी पाठक इस संस्करण को हृदय से अपना कर हमारा उत्साहवर्धन करेंगे तथा पूर्ववत् अपने सुझावों को प्रेषित कर अनुगृहीत करेंगे ताकि भविष्य में उन सुझावों को अगले संशोधित संस्करण में सम्मिलित किया जा सके।

- स्वामी महेशानन्द

तथा

- डा. बाबू राम शर्मा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राक्कथन

(प्रथम संस्करण)

प्रस्तुत ग्रन्थ "वसिष्ठ संहिता" से सम्बन्धित सभी बातें बड़ी ही समीक्षात्मक शैली में "भूमिका" में आ गई हैं। यह भूमिका, यहाँ से १९६९ ई० में प्रकाशित पूर्वसंस्करण से, कुछ परिवर्तन के साथ ली गई है। विषय-सम्बन्धी विवेचनाएं इसमें आ जाने से अब उस सम्बन्ध में अधिक कहना आवश्यक नहीं है। किन्तु जहाँतक मूलग्रन्थ की बात है, उसमें बहुत अधिक त्रुटियाँ थी। पूर्वसंस्करण के उन त्रुटियों को दूर कर एक निर्दुष्ट एवं समालोचनात्मक-संस्करण तैयार करने की आवश्यकता बहुत दिनों से अनुभव की जा रही थी। अतः उन त्रुटियों को दूर करने के लिए हमने कुछ मुख्य-मुख्य स्थलों पर यथोचित पाठ एवं अर्थ-निर्धारण तथा विशिष्टार्थ- स्पष्टीकरण के लिए स्थान-स्थान पर टिप्पणी आदि देकर इस संस्करण को योग-जिज्ञासुओं के लिए उपयोगी बनाने का प्रयास किया है।

१. ग्रन्थ का परिमाण - सबसे मुख्य और महत्वपूर्ण परिवर्तन इस ग्रन्थ के परिमाण के सम्बन्ध में किए गए हैं। ऐसा लगता है कि पूर्व संस्करण के सम्पादकों को इस ग्रन्थ के प्राप्त अधिकांश हस्तलेखों में पुस्तक के आठ अध्याय मिले होंगे और तदनुसार उन्होंने प्रस्तुत ग्रन्थ के आठ अध्याय स्वीकार किए हैं, किन्तु जहाँ तक पुस्तक के छठे व सातवें अध्याय की बात है, ये पूर्णतः ज्योतिष एवं खगोलशास्त्र से सम्बन्धित हैं, अतः यदि यह मान भी लिया जाए कि ये दोनों अध्याय वसिष्ठ के ही लिखे हैं और अधिकांश हस्तलेखों में भी प्राप्य हैं, तो भी यह सुसंगत नहीं प्रतीत होता कि प्रस्तुत विषय से सर्वथा भिन्न विषय वाले अध्यायों का समावेश ग्रन्थ में हो ही। एक ही विद्वान विभिन्न विषयों का ज्ञाता हो सकता है, किन्तु सम्बन्धित विषय की विवेचना तो औचित्यपूर्ण होनी ही चाहिए। अतः योग-ग्रन्थ वसिष्ठसंहिता में ज्योतिष व खगोलशास्त्र से सम्बन्धित दो अध्यायों का समावेश उचित नहीं प्रतीत होता। इसी कारण हमने मूल पुस्तक में इन दो अध्यायों को सम्मिलित नहीं किया । फिर भी ग्रन्थकार वसिष्ठ और पूर्व संस्करण के सम्पादकों के श्रम को देखते हुए तथा तत्तद् विषय सम्बन्धी अनुसन्धित्सुओं को ध्यान में रखते हुए हमने इन दो अध्यायों को सातवें एवं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आठवें अध्याय के रूप में परिशिष्ट में उनके हस्तलिखित ग्रन्थों के पाठान्तरों के साथ यथावत् दे दिया है। और पूर्व संस्करण के आठवें अध्याय को छठे अध्याय के रूप में मूल पुस्तक में सम्मिलित कर लिया है, क्योंकि यह अध्याय योगविषय से सम्बन्धित था। इस प्रकार का हमारा यह नूतन सत्प्रयास योग-जिज्ञासुओं को वसिष्ठसंहिता "योगकाण्ड" के अन्तर्निहित वास्तविक तथ्यों को उजागर कर सन्तुष्टि प्रदान करेगा, यह हमारा विश्वास है ।

२. पाठनिर्धारण - दूसरे महत्वपूर्ण परिवर्तन की आवश्यकता पाठ-निर्धारण के सम्बन्ध में थी। इसके लिए हमने निम्नलिखित आधारों को स्वीकार किया - १. सन्दर्भ, २. प्रसंगानुकूल अर्थ, ३. व्याकरण, ४. छन्द

यद्यपि यह आवश्यकता नहीं कि ग्रन्थस्थ सभी श्लोकों में उपर्युक्त चारों आधारों का अनुपालन हो ही, किन्तु हमारा यह प्रयास अवश्य रहा है कि अधिक से अधिक आधारों पर ही पाठ निर्धारण हो, जहाँतक अन्तिम दो आधारों की बात है, इनके अनुसार तो काफी अधिक त्रुटियों को दूर किया गया है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए देखें - पूर्व संस्करण के १. २६, ३५, ३७ : २. २६, ४५ : ३. २९, ४०, ६५ श्लोक तथा इस संस्करण के १. २६, ३५, ३७ : २. २६, ४५ : ३. २८, ३९, ६३. किन्तु पहले दो आधारों के द्वारा जिन त्रुटियों की परीक्षा की गई, वे संख्या में कम हैं, पर उनके बने रहने पर अर्थ का अनर्थ हो जाने की सम्भावना थी। अतः उन सभी त्रुटियों को दूर करने का हमारा प्रयास रहा है। उदाहरणार्थ पूर्व संस्करण के तृतीय अध्याय के १६ वें एवं १७ वें तथा इस संस्करण के १५ वें व १६ वें श्लोकों की परीक्षा की जा सकती है । पूर्व संस्करण के इन दो श्लोकों में कुम्भक एवं रेचक के सन्दर्भ में क्रमशः मकारमूर्ति महेश्वर और अकारमूर्ति विष्णु का ध्यान करने की बात है । वास्तव में इसी अध्याय के पूर्व श्लोकों में कुम्भक की अवधि में उकारमूर्ति विष्णु तथा रेचक में मकारमूर्ति महेश्वर का ध्यान करने को कहा गया है। अतः हमने तदनुसार ही श्लोकों के पाठों में परिवर्तन कर उन त्रुटियों का निराकरण किया है । इसी प्रकार हमने अन्य स्थलों पर भी उपर्युक्त चारों आधारों के अनुसार सुधार किया है। उदाहरणार्थ पूर्व संस्करण के १. १३, २६, ३१, ३५, ३७, ३८, ७०: २. १७, ४५, ६२: ३. २८, २९, ४०, ६५, ६७: ४. २६, ३१, ३६, ५४: ८. १९, २०, २३ तथा इस संस्करण के १. १३, २६, ३१, ३५, ३७, ७२ : २. १६, ४५, ६२ : ३. २७, २८, ३९, ६३, ६४ : ४. २६, ३०, ३५, ५३ : ६. १९, २०, २३ श्लोकों को परखा जा सकता है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३. उपयुक्त अर्थ - प्रस्तुत संस्करण में हमने श्लोकों के अर्थ को भी सुसंगत बनाने का प्रयास किया है । उदाहरणार्थ :- पूर्वसंस्करण के २. ४, ६, १०, १७, २४, २६, ४०, ५३, ५४, ६१, ६२ : ३. २, ५७ : ४. ३, ४, ९, १०, ११ : ५. ४, १२, १३, ३३ : ८. १३, १४, २८, ३०, ४१ तथा इस संस्करण के २. ३, ५, ९, १६, २४, २६, ४०, ५३, ५४, ६१, ६२ : ३. २, ५६ : ४. ३, ४, ९, १० : ५. ४, १२, १३, ३३ : ६. १३, १४, २७, २८, ३९ श्लोकों को देखा जा सकता है ।

श्लोकों के अर्थ को योग-जिज्ञासु लोग भली प्रकार समझ सकें, एतदर्थ हमने प्रत्येक श्लोक के बाद उसका अर्थ भी सरल एवं सुबोध शैली में देने का प्रयास किया है । जैसे कि ऊर्ध्वरेतस् ८. १४ : मुनिशार्दूल १. १३ इत्यादि। इनका भी सुसंगत अर्थ हमने इस संस्करण के ६. १४ : १. १३ में दिया है ।

४. विशेष टिप्पणी - श्लोकों में कई ऐसे शब्द प्रयुक्त हुए हैं, जिनको बिना विस्तृत व्याख्या के समझना पाठकों के लिए कठिन था। अतः ऐसे शब्दों को विशेष टिप्पणी के अन्दर सरल शब्दों में व्याख्यायित किया है। देखें इस संस्करण के १. ४, २०, ३८, ४५, ५०, ५४ : २. १६, ३०, ४९ : ३. ३, ४, २२, ४२, ४३ : ५. १२, ३३.

५. श्लोक संख्या - प्रस्तुत संस्करण में पाठकों को श्लोक संख्या में भी अन्तर दिखाई देगा। इसका कारण यह है कि हमने श्लोकों के अर्थ के अनुसार श्लोक की संख्या निर्धारित की है, जिससे कि श्लोक और उनके अर्थ अपने आप में पूर्ण और सुसंगत लगें। अतः पूर्व संस्करण में जहाँ प्रथम अध्याय में - ८२, तृतीय में ७८, तथा अष्टम में - ६२ श्लोक थे, वहाँ इस संस्करण में प्रथम में - ८४, तृतीय में - ७५ तथा छठे में - ६१ श्लोक हैं ।

६. अन्वय - वसिष्ठसंहिता संस्कृत-ग्रन्थ है। सामान्य पाठकों को, मात्र श्लोकों के अर्थ को पढ़कर इसकी समीचीनता का निर्णय कर पाना कठिन था । अतः हमने इस संस्करण में प्रत्येक श्लोक का अन्वय (गद्यरूप) भी दे दिया है, जिससे संस्कृत से सामान्य परिचय रखने वाले व्यक्ति भी अर्थ की सुसंगता से परिचित हो सकें। योग के संस्कृत-ग्रन्थों में इस प्रकार अन्वय के साथ प्रकाशन की परम्परा कैवल्यधाम ने सर्वप्रथम १९८० में प्रकाशित हठप्रदीपिका से प्रारम्भ की थी। उसी कड़ी में हमारा यह दूसरा प्रयास है ।

अन्त में हमने पूर्व संस्करण के समान ही हस्तलिखित ग्रन्थों के पाठान्तरों को यथावत्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इस संस्करण में दिया है, किन्तु थोड़े परिवर्तन के साथ। पूर्वसंस्करण में जहाँ मूल श्लोक के नीचे ही ये पाठान्तर दिए गए थे, वहाँ इस संस्करण में हमने सभी हस्तलिखित ग्रन्थों के पाठान्तरों को अध्याय के क्रम से एक साथ परिशिष्ट के रूप में दिया हैं ।

प्रस्तुत संशोधित समालोचनात्मक संस्करण सर्वथा त्रुटिरहित ही प्रमाणित होगा, ऐसा दावा नहीं किया जा सकता। अतः सुधी पाठकों से हम सदा यह आशा रखते हैं कि वे इस संस्करण की कमियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते रहने की कृपा करेंगे ।

प्रस्तुत संस्करण के प्रकाशन के सन्दर्भ में हम भारत-सरकार के आभारी हैं, जिनके अनुदान से ही यह सम्भव हो पाया ।

कैवल्यधाम के आश्रम-बन्धुओं का जो समय-समय पर अमूल्य सुझाव व मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा, उसके लिए हम उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं, तथा अपने दार्शनिक-साहित्यानुसन्धान विभाग के सहयोगी बन्धुओं के बहुविध सुझाव व सहायता के लिए हम उनके कृतज्ञ हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भूमिका

भारतीय-चिन्तन-परम्परा 'कैवल्य' को मानवीय पुरुषार्थ के उच्चतम आदर्श के रूप में स्वीकार करते हुए 'योग' को इस आदर्श-प्राप्ति का प्रधान मार्ग मानते हैं, जैसा कि निम्न सन्दर्भों से ज्ञात होता है -

"विद्यामेतां योगविधिं च कृत्स्नम् ।" कठोपनिषद्, २.३.१८.

"यह ज्ञान और योग की विधियाँ ।" (कैवल्य के प्रधान मार्ग हैं).

"अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम् ।" याज्ञ. १.८.

"योग के द्वारा आत्म-साक्षात्कार ही परम धर्म है ।"

"ध्यानयोगेन सम्पश्येत् सूक्ष्म आत्माऽऽत्मनि स्थितः ।" याज्ञ, ३.६४.

"ध्यानयोग के द्वारा अन्तः स्थित सूक्ष्म आत्मा का दर्शन करना चाहिए ।"

"सूक्ष्मतां चान्ववेक्षेत योगेन परमात्मनः ।" मनु. ६. ६५.

"योग के द्वारा परमात्मा की सूक्ष्मता को पहचानना (जानना) चाहिए ।"

"एकाकी चिन्तयेन्नित्यं विविक्ते हितमात्मनः।" मनु. ४. २५८.

"नित्य एकान्त में आत्मश्रेय के सम्बन्ध में विवेचना करनी चाहिए ।"

उपर्युक्त उद्धरणों में मोक्षप्राप्ति के लिए योग, योगविधि, ध्यानयोग की उपादेयता प्रदर्शित की गई है । इन उद्धरणों पर विचार करने से ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन समय में योग का कोई व्यवस्थित सम्प्रदाय विद्यमान था, जिसे वैदिक दृष्टि से भी मान्यता प्राप्त थी । परन्तु वैदिक-परम्परा से सम्बन्धित योग का कोई क्रमबद्ध-ग्रन्थ वर्तमान में हमारे पास उपलब्ध नहीं है । यद्यपि योगसूत्र, गोरक्षशतक, हठप्रदीपिका इत्यादि योगविषयक ग्रन्थ हमारे पास परम्परा-क्रम से प्राप्त हैं, तथापि यह निश्चितरूप से ज्ञात नहीं हो पाता कि वे वैदिक परम्परा का अनुसरण करते हैं या नहीं। इन ग्रन्थों में श्रुति-स्मृतियों द्वारा प्रतिपादित वर्णाश्रमोक्त सन्ध्यावन्दनादिकर्म की अनिवार्यता कहीं भी नहीं बताई गई है तथा प्रणव को छोड़कर अन्य मन्त्रों की चर्चा भी नहीं की गई है । सम्प्रति उपलब्ध प्रामाणिक ग्रन्थ हठप्रदीपिका में तो प्रणव या ॐकार का अनुलेखन और भी आश्चर्यजनक है । वैदिक मन्त्रों को उद्धृत करने तथा वेदविहित कर्मों के विधिनिषेधों पर इन ग्रन्थकारों के सर्वथा मौन के कारण यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने वैदिक-परम्परा का अनुसरण किया है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अतः ऐसा कहा जा सकता है कि वैदिक परम्परा का अनुवर्ती योग का कोई प्रामाणिक ग्रन्थ आज हमारे पास उपलब्ध नहीं है । फिर भी यह अपूर्णता (रिक्तता) सम्प्रति उपलब्ध दो ग्रन्थों से बहुत मात्रा में पूर्ण होती है । प्रथम ग्रन्थ बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति तथा द्वितीय ग्रन्थ वसिष्ठसंहिता (योगकाण्ड) । पहला ग्रन्थ १९५१ ईस्वी में कै. श्री. मा. यो. म. समिति, लोनावला (पूना) की ओर से प्रकाशित हो चुका है और यह दूसरा वसिष्ठसंहिता (योगकाण्ड) योगमीमांसा भाग -८ संख्या-२ से भाग-१० संख्या-१ तक क्रमशः प्रकाशित हो चुका है । इसका पुस्तक के रूप में सर्वप्रथम प्रकाशन १९६९ ईस्वी में अंग्रेजी अनुवाद के साथ यहीं से हुआ था । प्रस्तुत अंग्रेजी-हिन्दी-संस्करण उसी पुस्तक का संशोधित रूप है। यह ध्यान देने योग्य है कि यह ग्रन्थ प्रसिद्ध योगवसिष्ठ, वसिष्ठ-धर्मसूत्र तथा वसिष्ठ स्मृति आदि से सर्वथा भिन्न ग्रन्थ है । इस ग्रन्थ में योग के आठों अङ्गों का स्पष्ट विवरण मिलता है परन्तु इस विवरण की प्रक्रिया अन्य ग्रन्थों से कुछ भिन्न है । जब हम इसका क्रमशः विवरण प्रस्तुत करेंगे तब यह विशेष रूप से स्पष्ट होगा । अभी यहाँ हम इस ग्रन्थ की विशेषता के सम्बन्ध में कुछ विचार करेंगे ।

वैदिक आचार की अनिवार्यता

पहले कहा जा चुका है कि योगसूत्र और हठप्रदीपिका सहित अन्य योगग्रन्थ श्रुति और स्मृति के आचार के परिपालन के प्रश्न पर सामान्यतया मौन हैं किन्तु वसिष्ठसंहिता इस सम्बन्ध में सर्वथा चुप नहीं है। वसिष्ठजी का विशेष रूप से कहना है कि वैदिक आचार का परिपालन मुमुक्षु के लिए अत्यन्त आवश्यक है । (व. सं. १.२५, ६१; २.५६ - ६८; ३.६२; ४.६८-७३).

अब तक प्राप्त योग के किसी भी प्रामाणिक ग्रन्थ में नित्य, नैमित्तिक आचारों के परिपालन की अनिवार्यता पर बल नहीं दिया गया । केवल वसिष्ठसंहिता ने ही इन पर विशेष बल दिया है । वसिष्ठ ने प्रथमतः प्रवर्तक एवं विवर्तक दो मार्गों का उल्लेख किया है जिस में कर्म की प्रधानता (व. सं. १.१९) होने के कारण यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उन्हें कर्मसन्यास मान्य नहीं था । इन दोनों मार्गो को वसिष्ठ ने दो श्लोकों में निरूपित किया है (व. सं. १.१९, २१). आकाङ्क्षा से प्रेरित होकर किया जाने वाला कर्म भवसागर से मुक्त नहीं करवा सकता अतः इसे प्रवर्त्तक कर्म कहा जाता है । जो कर्म बिना किसी आकाङ्क्षा से स्वाभाविक धर्म समझ कर किया जाता है उसे निवर्तक कर्म कहते हैं। इस

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

प्रकार वसिष्ठ ने इन दोनों प्रकार के कर्मों में स्पष्ट भेद प्रतिपादित किया है । कर्म का वर्णन करते हुए ही वसिष्ठ ने पुनः उसके दो विभाग किए हैं - बाह्य (शारीरिक) तथा आभ्यान्तर (मानसिक) (व. सं. १-२२.२३)। यद्यपि सन्ध्यावन्दनादि कर्म मानसिक स्तर पर करने का आदेश कुछ ग्रन्थकारों द्वारा दिया गया है किन्तु श्रुतियों और स्मृतियों में बताए गए सभी प्रकार के कर्म मानसिक स्तर पर किए जाने के साथ-साथ वसिष्ठ नें आभ्यन्तर कर्म को बाह्यकर्म की अपेक्षा श्रेयस्कर माना है (वं. सं. १. २४)। लेकिन अन्य लोग ऐसा नहीं मानते हैं । गीता (६.११), योगियों के लिए मानसिक कर्म का निर्देश करती है तथा पतञ्जलि (४.७) भी शुक्ल कर्म का निर्देश करते हैं, तथापि इन ग्रन्थों ने मानसिक कर्म को श्रेष्ठ कर्म नहीं माना है। किन्तु वसिष्ठसंहिता जोर देकर बाह्य और आभ्यन्तर कर्म का विभाग करके आभ्यन्तर कर्म को सर्वश्रेष्ठ मानती है । यह वसिष्ठसंहिता की विशेषता है ।

ज्ञान और कर्म का समन्वय

वसिष्ठ के अनुसार मात्र ज्ञान अथवा कर्म मोक्ष के लिए पर्याप्त नहीं है । इन दोनों के समन्वय से किया गया आचार ही अन्तिम लक्ष्य तक ले जाने में समर्थ है । कर्म न केवल मन को शुद्ध करता है अपितु ज्ञानप्राप्ति का सहायक बन कर मोक्ष तक भी पहुंचाता है। इसको ही 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' कहा जाता है। यही प्राचीन समय में प्रसिद्ध था और इसी का उल्लेख हमारे शास्त्रों में मिलता है। देखें -

विद्यां चाऽविद्यां च यस्तद्वेदोमयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ।। (ईशोपनिषद्-९)

अर्थात् वह व्यक्ति जो विद्या (ज्ञान) और अविद्या (कर्म) दोनों का ज्ञान रखता है, वह अविद्या के द्वारा मृत्यु को पार करके विद्या के द्वारा अमृतत्व को प्राप्त करता है ।

तस्यै तपो दमः कर्मेति प्रतिष्ठा । (केनोपनिषद् ४-८)
तप, दम और कर्म इसके आधार है ।
कुटुम्बे शुचौ देशे स्वाध्यायमधीयानो
धार्मिकान् विदधत्........ब्रह्मलोकमभिसम्पद्यते न
स पुनरावर्तते ।। (छान्दोग्योपनिषद्, ८.१५)

अर्थात् जो व्यक्ति गृहस्थधर्म का पालन करते हुए अच्छे स्थान पर वेदों का अनवरत

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अध्ययन करते हुए तथा औरों को धार्मिक बनाते हुए जीवन-यापन करता है, वह ब्रह्मलोक को प्राप्त कर पुनः वहाँ से नहीं लौटता है ।

आत्मक्रीड आत्मरतिः क्रियावानेष ब्रह्मविदां वरिष्ठ :।

(मुण्डकोपनिषद् ३. १. ४)

सर्वदा आत्मचिन्तन करते हुए और आत्मा में ही आनन्द प्राप्त करते हुए तथा अपने कर्म को करते रहने से व्यक्ति ब्रह्म को जाननेवालों में श्रेष्ठ हो जाता है ।

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान और कर्म दोनों का मोक्ष के लिए साथ-साथ रहना आवश्यक है । आनन्दभट्टोपाध्याय, अनन्ताचार्य, दिगम्बरानुचर, रामचन्द्र, उपनिषद्ब्रह्मयोगी तथा और भी ईशावास्योपनिषद् के टीकाकार स्पष्टतया कहते हैं कि मोक्ष के लिए ज्ञानकर्मसमुच्चय ही एकमात्र आवश्यक साधन है। स्मृतिवाङ्मय में भी ऐसा ही मत प्रतिपादित किया गया है । देखें -

उभाभ्यामपि पक्षाभ्यां यथा खे पक्षिणां गतिः ।
तथैव ज्ञानकर्मभ्यां प्राप्यते ब्रह्मशाश्वतम् ।। (हारीतसंहिता ७-१०)

अर्थात् जैसे पक्षी आकाश में अपने दोनों पंखों के सहारे उड़ता है, उसी प्रकार व्यक्ति ज्ञान और कर्म, इन साधनों के द्वारा शाश्वत ब्रह्म को प्राप्त करता है ।

प्रहायोभयमप्येतद् ज्ञानं कर्म च केवलम् ।
तृतीयेयं समाख्याता निष्ठा तेन महात्मना ।। (शान्तिपर्व ३२०-४०)

अर्थात् मात्र ज्ञान अथवा मात्र कर्म वाले मार्ग को छोड़कर पंचशिख महात्मा ने यह तृतीय मार्ग (ज्ञानकर्मयुक्त) बताया ।

ज्ञानकर्मसमायोगात् परमाप्नोति पूरुषम् ।
पृथग्भावे न सिद्धयेत् उभे तस्मात्समाश्रयेत् ।। ....
तस्माद् द्वयोरेव भवेत् सिद्धिर्न ह्येकपक्षो विहगः प्रयाति ।।
कायक्लेशभयाच्चैव कर्म नेच्छन्त्यपण्डिताः । (बृ. या. ९-२८.३४)

अर्थात् ज्ञान और कर्म के समन्वय से व्यक्ति परमपुरुष को प्राप्त करता है । अलग अलग (दोनों में से किसी एक के अभ्यास से) नहीं प्राप्त कर सकता है । अतः दोनों का आश्रय लेना चाहिए... इसलिए सिद्धि दोनों के द्वारा प्राप्त होती है, क्योंकि पक्षी एक पंख के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सहारे नहीं उड़ सकता । अज्ञानी मनुष्य शारीरिक दुःख के भय से कर्म नहीं करना चाहते हैं ।

मेधातिथि, भास्कराचार्य, विज्ञानभिक्षु आदि अनेक मनीषी विद्वानों का भी ऐसा ही मत है । इस प्रकार 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' - जिसको अर्वाचीन लोगों ने मान्यता नहीं प्रदान की है - को प्राचीन समय में बहुत अधिक महत्त्व दिया गया, जिसका अनुमान हम उपर्युक्त साक्ष्यों के द्वारा कर सकते हैं ।

आद्यशङ्कराचार्य ने गीता पर अपनी टीका में इस वाद को पूर्वपक्ष में रखकर इसका बार-बार खण्डन किया है । इससे सिद्ध होता है कि उस समय में यह 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' बहुत प्रसिद्ध था । क्योंकि आद्यशङ्कराचार्य ने इसका खण्डन किया है । इसी कारण शनैः शनैः लोगों के मन से यह वाद मिट-सा गया। यद्यपि रामानुजाचार्य और अन्य आचार्यों ने इस वाद का पुनरुत्थान किया तथापि उसमें अपेक्षित बल न आ सका । बाद में योग-ग्रन्थों में भी 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' का निराकरण ही चला आ रहा है । परन्तु दूसरी तरफ वसिष्ठजी ने योग के क्षेत्र में इसका पुनरुत्थान कर 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' की आवश्यकता सिद्ध की है (व. सं. १. २७, ४. ६८, ८. ४-६)। वसिष्ठसंहिता के कुछ हस्तलेखों के समाप्तिवाक्य में इसका नाम 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' मिलता है, जैसे -

इति वसिष्ठकाण्डे ज्ञानकर्मसमुच्चये प्रथमोऽध्यायः। श.

उपर्युक्त उद्धरणों से पुनः प्रमाणित होता है कि वसिष्ठजी को 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' अभीष्ट था ।

ज्ञान और योग की समानता

यद्यपि वसिष्ठ की यह धारणा है कि ज्ञान कर्म के साथ मिलकर ही मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता है, किन्तु उन्होंने कर्म के स्वरूप की विस्तृत व्याख्या नहीं की है, क्योंकि धर्मशास्त्रों में इसका विशद् वर्णन उपलब्ध है । उन्होंने कर्म के मात्र दो मुख्य वर्ग बताए हैं । जो कि ऊपर दिया जा चुका है । किन्तु वसिष्ठ ने कर्म की तुलना में ज्ञान की व्याख्या विस्तार से की है। उनके मतानुसार सभी प्रकार के लौकिक ज्ञान मोक्ष के लिए उपयुक्त नहीं हो सकते हैं । मात्र योग द्वारा प्राप्त किया हुआ आत्मानुभव ही वास्तविक ज्ञान है, जो मोक्ष प्राप्ति कराता है । (व. सं. १.३१)। इस प्रकार अष्टाङ्गयोग द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अष्टांग योग के वर्णन के साथ साथ वसिष्ठ ने योगानुरूप मानवीय शरीर संरचना की भी चर्चा की है जिसके द्वारा योग के लक्ष्य को सरलता से प्राप्त किया जा सके ।

शरीर, नाड़ी, वायु और मर्मस्थान

नाड़ी शुद्धि के लिए वसिष्ठजी कुछ विशेष विधान करते हैं । जो योगसूत्र में नहीं पाया जाता है । योगसूत्र के समान अष्टाङ्गयोग का वर्णन यहाँ भी किया गया है, किन्तु इसके साथ-साथ नाड़ीशुद्धि का विस्तृत वर्णन भी वे प्रस्तुत करते हैं। यह नाड़ीशुद्धि का वर्णन आसन वर्णन के पश्चात् और प्राणायाम वर्णन के पूर्व आता है और लगभग सम्पूर्ण द्वितीय अध्याय उससे परिपूर्ण है । इसका विशेष ज्ञान कराने के लिए अनेकविध नाड़ियों का वर्णन देकर उसका कार्यक्षेत्र बताया है तथा उसके शुद्धिकरण का प्रकार भी बताया है । ऐसा वर्णन न तो योगसूत्र में ही और न हठप्रदीपिका में ही मिलता है । वसिष्ठसंहिता की यह विशिष्ट विशेषता होने के कारण हम ने इस विषय को विचार हेतु चुना है परन्तु नाड़ीशुद्धि के लिए सर्वप्रथम शरीर के सभी अंगप्रत्यङ्गों तथा उसमें संचार करनेवाले वायु का ज्ञान होना आवश्यक है । अतः अब शरीर, नाड़ी, वायु तथा मर्मस्थानों का वर्णन वसिष्ठ के अनुसार निम्नलिखित रूप में निरूपित किया जा रहा है ।

शरीर-परिचय

प्रत्येक शरीर का माप (व्यक्ति की अपनी अंगुली से) ९६ अंगुली का होता है । मानवशरीर के पृष्ठवंश में ३२ अस्थियाँ होती हैं । और उसके दोनों तरफ विद्यमान नाड़ियों की संख्या ७२ हजार है । ये सभी नाड़ियाँ मूलकंद में स्थित सुषुम्ना नामक नाड़ी के चारों तरफ व्याप्त है। उनमें ये चौदह प्रमुख हैं - सुषुम्ना, इड़ा, पिङ्गला, सरस्वती, वारुणी, पूषा, हस्तिजिह्वा, यशस्विनी, विश्वोदरा, कुहू, शंखिनी, पयस्विनी, अलम्बुषा और गान्धारी ।

वसिष्ठ ने इतनी ही नाड़ियों का नामकरण किया है । इन चौदह नाड़ियों में इड़ा, पिङ्गला और सुषुम्ना ये तीन प्रमुख हैं। इन तीनों में भी सुषुम्ना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सुषुम्ना मूलकन्द से निकलकर ऊपर की ओर चढ़ते-चढ़ते पृष्ठवंश द्वारा मस्तिष्क के बीच में पहुँच जाती है। अन्य सभी नाड़ियाँ सुषुम्ना को घेरकर रहती हैं। अब क्रमशः उनमें से तेरह नाड़ियों का यथाक्रम वर्णन प्रतीक चिह्न (आलेखन) के द्वारा बताया जा रहा है । अलम्बुषा नाड़ी नीचे की ओर जानेवाली होने के कारण यहाँ नहीं बताई गई है -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

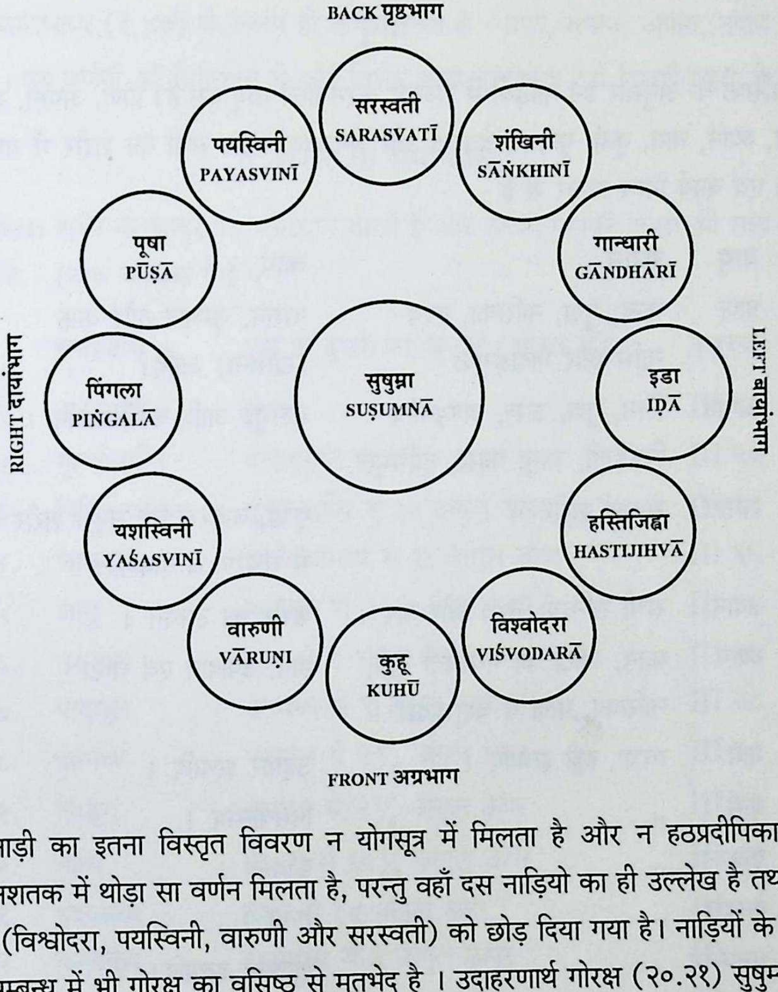

नाड़ी का इतना विस्तृत विवरण न योगसूत्र में मिलता है और न हठप्रदीपिका में । गोरक्षशतक में थोड़ा सा वर्णन मिलता है, परन्तु वहाँ दस नाड़ियो का ही उल्लेख है तथा शेष चार (विश्वोदरा, पयस्विनी, वारुणी और सरस्वती) को छोड़ दिया गया है। नाड़ियों के स्थान के सम्बन्ध में भी गोरक्ष का वसिष्ठ से मतभेद है । उदाहरणार्थ गोरक्ष (२०.२१) सुषुम्ना को मध्यवर्ती, गान्धारी को बाएँ आँख में, हस्तिजिह्वा को दाँई आँख में तथा पूषा को दाहिने कान में कहते हैं । इस सम्बन्ध में गोरक्ष यद्यपि इन नाड़ियों का शरीर में विशेष स्थान बताते हैं, तथापि इन नाड़ियों का परस्पर सम्बन्ध और स्थिति स्पष्ट नहीं बताते । किन्तु वसिष्ठ प्रत्येक नाड़ी की स्थिति और सम्बन्ध का उचित आकलन करते हैं, जैसा कि ऊपर के चित्र में बताया गया है। अन्य सभी नाड़ियाँ इन मूलभूत नाड़ियों से ही पीपल के पत्ते के शिराजाल के समान निकलती हैं (व. सं. २-४१)। इससे स्पष्ट पता चलता है कि मुख्य नाड़ी और गौण नाड़ियों में क्या भिन्नता है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वायु

वसिष्ठ के अनुसार इन नाड़ियों में सञ्चार करनेवाली वायु दस हैं। प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय । इन सभी का शरीर में यथाक्रम स्थान एवं कार्य निम्न प्रकार से है -

वायु	स्थान	कार्य
१. प्राण	कन्द, मुख, नासिका, हृदय नाभि और पादाङ्गुष्ठ	श्वसन, जृम्भण और कफ़ (खाँसना) आदि।
२. अपान	लिंग, गुदा, ऊरू, अण्ड़कोष पिण्ड़ली, जानु, कमर, नाभिमूल.	मलमूत्र आदि का विसर्जन ।
३. समान	सम्पूर्ण शरीर	वृद्धि, अन्नरस का संपूर्ण शरीर में संचरण व पोषण ।
४. उदान	सभी सन्धियाँ, हस्त और पाद ।	शरीर का उन्नयन ।
५. व्यान	कान, आँख का मध्यवर्ती घुट्ठी, नासिका, गला व चक्षु प्रदेश ।	हान, उपादान एवं चेष्टा
६. नाग	त्वचा, हड्डी इत्यादि ।	उद्गार इत्यादि ।
७. कूर्म	,,	निमेषोन्मेष ।
८. कृकल	,,	छींकना ।
९. देवदत्त	,,	तन्द्रा ।
१०. धनञ्जय	,,	शुष्कता इत्यादि।

गोरक्षशतक (२४) तथा वायुपुराण (१५.७.८) में वसिष्ठ के समान ही वायु के वर्णन का क्रम मिलता है । किन्तु छान्दोग्योपनिषद् (३.१३, ५.१९-२३), महाभारत (शान्तिपर्व १८४. २४-२५) तथा बृहद्योगियाज्ञवल्क्य (९.१४१) में इससे भिन्न प्राण, व्यान, अपान, समान और उदान यह क्रम मिलता है । बृहदारण्यकोपनिषद् (३. ९. २६) में वायु का क्रम जैसी कि वर्तमान मान्यता है - प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान - इसी रूप में मिलता है । तैतिरीयआरण्यक (१०.३३.१-५) कुछ अन्तर के साथ - प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान ऐसा क्रम बताता है । विष्णुपुराण (३.११.९०) का क्रम प्राण, अपान, समान, उदान,व्यान ऐसा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

है । व्यासभाष्य (३.४०) में अलग ही क्रम मिलता है - प्राण, समान, अपान, उदान और व्यान । इन वर्णनों की विविधता में कोई विशेष कार्यकारणभाव नहीं दिखाई पड़ता है ।

शरीर के मर्मस्थान

वसिष्ठ शरीर के अन्दर १८ मर्मस्थान बताते हैं और उनका परस्पर अन्तर भी साथ-साथ बताते हैं - (नीचे कोष्ठक देखें) -

	मर्मस्थान	एक से दूसरे का अन्तर (अंगुल में)'	उद्धरण
१.	पादाङ्गुष्ठ	शून्य	III ६५
२.	गुल्फ-सन्धि	पादाङ्गुष्ठ से ४½ अंगुल ऊपर	III ६५
३.	पिण्डिकामध्य	गुल्फ-सन्धि से १० अंगुल ऊपर	III ६६
४.	जानुमूल	पिण्डिकामध्य से ११ अंगुल ऊपर	III ६६
५.	जानु	जानुमूल से २½ अंगुल ऊपर	III ६७
६.	उरुमध्य	जानु से ९ अंगुल ऊपर	III ६७
७.	पायुमूल	उरुमध्य से ९ अंगुल ऊपर	III ६८
८.	देहमध्य	पायुमूल ये २½ अंगुल ऊपर	III ६८
९.	लिंङ्ग	देहमध्य से २½ अंगुल ऊपर	III ६९
१०.	नाभि	लिंङ्ग से १०½ अंगुल ऊपर	III ६९
११.	हृदयमध्य	नाभि से १४ अंगुल ऊपर	III ७०
१२.	कण्ठकूप	हृदयमध्य से ६ अंगुल ऊपर	III ७०
१३.	ज़िह्वामूल	कण्ठकूप से ४ अंगुल ऊपर	III ७१
१४.	नासामूल	जिह्वामूल से ४ अंगुल ऊपर	III ७१
१५.	नेत्रप्रदेश	नासामूल से ½ अंगुल ऊपर	III ७२
१६.	भ्रूमध्य	नेत्रप्रदेश से ½ अंगुल ऊपर	III ७२
१७.	ललाट	भ्रूमध्य से ३ अंगुल ऊपर	III ७३
१८.	ब्रह्मरन्ध्र	ललाट से ३ अंगुल ऊपर	III ७३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शरीर के मर्मस्थान (चित्र)

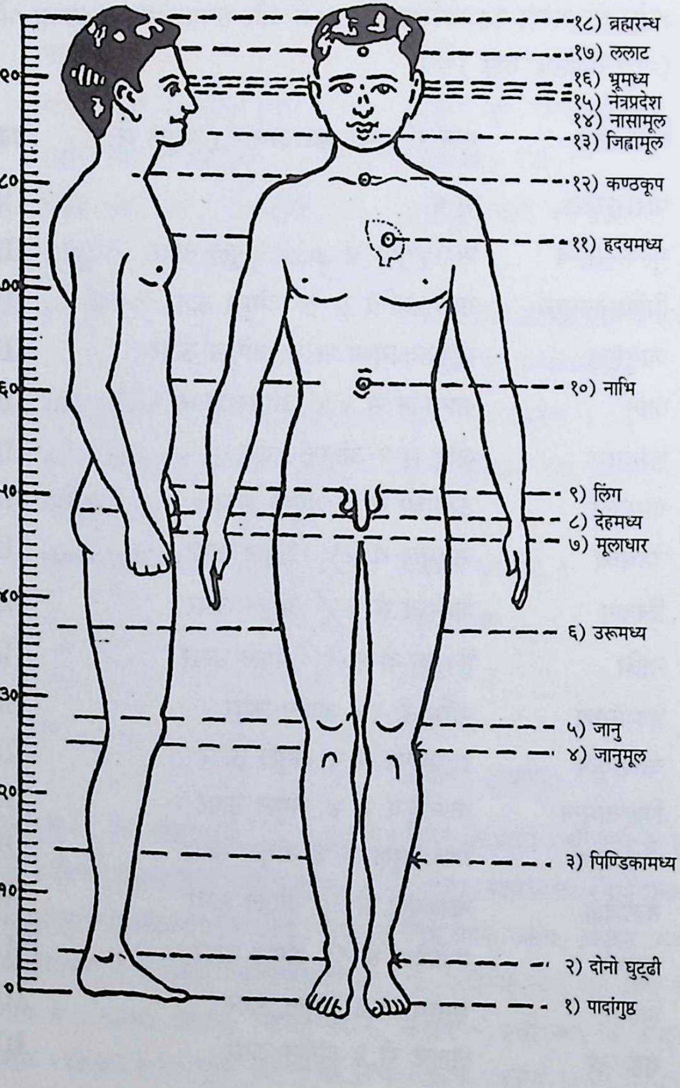

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठ के द्वारा कहे हुए शरीर के माप में तथा मर्मस्थानों के अन्तर को एकत्र करने पर शरीर के माप में कुल आधा अंगुल का अन्तर पड़ता है। यह आधे अंगुल का अन्तर भी तब होता है, जब देहमध्य पायुमूल से २½ अंगुल माना जाता है, जो कि 'भाण्डारकर प्राच्यविद्या शोधसंस्थान' के हस्तलेख के आधार पर है, किन्तु 'प्राज्ञ पाठशाला' और 'इण्डिया ऑफिस' के हस्तलेखों के अनुसार यदि पायुमूल से देहमध्य की दूरी दो अंगुल मानी जाए तो यह अन्तर समाप्त हो सकता है । वसिष्ठ के अनुसार इसका माप लेते समय पादतल से लिया गया है न कि पादाङ्गुष्ठ के ऊपरी भाग से। मर्मस्थानों का इतना सुस्पष्ट विवरण वसिष्ठसंहिता के अतिरिक्त अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता है । यह इसकी विशेषताओं में से एक है । (यद्यपि योगयाज्ञवल्क्य (७.१३) तथा अन्य ग्रन्थों में इसका विवरण मिलता है, किन्तु यह सिद्ध हो चुका है कि इन ग्रन्थों ने व. सं. से ही ये उद्धरण लिए हैं ।)

नाड़ीशुद्धि

नाड़ीशुद्धि के सम्बन्ध में न तो योगसूत्र में और न योगभाष्य में ही स्पष्ट विवरण मिलता है । इतना ही नहीं इनमें 'नाड़ीशुद्धि' शब्द का उल्लेख भी कहीं नहीं है, किन्तु वसिष्ठ नाड़ीशुद्धि के सम्बन्ध में विस्तार के साथ उल्लेख करते हैं तथा कहते हैं कि प्राणायाम का विशेष अभ्यास करने के पूर्व नाड़ीशुद्धि का अभ्यास अवश्यमेव करना चाहिए (व.सं. १.८३-८४) । इस प्रकार वसिष्ठ के अनुसार नाड़ीशुद्धि के बाद ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए । बिना नाड़ीशुद्धि के प्राणायाम का अभ्यास निरर्थक ही है । हठप्रदीपिका (२.७-१०) के अनुसार कुम्भकसहित लोम-विलोम का लगातार तीन महिने तक अभ्यास करने से नाड़ीशुद्धि हो जाती है । यद्यपि 'हठप्रदीपिका' में नाड़ीशोधन का उल्लेख है, किन्तु इसका वर्णन प्राणायाम के फल के रूप में किया गया है - विधिवत्प्राणसंयमैर्नाड़ीचक्रे विशोधिते (ह.प्र. २.४१)।

हठप्रदीपिका के मत से वसिष्ठ का यहाँ पर मतभेद है। वे यह नहीं मानते हैं कि नाड़ीशुद्धि प्राणायाम का फल है । अपितु उन्होंने प्राणायाम के लिए नाड़ीशुद्धि की पूर्ण आवश्यकता पर विशेष बल दिया है । प्राणायाम ही नहीं, वरन् उसके बाद के जो प्रत्याहार, धारणा, ध्यान इत्यादि अंग हैं, उनकी भी सिद्धि नाड़ीशुद्धि के बिना नहीं हो सकती है । इसी बात पर वसिष्ठसंहिता और अन्य योगग्रन्थों में मतभेद है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठसंहिता में नाड़ीशुद्धि के लिए निम्न प्रक्रिया बताई है । इसके अनुसार साधक को एकान्तसेवन कर, सन्ध्यावन्दनादि कर्म कर, समकायशिरोग्रीव हो, एक मृदु आसन पर बैठकर, उत्तराभिमुख अथवा पूर्वाभिमुख हो, क्रम से पूरक और रेचक का पूर्ण अभ्यास करना चाहिए। प्रथम एक नासापुट से रेचक करके उसी नासापुट से पूरक करना चाहिए । बाद में दूसरे नासापुट से रेचक करके पूरक करना चाहिए। इसको वसिष्ठ नाड़ीशोधन कर्म कहते हैं । वसिष्ठ की इस प्रक्रिया का उल्लेख भावागणेश और नागोजीभट्ट ने अपनी योगसूत्र की व्याख्या (१.३३) में किया है, किन्तु उन्होंने उसका 'प्राणायाम' नाम दिया है, जो वसिष्ठ के प्राणायाम से भिन्न है । वसिष्ठ ने प्राणायाम में कुम्भक अनिवार्य माना है जिसका वर्णन दूसरे अध्याय में किया गया है, जब कि प्राणायाम का विधिपूर्वक अभ्यास तृतीय अध्याय में वे बताते हैं। यद्यपि नाड़ीशोधन की प्रक्रिया वसिष्ठ ने आसन के बाद और प्राणायाम के पूर्व बताई है, तथापि उनकी विशेषता को लक्षित करने हेतु हमने आसन के पूर्व इस नाड़ीशोधन विषय पर विचार किया ।

नाड़ी शुद्धि के लक्षण

आसन का अभ्यास हो जाने के बाद ही प्राणायाम का अभ्यास किया जाता है । किन्तु वसिष्ठ के मत में केवल आसन का पूरा अभ्यास ही प्राणायाम करने के लिए पर्याप्त नहीं है । इसके लिए नाड़ीशुद्धि का अभ्यास भी आवश्यक है (व.सं. १.८३)। यद्यपि हठप्रदीपिका जैसे ग्रन्थों में प्राणायाम के पूर्व नाड़ीशुद्धि की आवश्यकता बताई गई है, किन्तु उन्होंने इसके लिए प्राणायाम से भिन्न किसी प्रकार का निर्देश नहीं किया है। मात्र वसिष्ठ ने ही इस सम्बन्ध में श्वास का एक प्रयोग बताया है, जिसमें कुम्भक-रहित केवल पूरक और रेचक का ही विनियोग होता है । यह विशेष प्रकार का श्वास का अभ्यास आगे आने वाले विध्युक्त-प्राणायाम से अलग ही है । इससे होने वाले नाड़ीशुद्धि का वर्णन वसिष्ठ ऐसा करते हैं - शरीर का हल्कापन, तेजस्विता, जठराग्नि का प्रदीपन और अन्तर्नाद की अभिव्यक्ति, इतने लक्षण जब तक उत्पन्न नहीं होते तबतक नाड़ीशुद्धि का अभ्यास करते ही रहना चाहिए (व.सं. २.६८-६९)। उपर्युक्त नाड़ीशुद्धि के लक्षण हठप्रदीपिका, दर्शनोपनिषद्, शाण्डिल्योपनिषद्, योगतत्त्वोपनिषद् तथा योगचूड़ामण्युपनिषद् में थोड़े-थोड़े अन्तर के साथ वैसे के वैसे ही मिलते हैं ।

शिवसंहिता के अनुसार नाड़ीशुद्धि से योगी का शरीर सन्तुलित, सुगन्धित, दीप्तिमान,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मधुरकण्ठ, विकसित-अवयव, सुसंस्कृत आचार, प्रसन्नता, कमनीय अङ्ग, भरावदार वक्ष, शरीर की दृढ़ता तथा क्षमता इन सभी से पूर्ण हो जाता है । इस प्रकार शिवसंहिता ने व.सं., हठप्रदीपिका आदि की तुलना में सुगन्ध, सुसंस्कृत-आचार तथा कमनीय अवयव, इतना विशेष बताया है । मार्कण्डेयपुराण में स्थिरता, आरोग्य, मार्दव, सुगन्ध, अल्पमूत्रपुरीषत्व, तेजयुक्तत्व, सुसंस्कार तथा मृदुभाषण, ये सब योग में प्रगति के पूर्वलक्षण बताए हैं । श्वेताश्वतरोपनिषद् (२.३०, ३१) में भी अल्पमूत्रपुरीषत्व यह लक्षण पाया जाता है । सम्भव है कि मार्कण्डेयपुराण ने श्वेताश्वतरोपनिषद् से ही यह लक्षण समुच्चय दिया हो ।

प्राणायाम

अष्टाङ्गयोग के चतुर्थ अंग प्राणायाम का वर्णन वसिष्ठसंहिता के तृतीय अध्याय में इस प्रकार आता है - यत्नपूर्वक श्वास को लेना, यत्नपूर्वक श्वास को रोकना और यत्नपूर्वक श्वास को छोड़ना, इसका नाम क्रमशः पूरक, कुम्भक और रेचक दिया गया है (व. सं. ३.२)। यद्यपि सामान्यतया पूरक, कुम्भक और रेचक को प्राणायाम की संज्ञा दी गई है, तथापि वसिष्ठ को प्राणायाम शब्द से मात्र कुम्भक ही अभिप्रेत है (व. सं. ३.२८)। इस प्रकार वसिष्ठ ने प्राणायाम को दो भागों में विभाजित किया है । एक मात्र कुम्भक का प्रकार और दूसरा पूरक-रेचक सहित कुम्भक का प्रकार । पूरक और रेचक मात्र के अभ्यास को ही वसिष्ठ प्राणायाम की संज्ञा नहीं देते । योगग्रन्थों और पुराणों में सामान्यतया उत्तम, मध्यम और अधम तथा सगर्भ और अगर्भ ऐसा प्राणायाम का विभाग किया गया है। यद्यपि वसिष्ठ यह प्रणाली मानते हैं, तब भी मात्रा की दृष्टि से इसको विभक्त करने की अपेक्षा उसका लक्षण परक विभाग करना उन्हें अधिक पसन्द है। इसलिए अधम प्राणायाम का लक्षण स्वेद निकलना, मध्यम का लक्षण कम्प तथा उत्तम का लक्षण उत्थान बताया है (व. सं. ३.२३)। पूरक, कुम्भक और रेचक की मात्रा क्रमशः १६, ६४ और ३२ जो कि सामान्यतया अन्यत्र भी मान्य है, वही वसिष्ठ को भी मान्य है (व.सं. ३. १०-१२)। यद्यपि कुम्भक की ६४ मात्रा बताई गई हैं, तथापि वसिष्ठ अपनी शक्ति के अनुसार करना, ऐसा भी विकल्प बताते हैं (व.सं. ३.११)। अन्य योगग्रन्थों में तथा पुराणों में सगर्भ और अगर्भ (किसी मन्त्र-जप के साथ किया गया प्राणायाम तथा उससे रहित प्राणायाम) ये दो प्रकार के प्राणायाम कहे गए हैं, परन्तु वसिष्ठ अगर्भ प्राणायाम नहीं मानते हैं, और मन्त्र तथा ध्यान के साथ ही प्राणयाम का विधान करते हैं । इसके साथ ही प्रणव-मन्त्र का विधान भी विशेष रूप से बताते हैं (व.सं. ३.९, ८.२५)। साथ-साथ गायत्री का विधान भी प्राणायाम के साथ बताते हैं। इस प्रकार गायत्री और प्रणव

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विशेष रूप से प्राणायाम में प्रयुक्त हुए हैं । प्रणव में अ, उ, म इन तीन अक्षरों का समावेश है । इनका उपयोग क्रमशः पूरक, कुम्भक और रेचक में करना चाहिए ।

केवलकुम्भक

हठप्रदीपिका और अन्य योगग्रन्थों में आठ प्रकार के कुम्भक बताए गए हैं । वसिष्ठ कुम्भक को दो ही प्रकार का बताते हैं - सहित और केवल । रेचक-पूरक के साथ किया गया कुम्भक - सहित तथा रेचक-पूरक के बिना किया गया कुम्भक - केवलकुम्भक कहा गया है। जबतक केवलकुम्भक की योग्यता नहीं आती तबतक सहित कुम्भक का अभ्यास अवश्यमेव करना चाहिए । जब केवलकुम्भक की सिद्धि होती है, तब योगियों में नवचैतन्य का संचार होता है तथा उनके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता है। उनकी बुद्धि में तीव्रता आ जाती है तथा बाल सफेद होना रुक जाते हैं । इस केवलकुम्भक की चर्चा बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति में नहीं मिलती है ।

वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड की बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति के साथ तुलना

दोनों ग्रन्थ प्राणायाम का वर्णन लगभग समान रूप से देते हैं । सगर्भ प्राणायाम का वर्णन दोनों में ही पाया जाता है । अगर्भ प्राणायाम का उल्लेख दोनों में नहीं है । मानसिक रूप से मन्त्र का उच्चारण करते-करते प्राणायाम करना सगर्भ प्राणायाम है । वसिष्ठसंहिता प्रणव और गायत्री का विनियोग विशेष रूप से बताता है, जबकि बृ.यो.या. सप्तव्याहृति प्रणव सहित पूरी गायत्री और गायत्री-शिरस् का तीन बार विनियोग प्रत्येक प्राणायाम में बताता है। दोनों ग्रन्थों में पूरक, कुम्भक और रेचक इन तीनों को ही प्राणायाम कहा गया है । परन्तु उसकी मात्रा में कुछ भिन्नता है । बृ. यो. या. कहता है कि तीनों (पूरक-कुम्भक-रेचक) की मात्रा समान होनी चाहिए । परन्तु व. सं. निश्चयपूर्वक कहती है कि उसकी मात्रा क्रमशः १६, ६४ और ३२ होनी चाहिए। व. सं. केवल-कुम्भक और प्राणायाम की परिणति नादोत्पत्ति में होना मानती है, किन्तु बृ.यो.या. में ऐसा वर्णन नहीं पाया जाता । व. सं. मात्र अन्तः-कुम्भक का ही उल्लेख करती है, किन्तु बृ. यो. या. बाह्यकुम्भक का भी वर्णन देता है । फिर भी अन्तःकुम्भक और बाह्यकुम्भक ऐसे पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग बृ. यो. या. नहीं करता है । दोनों ही ग्रन्थों में अ, उ, म, प्रणव के इन तीनों अक्षरों का ध्यान पूरक, कुम्भक और रेचक में करने का आदेश पाया जाता है । साथ ही प्रचलित मूलबन्ध आदि जो ह.प्र. में प्राणायाम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

की उपयुक्त प्रक्रिया मानी गई है, इन सबका उल्लेख न तो व. सं. और न बृ. यो. या. में मिलता है । इनका उल्लेख यो. सू. और व्या. भा. में भी नहीं मिलता है ।

नादोत्पत्ति

वसिष्ठ के अनुसार प्राणायाम का अन्तिम परिणाम नादोत्पत्ति है । उसकी रीति का वर्णन वसिष्ठ ने तीसरे अध्याय के ३९-४० श्लोक में किया है ।

नाशवान् शरीर का त्याग

गीता के आठवें अध्याय के १२-१३ श्लोक में कहा गया है कि प्राणोत्क्रमण के समय योगी को अपना प्राणवायु भ्रूमध्य में लाकर प्रणवोच्चारण के साथ प्राणत्याग करना चाहिए । इसी प्रकार का विस्तृत वर्णन व. सं. के तृतीय अध्याय में ५५-५६ श्लोक में पाया जाता है ।

प्रत्याहार

इसका वर्णन वसिष्ठ ने तीसरे अध्याय में किया है । उनके मत में प्रत्याहार चार प्रकार का होता है । १. स्वाभाविक रूप से विषयों की ओर जाने वाली इन्द्रियों का बलपूर्वक प्रत्याहरण करना, २. जो कुछ भी बाहर दिखाई देता है उन सबको अपनी आत्मा में आत्मा के समान ही देखना, ३. शरीरधारियों के लिए नित्यविहित कर्मों को, बिना किसी बाह्य आडम्बर के, अपनी आत्मा में अनुष्ठान करना, ४. प्राणवायु का निरोध करके शरीर के अठारह विभिन्न मर्मस्थानों में पूर्व-पूर्व स्थानों से खींचकर स्थिर करना (३.५७-७२)।

प्रत्याहार का पहला प्रकार गीता में भी पाया जाता है -

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ।। गीता ६.२६।।

अर्थात् यह चञ्चल और अस्थिर मन जहाँ-जहाँ घूमता है, वहाँ-वहाँ से उसे खींचकर आत्मा के वश में करना चाहिए ।

वसिष्ठकथित प्रत्याहार का दूसरा प्रकार भी गीता में कहा गया है -

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ।। गीता ६.२९।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सभी जीवों को अपने में और अपने को सभी जीवों में जो योगयुक्त योगी देखता है, वह सर्वत्र समदर्शी कहा जाता है। वसिष्ठोक्त प्रत्याहार का तीसरा और चौथा प्रकार अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता है ।

योगसूत्र (२.५४) एक अलग प्रकार का ही प्रत्याहार का वर्णन करता है । गोरक्षशतक (५५-५८) विपरीतकरणी और प्रत्याहार को समान ही मानता है । यह वर्णन वसिष्ठ के मत से भिन्न है । योग सूत्र के मत में प्रत्याहार बहिरङ्ग कहा गया है, परन्तु वसिष्ठ ने उसे आभ्यन्तर अङ्ग माना है। बृ.यो. या. (८.५१.५४) चार प्रकार के प्रत्याहार का वर्णन करता है - १. क्रमशः बाहरी श्वास का शरीर में निरोध, २. इन्द्रियों पर मन का नियन्त्रण, ३. इन्द्रियों का विषयों के साथ सम्बन्ध ही नहीं होने देना तथा ४. सङ्कल्प, अध्यवसाय, अभिमान और सूक्ष्मवायु का निरोध ।

धारणा

वसिष्ठ धारणा का वर्णन चौथे अध्याय में करते हैं । उनके मत में धारणा अर्थात् मन को आत्मतत्व में स्थिर करना है (४.३)। वसिष्ठ के अनुसार बाह्याकाश को हृदय अर्थात् अन्तराकाश में विलीन करना (४.४) भी धारणा है । वसिष्ठ धारणा का और भी तीसरा प्रकार बताते हैं - पञ्चभूतों में पाँच बीजाक्षरों को क्रमशः उन-उन महाभूतों में उन-उन देवताओं के साथ चिन्तन करना भी धारणा है (४.४-१४)। उपर्युक्त क्रम के लिए वसिष्ठ शरीर के अन्दर पञ्चमहाभूतों के अलग अलग स्थान, उनके बीजाक्षर तथा उनमें उनके देवता का वर्णन करते हैं, जो निम्नलिखित सारिणी से स्पष्ट है -

महाभूत	स्थान	बीजाक्षर	देवता
पृथ्वी	पाँव से जानु तक	ल्	ब्रह्मा
आप्	जानु से मूलाधार तक	व्	विष्णु
तेजस्	मूलाधार से हृदय तक	र्	रुद्र
वायु	हृदय से भ्रूमध्य तक	य्	महत्
आकाश	भ्रूमध्य से ब्रह्मरन्ध्र तक	ह्	अव्यक्त

पतञ्जलि के अनुसार 'मन को एक विशिष्ट स्थान पर बांधे रखना', धारणा की परिभाषा है - 'देशबन्धश्चित्तस्य धारणा' (यो.सू. ३.१)। व्यास अपने भाष्य में धारणा का विषय बाहर भी मानते हैं । परन्तु वसिष्ठ बाह्यविषय को धारणा का विषय नहीं मानते। इससे पता चलता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu. Collection

है कि पतञ्जलि ने धारणा की सामान्य परिभाषा दी है । जबकि वसिष्ठ विशेष रूप से धारणा की प्रक्रिया को बताते हैं । वसिष्ठ ने धारणा के लिए स्वीकृत, शरीर के आन्तरिक प्रदेशों का पृथ्वी आदि विशिष्ट नाम बताया है । गोरक्षशतककार (६९-७३) प्राण को पृथ्वी इत्यादि तत्त्व में पाँच घटिका (एक घटी = २४ मिनट) तक निरोध करके रखने को धारणा कहते हैं । गोरक्षमत से धारणा की सारिणी इस प्रकार है -

	धारणा	**तत्त्व**	**स्थान**	**बीजाक्षर**
१)	भूधारणा	पृथ्वी	हृदय	ल्
२)	वारिधारणा	आप्	कण्ठ	व्
३)	वैश्वानरीधारणा	वह्नि	तालु	र्
४)	वायवीधारणा	वायु	भ्रूमध्य	य्
५)	नभोधारणा	आकाश	ब्रह्मरन्ध्र	ह्

	वर्ण	**देवता**	**आकृति**
१.	पीत	ब्रह्मा	चतुष्कोण
२.	श्वेत	विष्णु	अर्धचन्द्र
३.	रक्त	रुद्र	त्रिकोण
४.	कृष्ण	ईश्वर	मण्डल
५.	वर्णहीन	सदाशिव	निराकार

गोरक्ष के द्वारा बताई गई इन धारणाओं की तुलना मे वसिष्ठ द्वारा वर्णित धारणाओं का प्रकार अलग ही प्रतीत होता है । यद्यपि दोनों के वर्णन में बीजाक्षर समान ही है, किन्तु स्थान में भिन्नता है । गोरक्ष के समान वसिष्ठ भी धारणा का परिमाण पाँच घटिका मानते हैं । बृ.यो.या. ने धारणा की चर्चा ध्यान के बाद की है, क्योंकि उसने धारणा की व्याख्या आत्मतत्व का हृदय में चिन्तन करना, ऐसा किया है ।

ध्यान

वसिष्ठ के मत में आत्मतत्व का चिन्तन ही ध्यान है। इसके अतिरिक्त ध्यान के अभ्यास के लिए साधक को वसिष्ठ के अनुसार मर्मस्थान, नाड़ी और वायु से परिचित होना आवश्यक है । स्थूल रूप से वसिष्ठ ध्यान के दो भाग करते हैं - सगुण और निर्गुण । सगुण ध्यान पाँच प्रकार के होते हैं (४.२६-५३)। परन्तु निर्गुण ध्यान प्रकाररहित एक ही है (४.२१-२५)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

निर्गुण ध्यान अर्थात् ब्रह्म में विलीन होना। यहाँ निर्गुण शब्द का तात्पर्य साहित्यिक अर्थ में नहीं किया जा सकता । यदि गुण शब्द का अर्थ सांसारिक गुणों से हो तो ब्रह्म जो इन गुणों से असम्पृक्त और अलौकिक गुणों वाला है, उसे इस पारिभाषिक अर्थ में वसिष्ठ ने निर्गुण ध्यान ही माना है ।

रामानुज तथा अन्यों ने निर्गुण के इसी विशेष अर्थ को स्वीकार किया है । बृ. यो. या. (९.१८२) में ध्यान का स्थान धारणा से पहले है और वहाँ उसका वर्णन इस प्रकार है - बुद्धि, अहंकार मन और इन्द्रियों को उनके विषयों के साथ एक स्थान में निरोध करना, किन्तु वसिष्ठ का मत, इस मत से भिन्न है ।

समाधि

वसिष्ठ के अनुसार जिसने यम नियनादि प्रथम सात अङ्गों का पूर्ण अभ्यास कर लिया है वही समाधि का अधिकारी है (४.५८)। वसिष्ठ यह भी कहते हैं कि पूर्व के अङ्गों का अभ्यास क्रमशः उत्तर अङ्ग के अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण है, किन्तु योगसूत्र और व्यासभाष्य इस सम्बन्ध में स्पष्ट नहीं हैं । यद्यपि प्राणायाम के अभ्यास के लिए आसन की परिपूर्णता वे अवश्य मानते हैं। पूर्वोक्त छः प्रकार के ध्यान समाधिप्रद कहे जाने वाले हैं, परन्तु समाधि एकमेव होने के कारण उसमें कोई प्रकार नहीं है - (व.स. ४.५९)।

अतः वसिष्ठ वर्णित समाधि पतञ्जलि की समाधि (३.३) से भिन्न है । बृ.यो.या. में समाधि का स्वतन्त्र वर्णन नहीं मिलता, मात्र आठ अङ्गों के साथ उसकी गणना की गई है । हमारे मत से यह प्रक्षिप्त अंश प्रतीत होता है, क्योंकि बृ.यो.या. में न तो ऋषियों ने याज्ञवल्क्य से प्रश्नों के सम्बन्ध में समाधि शब्द का प्रयोग किया है और न ही समाप्तिवाक्य में समाधि शब्द का व्यवहार हुआ है ।

यहाँ तक हम ने वसिष्ठोक्त योगङ्गों का वर्णन किया । अब हम उनके दार्शनिक विचारों के सम्बन्ध में चर्चा करेंगे ।

अद्वैत

वसिष्ठ का मत है कि जीवात्मा और परमात्मा की अभिन्नता ही अद्वैत है जो समाधि की विशिष्टता (४.५९) के वर्णन से स्पष्ट होता है । इससे स्पष्ट होता है कि उन्होंने ब्रह्म को अलौकिक गुणों से युक्त तथा सर्वव्यापी माना है । वे यह भी मानते हैं कि सगुण ब्रह्म विश्व

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का कारण है । इस प्रकार वसिष्ठ ब्रह्म को मायावादियों के समान पूर्णतः निर्गुण नहीं स्वीकार करते और इसी कारण से उन्होंने मायावाद को भी स्वीकार नहीं किया, जो शङ्कर के अद्वैत की विशिष्टता है । निष्कर्ष यह है कि वसिष्ठ विश्व के कारणरूप ब्रह्म की सत्यता तथा विश्व की सत्यता, दोनों स्वीकार करते हैं । वे भेदाभेदवाद का समर्थन करते हैं न कि अद्वैतवाद का ।

जीव

जीवात्मा के सम्बन्ध में वसिष्ठ का कहना है कि जिस प्रकार पानी में चन्द्रमा के हजारों प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ते हैं, उसी प्रकार जीवात्मा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब स्वरूप है (५.५)। इसी प्रतिबिम्ब-रूप जीवात्मा का पुनर्जन्म होता है । जीवात्मा ही जाग्रत अवस्था में क्षेत्रज्ञ कहा जाता है और जब अच्छे-बुरे का भोग करता है तब उसे भोक्ता कहा जाता है (५.७)। जब शरीरपात हो जाता है तब यही जीवात्मा लिङ्गशरीर धारण करके शुभाशुभ कर्म के अनुसार दूसरे स्थूल देह में सङ्क्रमण करता है । जब तक कर्म का पूरा क्षय नहीं होता तब तक यह जन्म-मरण का चक्र चलता ही रहता है (५.१२,१३), गीता में भी क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ संज्ञा क्रमशः शरीर और आत्मा को दी गई है ।

जीव की चार अवस्थाएँ

जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय ये चार अवस्थाएँ जीव की होती हैं, ऐसा वसिष्ठ मानते हैं । जीवात्मा जिसमें स्थूल विषयों का प्रत्यक्ष भोग करता है वह जाग्रत अवस्था है । जिसमें विषयों की अनुपस्थिति रहते हुए भी भोग करता है वह स्वप्नावस्था है । जिसमें जीवात्मा अपने स्वरूप में लीन होकर सब कर्मो से निवृत्त होकर रहता है वह सुषुप्ति अवस्था है तथा तुरीयावस्था में जब उसकी स्थिति होती है, तब वह जन्म-मरण के चक्र से छूट जाता है (५.९,११)।

पञ्चविध सृष्टिक्रम

सृष्टि का क्रम पाँच प्रकार से चलता है - भोक्ता, भोग्य, भुक्ति, भोगायतन और इन्द्रिय । इन सबों के मिलने पर सृष्टि का काम प्रारम्भ होता है । इसके अतिरिक्त छठा क्रम नहीं है (५.८)। जगत् के मिथ्यात्व का उल्लेख वसिष्ठ कहीं नहीं करते है और न ही उसकी दुःखमयता का उल्लेख करते हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सृष्टि की उत्पत्ति

वसिष्ठसंहिता सृष्टि की मूल उत्पत्ति क्रम के सम्बन्ध में अधिक कुछ नहीं कहते । सांख्य की त्रिगुणात्मक प्रक्रिया का भी व.सं. निर्देश नहीं करती है । सृष्टि-उत्पत्ति के सम्बन्ध में इनका भी इतना ही कहना है कि सृष्टि प्रथम अव्यक्त रूप में प्रणव में थी, फिर उसके द्वारा व्यक्त रूप में आकर स्थूल बनी (व.स. ५.९) ।

योग के लिए पात्रता

वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य अलग अलग होता है, तथापि वसिष्ठ किसी विशेष वर्ण को ही योग के लिए पात्र नहीं मानते अपितु वे सभी वर्णो के लिए योग को समान रूप से उपयोगी मानते है (१.३१)। इसी प्रकार यद्यपि वसिष्ठ अहिंसा और मिताहार को जीवन की विभिन्न अवस्थाओं (आश्रमों) के लिए अलग अलग बताते हैं फ़िर भी उपासना और योगाभ्यास के क्रम में वर्ण के दृष्टिकोण से कोई भिन्नता नहीं बताते हैं । अतः उनके मत से मानव मात्र के लिए योग-मार्ग है (१.२५-३१)।

शुभाशुभ चिह्न

मानव का उत्थान-पतन ग्रहों की स्थिति पर निर्भर करता है ऐसा मानकर याज्ञवल्क्य ने अपनी याज्ञवल्क्यस्मृति में ग्रहों की पूजा बताई है (१.३.८)। मनुष्य के जन्मकाल में ग्रहों की जो स्थिति होती है ज्योतिषी लोग उससे उसके शुभाशुभ फल का निर्देश करते हैं । इससे बहुत से लोगों का विश्वास है कि ग्रह की स्थिति और हस्तरेखा से यशापयश का अनुमान किया जा सकता है । वसिष्ठ भी मानते हैं कि मनुष्य के भूत, भविष्य और वर्तमान के शुभाशुभ फल का अनुमान नाड़ियों में विशिष्ट पद्धति से श्वास के चलने से किया जा सकता है (५.३३)। मध्यवर्ती सुषुम्ना नाड़ी के सव्यापसव्य में चन्द्र (इड़ा) और सूर्य (पिंगला) नाड़ी रहती है। इसके साथ ही राशियों के साथ ग्रहों का परिभ्रमण इन नाड़ियों में प्रतिबिम्बित होकर चलता है। राशियों के तीन विभाग किए गए हैं - १) चलराशि, २) अचलराशि और ३) चलाचलराशि । पहले राशि विभाग में मेष, कर्क तुला और मकर, दूसरे में वृषभ, सिंह वृश्चिक और कुम्भ तथा तीसरे राशि विभाग में मिथुन, कन्या, धनु और मीन आते हैं । प्रत्येक राशि के अन्दर वायु, अग्नि, पृथिवी, वरुण और व्योम इम महाभूतों का अस्तित्व होता है । इसमें चलने वाले वायु का परिभ्रमण दाहिनी अथवा वाम नासिका द्वारा सूचित होता रहता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है और दक्षिण या वाम नाड़ी का चलना शुभाशुभ फल का अनुमान करा देता है । जिस राशि वाली नाड़ी में वायु का अच्छा-बुरा परिभ्रमण होता है उससे कुछ विशिष्ट मानसिक क्षोभ का अनुमान किया जाता है । इस प्रकार से दिनभर चलती हुई राशियों में नाड़ी का और उसमें वायु के संप्रवाह से मन की क्षुब्ध अवस्था तथा मन की शान्तावस्था का भी अनुमान किया जाता है। भोजन, मैथुन, युद्ध और धनसंग्रह, ये क्रिया जब दक्षिण-नाड़ी में वायु का प्रवाह चलता रहता है, तब करना चाहिए । तीर्थयात्रा तथा विवाहादि शुभकार्य जब वामनाड़ी में वायु का प्रवाह चलता रहता है, तब करना चाहिए (५.४६, ४७)।

नाड़ीगत वायुसञ्चार का शुभाशुभ वर्णन सिवाय वसिष्ठसंहिता के हठप्रदीपिका आदि अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता है । वैसे शिवस्वरोदय आदि ग्रन्थों में भी इस प्रकार का वर्णन मिलता है ।

मृत्यु समीप आने पर योगियों का उचित आचार

मृत्यु समीप आने पर योगियों को अपने शरीर का त्याग, प्रणव जप इत्यादि में लीन होकर करना चाहिए, ऐसा प्राणायाम के अध्याय में वसिष्ठ ने कहा है । अन्त में आठवें अध्याय में वे निकटस्थ मृत्यु पर विजय के अनेक उपाय भी बताते हैं । इन सब उपायों में ओंकार का जप, रुद्र का ध्यान, त्र्यम्बक मन्त्र का जप, नारायण का ध्यान आदि प्रमुख हैं। मृत्यु पर विजय पाने में समाधि भी एक विशिष्ट प्रकार है (६.५३-५८)। इस प्रकार योगियों को किस प्रकार प्राणत्याग करना चाहिए अथवा मृत्यु को टालना चाहिए इसका वर्णन वसिष्ठ देते हैं ।

अभी तक हमने वसिष्ठसंहिता की आन्तरिक विशेषताओं की चर्चा की । अब इसकी बाह्य विशेषताओं का परीक्षण करेंगे ।

प्रस्तुत ग्रन्थ का कलेवर

प्रस्तुत पुस्तक आठ अध्याय में विभाजित है, परन्तु मूल में यह चार अध्याय का था या आठ अध्याय का इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि चतुर्थ अध्याय के अन्त में आने वाला निम्नलिखित वक्तव्य ग्रन्थ की समाप्ति का सूचक लगता है - 'जो इस प्रबन्ध का श्रद्धापूर्वक अध्ययन करेगा वह सभी पापों को पार कर अन्तिम तत्व को जान लेगा (४.६८, ७२)।'

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रस्तुत समीक्षा छः हस्तलेखों पर आधारित है जिस में (ष) हस्तलेख में चार ही अध्याय मिलते हैं । इससे सन्देह उत्पन्न होता है कि मूल में चार ही अध्याय रहे होंगे । पाँचवे अध्याय के आरम्भ में वसिष्ठ से शक्ति जो प्रश्न पूछता है उससे ऐसा लगता है कि अन्तिम चार अध्याय भी इसी का भाग हैं । हमारे पास आए छः हस्तलेख में से क को छोड़ और सभी में आठ अध्याय मिलते हैं । (र) हस्तलेख जो संवत १४६३ में लिखा गया है और प्रामाणिक माना जाता है उसमें भी आठ अध्याय ही मिलते हैं । नरसिंह वाजपेयी (१४५० ई.) ने अपने नित्याचार प्रदीप में वसिष्ठयोग की निम्नलिखित पङ्क्ति का उद्धरण दिया है ।

संसारदावदग्धानां योगिनामप्ययोगिनाम् ।
नान्यत्पश्यामि भैषज्यं मृत्योस्त्रैयम्बकादृते ।।

यह श्लोक व. सं. के षष्ठ अध्याय का १९ वाँ श्लोक है । इससे प्रमाणित होता है कि १४५० ई. तक यह ग्रन्थ आठ अध्याय का अवश्य था ।

रामायण के सम्बन्ध में भी ऐसा ही कहा जाता है । युद्धकाण्ड के अन्त में ग्रन्थसमाप्ति सूचक कुछ पङ्क्तियाँ आती हैं फिर भी उत्तरकाण्ड रामायण का ही भाग माना जाता है । इसी प्रकार वसिष्ठसंहिता के अन्दर पहले चार अध्याय योगाख्यान के रूप में और पीछे के चार अध्याय ज्ञानाख्यान के रूप में माने जाते हैं । इसका प्रमाण कुछ और हस्तलेखों में भी पाया जाता है । यथा -

योगाख्यानमिदं प्रोक्तं ज्ञानाख्यानमतः परम् ।

अर्थात् अभी तक योग का विस्तार किया गया, जब ज्ञानाख्यान का आख्यान किया जाता है । आठवें अध्याय के अन्त में ग्रन्थ की पूर्णता बोधक पङ्क्तियाँ नहीं आती हैं । इससे अनुमान किया जाता है कि यह ग्रन्थ का 'खिल' जैसा परिशिष्ट भाग लगाया गया होगा । अतः ऐसा लगता है कि वसिष्ठसंहिता में प्रारम्भ से ही आठ अध्याय रहे होंगे ।

वसिष्ठसंहिता की प्रतिकृति

व.सं. की बहुत सी पङ्क्तियाँ अन्य कई ग्रन्थों में पाई जाती है । कुछ पङ्क्तियाँ अक्षरशः आती हैं, कुछ अंशतः और कुछ थोड़े से परिवर्तन के साथ, १.योगियाज्ञवल्क्य (जो याज्ञवल्क्य-गार्गी संवाद के रूप में है), २. सूत संहिता का ज्ञानयोगखण्ड (जिसमें ईश्वर और बृहस्पति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का संवाद है), तथा ३. दर्शनोपनिषद् (जिसमें दत्तात्रेय और सांकृति का संवाद है । इन तीनों ग्रन्थों में व.सं. की पङ्क्तियाँ प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं वैसे त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद्, योगशिखोपनिषद्, वराहोपनिषद् आदि ग्रन्थों में भी व. सं. की पङ्क्तियाँ मिलती हैं, तथापि अर्वाचीन होने के कारण इन ग्रन्थों को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता । व. सं. की समान पङ्क्तियाँ जो इससे पूर्व कहे गए तीन ग्रन्थों में पाई जाती है, उसका क्रमशः स्पष्ट विवरण इस प्रकार है -

विषय	व.सं,	यो.या.	सू.सं.ज्ञा.यो.	द.उ.
यम	१.३८	१.५०	१३.३	१.४
नियम	१.५३	२.१-२	१४.१-२	२.१-२
आसन	१.८१	२.१४	१५.१२	३.९-१०
कन्द	२.१०	४.१४	११.४	४.२
सुषुम्णा नाडी	२.१९	४.२५	११.७	४.५
नाडी शोधनलक्षण	२.६९	५.२२	१२.१५-१७	५.१२
वायु	२.४६-५०	४.५४-५८	११.२९-३५	४.२७-३४
प्राणायाम	३.३	६.३	१६.२	६.२
प्रत्याहार	३.५८-५९	७.२-३	१७.१-५	७.१-३
धारणा	४.५-७	८.६-८	१८.१-५	८.१-५
ध्यान	४.१९,२२	९.२,६	१९.२६	९.४
समाधि	४.५७	१०.१	२०.१,४	१०.१-२

उपर्युक्त विवरण से पता चलता है कि बहुत सी पङ्क्तियाँ एक समान ही हैं ।

उपर्युक्त ग्रन्थों के विदग्ध पाठक इन उद्धृत विवरणों से अन्य ग्रन्थों के उचित सन्दर्भ को भी अपने मन में ला सकेंगे । अब कौन से ग्रन्थ ने किस ग्रन्थ के उद्धरण स्वीकार किए हैं, यह विचारणीय है । अतः मूल ग्रन्थ कौन है और मूल से लेने वाला उद्धरण ग्रन्थ कौन सा है, इस पर विचार अपेक्षित है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दर्शनोपनिषद्

यद्यपि इस ग्रन्थ के काल का ठीक-ठीक पता नहीं चलता है, फिर भी इसके अन्दर आए हुए अद्वैतवेदान्त विषयक प्रभाव से इतना तो कहा ही जा सकता है कि यह अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ नहीं है -

आत्मा सर्वगतोऽच्छेद्यो न ग्राह्य इति या मतिः ।
सा चाहिंसा वरा प्रोक्ता मुने वेदान्तवेदिभिः ।। द.उ. १.८
अहं शुद्ध इति ज्ञानं शौचमाहुर्मनीषिणः । द.उ. १.२१

इन पङ्क्तियों से दर्शनोपनिषद् के ऊपर वेदान्त की छाया स्पष्ट प्रतीत होती है। दर्शनोपनिषद् और वसिष्ठसंहिता में जो एक ही प्रकार की पङ्क्तियाँ पाई जाती हैं उस सम्बन्ध में अन्य ग्रन्थकार यह कहते हैं कि ये उद्धरण व. सं. से लिए गए हैं, जिससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि व. सं. ही मौलिक ग्रन्थ है ।

ध्यानबिन्दूपनिषद्, योगचूडामणि, योगशिखोपनिषद् शाण्डिल्योपनिषद् आदि ग्रन्थ भी दर्शनोपनिषद् के समकालीन ही है । शाण्डिल्योपनिषद् (१.७) में कहा गया है - तदेते श्लोका भवन्ति । और यह कहकर तेरह पङ्क्ति का उद्धरण दिया है, जो हठप्रदीपिका के (२.१०-४७) में मिलता है। इससे पता चलता है कि हठप्रदीपिका दर्शनोपनिषद् से पूर्व का होगा और हठप्रदीपिका, शाण्डिल्योपनिषद् से पूर्व का है । इसलिए व. सं. को शाण्डिल्योपनिषद् से पूर्व का होना चाहिए क्योंकि हठप्रदीपिका अवश्य ही व. सं. से अर्वाचीन है । इसी से हम यह भी कह सकते हैं कि इन सब समान उद्धरणो का मूल स्रोत व. सं. रही होगी है, तथा अन्य सभी ग्रन्थ इसके ऋणी होने चाहिए ।

सूत संहिता ज्ञानयोगखण्ड

यह सू.सं.ज्ञा. यो. आनन्दाश्रम (पूना) से प्रकाशित हुई है । इसमें आए हुए ज्ञान प्रदाताओं की वंशावली को देखने से यह ज्ञात होता है कि यह ज्ञान, शक्ति और वसिष्ठ के संवाद में से उद्धृत किया गया है । सू.सं.ज्ञा.यो.(७.५०-५५) में चक्रधर महानुभाव और उनके सुभगा नामक शिष्य का उल्लेख आता है । चक्रधर का समय १२५० इस्वी है, किन्तु व. सं. ११५० इस्वी का है । इससे यही प्रमाणित होता है कि सू.सं.ज्ञा.यो.ग्रन्थ व.सं. का ऋणी है और व.सं. ही मूल ग्रन्थ है साथ में यह भी स्पष्ट है कि सू.सं.ज्ञा.यो. के ऊपर अर्वाचीन वेदान्त की बहुत

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अधिक छाप है । अन्तः स्पष्ट है कि सू.सं.ज्ञा.यो. वसिष्ठसंहिता से अर्वाचीन है ।

योगयाज्ञवल्क्य

यह ग्रंथ योगयाज्ञवल्क्यम्, योगयाज्ञवल्क्यः तथा योगयाज्ञवल्क्यसंहिता इत्यादि नाम से प्रकाशित हुआ है । इसका हस्तलेख देवनागरी, ग्रन्थ, कन्नड़ और तेलूगु लिपि में मिलता है । दिवंगत पं. दीवानजी ने १९५४ ई. में इन सब भिन्न-भिन्नलिपिबद्ध २१ हस्तलेखों के आधार पर प्रकाशित किया था । इस पुस्तक में कितने ही स्थल थोड़े से परिवर्तन के साथ व. सं. के समान पाए जाते हैं । यथा -

आत्मजेनैवमुक्तस्तु वसिष्ठः प्रीतमानसः ।
पुत्रमालोक्य नेत्राभ्यां ज्ञानरूपमभाषत ।। व.सं. १.३०

भार्यया त्वेवमुक्तस्तु याज्ञवल्क्यस्तपोनिधिः ।
तां समालोक्य कृपया ज्ञानरूपमभाषत ।। यो. या. १.४३
अङ्गानि सम्यग्वक्ष्यामि यथाप्रज्ञं यथाश्रुतम्।
समाहितमना भूत्वा श्रृणु पुत्रक सुव्रत ।। व.सं. १.३२

वक्ष्याम्यङ्गानि ते सम्यग्यथापूर्वं मया श्रुतम् ।
समाहितमना भूत्वा ऋषिभिः सह संश्रृणु ।। यो.या. १.४५

यह समानता कोई आकस्मिक होगी, ऐसा नहीं माना जा सकता है । इसमें जो कुछ-कुछ अन्तर दिखाई पड़ता है, वह उस विषय की पृष्ठभूमि के अनुसार हो सकता है ।

योगयाज्ञवल्क्य के ५ वें अध्याय के ११-२२ श्लोकों में जो नाड़ीशुद्धि के विषय हैं, वे पक्तियाँ अक्षरशः व.सं. के द्वितीय अध्याय के ५८-७० श्लोकों के समान हैं । इसके अतिरिक्त यो.या. के ५ वें अध्याय के १० वें श्लोक के पूर्व जो 'केचित् वदन्ति' यह वाक्य आता है । यह विधान भी वं.सं. को ही सूचित करता है। इन सब कारणों से यह अनुमान किया जा सकता है कि यो.या. ने व. सं. से ही उद्धरण लिया होगा ।

इन समान उद्धरणों में जिन विद्वानों ने (अपने ग्रन्थ में) इनका प्रयोग किया है, वे सब व.सं. से लिए गए हैं, ऐसा कहते हैं न कि यो. या. से । इसी प्रकार भावगणेश और नागोजीभट्ट अपने योगसूत्र के भाष्य में नाड़ी शुद्धि के विषय में व. सं. का ही उद्धरण देकर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कुम्भक रहित मात्र रेचक पूरक से ही नाड़ीशुद्धि होती है, ऐसा बताते हैं । प्राणायाम की अधम, मध्यम और उत्तम ये तीन श्रेणी भी व.सं. में ही मूल पाई जाती हैं, यो.या. में नहीं । इन सब से प्रमाणित होता है कि व. सं. मूल है तथा यो. या. परवर्ती है ।

एक बात और विचार करने योग्य यह है कि विज्ञानेश्वर, अपरार्क, वाचस्पतिमिश्र आदि महान् पण्डितों ने जो उद्धरण अपने ग्रन्थों में दिए हैं, वे उद्धरण दिवंगत पं. दीवानजी द्वारा सम्पादित यो.या. ग्रन्थ में नहीं हैं, परन्तु वे उद्धरण वृ.यो.या.स्मृ. में मिलते हैं, जो कि कैवल्यधाम ने प्रकाशित किया है । वृ.यो.या.स्मृ. प्रामाणिक ग्रन्थ है, ऐसा उसके प्रस्तावना में भी बताया गया है ।

कालनिर्णय

व.सं. यह ग्रन्थ अत्यन्त प्राचीन तो नहीं माना जा सकता, क्योंकि बहुत प्राचीन ग्रन्थकारों ने इसका उल्लेख कहीं नहीं किया है । उदाहरणार्थ हलायुध (१०५० ई०) ने अपने ब्राह्मणसर्वस्व में तथा लक्ष्मीधर (११५० ईस्वी) ने अपने कल्पतरू ग्रन्थ में व. सं. का उल्लेख कहीं भी नहीं किया है । यद्यपि ये ग्रन्थकार अन्य ग्रन्थों का बहुत सा उद्धरण देते हैं । किन्तु व. सं. की एक भी पंक्ति वहाँ नहीं पाई जाती है । व. सं. यदि इन ग्रन्थों से प्राचीन होती तो इसके उद्धरण उन ग्रन्थों में अवश्य पाए जाते, क्योंकि 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' इन सब ग्रन्थों में समान ही है । वे ग्रन्थ बृहद्योगियाज्ञवल्क्य स्मृति और अग्निपुराण आदि ग्रन्थों से अपना सिद्धान्त दृढ़ करने के लिए उद्धरण देते हैं । व. सं. का एक भी उद्धरण न होने से यह प्रमाणित होता है कि व.सं. बारहवी शताब्दी के बाद की रचना रही होगी ।

व.सं. को अत्यन्त अर्वाचीन भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि नागोजीभट्ट (१७०० ईस्वी), भावागणेश (१५५०ईस्वी) तथा विज्ञानभिक्षु (१५५०) आदि विद्वानों ने व.सं. का उद्धरण काफी मात्रा में उद्धृत किया है । मल्लिनाथ (१४५० ईस्वी) जो विज्ञानभिक्षु के पूर्ववर्ती हैं, अपने रघुवंश और कुमारसम्भव की टीका में व. सं. का उद्धरण उद्धृत करते हैं । हठप्रदीपिका भी आसन का वर्णन करते समय वसिष्ठ का निर्देश करती है ।

वसिष्ठाद्यैश्च मुनिभिर्मत्स्येन्द्राद्यैश्च योगिभिः ।
अङ्गीकृतान्यासनानि कथ्यन्ते कानिचिन्मया ।। (ह.प्र. १. १५)

इससे पता चलता है कि व.सं. का समय ह.प्र. के समय से १०० वर्ष पहले अवश्य होगा ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ह.प्र. का समय १३५० ईस्वी माना जाता है तो व.सं. का समय उसके १०० वर्ष पूर्व का तो अवश्य माना जाना चाहिए । अतः हम व.सं. का समय ११५० ईस्वी के लगभग मानते हैं । तथापि व. सं. का आज का स्वरूप उस समय के स्वरूप से भिन्न जान पड़ता है । इसका थोड़ा सा भाग बाद के समय का अवश्य होगा। जैसे 'जय' नामक पुराण ही बाद में धीरे-धीरे बढ़कर महाभारत बना ।

योगज्ञान प्रदान करने वाली गुरुपरम्परा अनेक ग्रन्थों में भिन्न भिन्न प्रकार से मिलती है, परन्तु उन सब में वसिष्ठ और शक्ति इन दो व्यक्तियों का निर्देश सर्वत्र एक जैसा ही मिलता है मात्र शान्तिपर्व के अतिरिक्त । अब उसके वंशावली का क्रमशः वर्णन देखें -

शङ्कर सम्प्रदाय

नारायण
ब्रह्मा
वसिष्ठ
शक्ति
पराशर
व्यास
शुक
गौडपाद
गोविन्द
शङ्कर

सूतसंहिता का सम्प्रदाय

महेश्वर
बृहस्पति
स्कन्द
वसिष्ठ
शक्ति
पराशर
व्यास
सूत

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शाण्डिल्य संहिता का सम्प्रदाय

नारायण

ब्रह्मा

वसिष्ठ

शक्ति

पराशर

व्यास

ब्रह्मरात्र शाण्डिल्य मधु

शान्तिपर्व (महाभारत) का सम्प्रदाय

हिरण्यगर्भ

वसिष्ठ

नारद

भीष्म

शङ्कराचार्य अपने गीताभाष्य में लिखते हैं कि ब्रह्मा ने मरीचि आदि ऋषियों को प्रवृत्तिमार्ग का उपदेश दिया। इन मरीचि आदि सात ऋषियों, जो ब्रह्मा के मानसपुत्र थे, में वसिष्ठ भी एक थे। वे सब प्रवृत्तिमार्ग के प्रवर्त्तक थे। अतः वसिष्ठ ने इस प्रवृत्तिमार्ग का ज्ञान 'ज्ञानकर्मसमुच्चयवाद' द्वारा प्रवृत्त किया होगा। और इस प्रकार प्राचीन मूल योगशास्त्र का अंश इस क्रम से उतरते-उतरते व. सं. के अंश रूप में आया होगा।

वसिष्ठ संहिता के विविध काण्ड

प्रस्तुत योगकाण्ड वसिष्ठसंहिता का एक भाग मात्र है। इसके अतिरिक्त और भी अनेक काण्ड रहे होंगे। प्राचीन ग्रन्थकार वसिष्ठकल्प, वसिष्ठसंहिता, वसिष्ठयोग आदि संज्ञा देकर उन-उन काण्ड़ों में से वसिष्ठ के नाम से उद्धरण दिया करते हैं। उदाहरणार्थ - नरसिंह वाजपेयी अपने नित्याचारप्रदीप नामक ग्रन्थ (भाग २ पारा १००) में कहते हैं कि आगामी पंक्ति हमने वसिष्ठकल्प से ली है -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अहमस्य ऋषिः प्रोक्तश्छन्दो ऽनुष्टु भिदोच्यते ।
देवतात्र्यम्बको रुद्रः पञ्चाङ्गानि शृणुष्व मे ।।

यह श्लोक प्रस्तुत वसिष्ठसंहिता में नहीं पाया जाता है। इससे यह प्रमाणित होता है कि व. सं. के इस योगकाण्ड के अतिरिक्त वसिष्ठकल्प आदि अनेक काण्ड अवश्य रहे होंगे, जो काल के उदर में समा गए होंगे ।

राघवभट्ट अपने शारदातिलक नामक ग्रंथ के भाष्य में बहुत से उद्धरण वसिष्ठसंहिता से उद्धृत करते हैं और हैमाद्रि भी अपने ग्रन्थ में बहुत से उद्धरण उद्धृत करते हैं, जो प्रस्तुत संस्करण में नहीं हैं। ऐसे सब उद्धरण हमने एकत्रित कर जिज्ञासु पाठकों के समाधान के लिए सन्दर्भ के क्रम से इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में दे दिए हैं। जिज्ञासु पाठक कृपया वहाँ देखें। प्राप्त विवरणों के आधार पर हम यह निश्चय करने की स्थिति में नहीं हैं कि ऐसे श्लोक प्रस्तुत योगकाण्ड के भाग हैं या दूसरे लुप्त काण्ड़ों के भाग हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठ संहिता के अध्यायों का समीक्षात्मक सारांश

प्रथम अध्याय

प्रस्तुत ग्रन्थ **मुनि वसिष्ठ** तथा उन के **पुत्र शक्ति** के बीच संवाद से प्रारम्भ होता है जिसमें शक्ति ज्ञान प्राप्ति के उपायों के बारे में पूछते हैं जिन के द्वारा संसार के दुःखों से तथा जन्म, बुढापा एवं मृत्यु से मुक्त हुआ जा सकता है। पुत्र की जिज्ञासाओं से प्रेरित होकर मुनि वसिष्ठ उन गुह्य उपायों के विषय में बताना प्रारम्भ करते हैं जिन्हें **वसिष्ठ** ने स्वयं की मुक्ति के लिए ब्रह्मा से प्राप्त किया था ।

ब्रह्मा बोले -

कर्म दो प्रकार के होते हैं - प्रवर्त्तक (बन्धन परक) तथा निवर्त्तक (मुक्तिपरक)। जिस में प्रवर्त्तक सकाम कर्म जो बन्धक कारक तथा निवर्त्तक निष्काम कर्म जो मुक्तिकारक कहे जाते हैं। वेदों में दो प्रकार के कर्मो का विधान किया गया है - बाह्य तथा आभ्यन्तर (बाहरी एवं आन्तरिक)। मुमुक्षु को चाहिए कि वे अपने कर्म ज्ञान पर आधारित तथा कामना रहित होकर करें ।

तत्पश्चात् शक्ति ज्ञान के स्वरूप के विषय में पूछते हैं तथा वसिष्ठ घोषित करते हैं कि ज्ञान योगज्ञान से बिल्कुल भी भिन्न नहीं है और योग मार्ग अष्टांग - यम, नियम, आसन प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि वाला कहा गया है (व.सं.१/३३)। परन्तु, पतञ्जलि से भिन्न वसिष्ठ यह मानते हैं कि प्रथम चार बहिरंग हैं तथा शेष चार अंतरंग जब कि पतञ्जलि के अनुसार प्रत्याहार बहिरंग में समाविष्ट है ।

इस अध्याय में अष्टांग के प्रथम तीन अंग वर्णित हैं। वसिष्ठ १० यमों तथा १० नियमों की गणना करते हैं। दस यम हैं - १. अहिंसा, (हिंसाराहित्य), २. सत्य (सत्य वचन), ३. अस्तेय (निःस्पृह, कामनाराहित्य), ४. ब्रह्मचर्य (मैथुनराहित्य), ५. धृति (समभाव), ६. क्षमा (समत्व), ७. दया (कृपाबुद्धि), ८. आर्जव (एकरूपत्व), ९. मिताहार एवं १०. शौच। उक्त यमों का वर्णन पतञ्जलि के वर्णन से भिन्नता रखता है। क्योंकि अपरिग्रह जिसे पतञ्जलि ने पांचवें यम के रूप में गिनाया है वसिष्ठ ने यमों की सूची में रखा ही नहीं है। यह आश्चर्य की बात है कि वे सभी ग्रन्थ जिन्होंने दस यमों की बात कही है वे सभी वसिष्ठ द्वारा वर्णित

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यमों की चर्चा करते हैं। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् (मन्त्रभाग श्लोक ३२ एवं ३३), दर्शनोपनिषद् (१.६), वराहोपनिषद् (५/१२-१३) एवं शाण्डिल्योपनिषद् (१/४) में इसी प्रकार के दस यमों का वर्णन मिलता हैं। योग याज्ञवल्क्य में भी यमों का ऐसा वर्णन उपलब्ध है जिसका इस ग्रन्थ से अत्यधिक साम्य है ।

यम के बाद अग्रिम अंग है नियम। यहाँ पर भी पतञ्जलि से हटकर वसिष्ठ दस नियमों की गणना करते हैं। वे है - १. तप, २. संतोष, ३. आस्तिक्य, ४. दान. ५. ईश्वरपूजन, ६. सिद्धान्त श्रवण, ७. ह्री, ८. मति, ९. जप एवं १०. व्रत.

यदि हम इन यमों तथा नियमों की सूची का विश्लेषण करते हैं तो हम पाते हैं कि पतञ्जलि द्वारा वर्णित मात्र तप एवं सन्तोष इन दस नियमों की सूची में गिनाये हैं। शौच, जो पतञ्जलि के अनुसार नियम है, इस ग्रन्थ में दस यमों की सूची में रखा गया है। अपरिग्रह, जो पतञ्जलि के अनुसार पाँचवा यम है, उसे न तो यम में और न ही नियम के अन्तर्गत रखा है। पतञ्जलि के दो नियम - स्वाध्याय तथा ईश्वरप्रणिधान भी यम नियम की सूची से बहिष्कृत किए हुए लगते हैं। परन्तु स्वाध्याय तथा जप में तथा ईश्वरप्रणिधान में कुछ समानता मिलती है ।

यम नियमों की इस प्रकार की गणना अन्य ग्रन्थों जैसे त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् (तन्त्रभाग ३४, ३५), दर्शनोपनिषद् (१.७), वराहोपनिषद् (२/१४, १५). शाण्डिल्योपनिषद् (१/१५) तथा योगयाज्ञवल्क्य में मिलती हैं । अपवाद सिर्फ इस बात का है कि वे सभी ईश्वरपूजन के स्थान पर ईश्वरप्रणिधान तथा सिद्धान्तश्रवण के स्थान पर वेदान्तश्रवण का प्रयोग करते हैं । स्वामी चरणदास ने भी अपने अष्टांग योग में उन्हीं दस नियमों की गणना की है ।

ऐसा लगता है कि यमों तथा नियमों के घटकों के विषय में दो सम्प्रदाय रहे होंगे। दस यमों तथा दस नियमों की परम्परा का सूत्रपात किसने किया यह कहना तो कठिन है किन्तु यह तो कहा जा सकता है कि जिन्होंने भी दस यम तथा दस नियम की परम्परा अपनायी है उन्होंने बिना किसी बदलाव के एक से घटक गिनायें हैं ।

आसन अष्टांग योग का तीसरा अंग है । वसिष्ठ ने दस आसनों को गिनाते हुए उन का वर्णन किया है । वे हैं - स्वस्तिकासन, गोमुखासन, पद्मासन, वीरासन, सिंहासन, मयूरासन, कुक्कुटासन, कूर्मासन, भद्रासन एवं मुक्तासन ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१. **स्वस्तिकासन** - (व.सं. १.६८-६९)

अ. पैर के तलवों को विपरीत जंघा एवं पिण्डली के स्नायुओं के बीच में रखने को स्वस्तिकासन कहते हैं । (ह.प्र. १/१९ तथा घे.सं.२/१३ में भी उपलब्ध)

ब. टखनों (गुल्फ) को सीवनी के दोनों ओर में रखने को भी स्वस्तिकासन कहते हैं। वसिष्ठ द्वारा बतायी यह दूसरी विधि कुछ अलग है जो हठप्रदीपिका १/५३ में वर्णित भद्रासन से मेल खाती है ।

२. **गोमुखासन** (व.सं. १/७०)

इस में दाहिने टखने को नितम्ब की बायीं ओर तथा बायें टखने को नितम्ब की दाहिनी ओर रखकर किया जाता है । (ह.प्र. १/२० तथा घे.सं.२/१६ में भी उपलब्ध)

३. **पद्मासन** (व.सं. १/७१)

तलवों को विपरीत जंघा पर रख, हाथों को पीछे की ओर मोड कर क्रमिक रूप में पैर के अंगूठों को पकडना । हठप्रदीपिका में भी इसी प्रकार का वर्णन मिलता हैं । (ह.प्र. १/४४)।

४. **वीरासन** (व.सं.१/७२)

इस में एक पैर को दूसरी जंघा तथा अन्य पैर के ऊपर अन्य जंघा रख कर धारण किया जाता है । ऐसा ही वर्णन हठप्रदीपिका में भी पाया जाता है। (ह.प्र. १/२१) यद्यपि घेरण्ड में इस की विधि अलग प्रकार से उपलब्ध हैं । (देखें घे.सं.२/१७)

५. **सिंहासन** (व.सं. १/७३-७५)

इस आसन में टखनों को अण्डकोष के नीचे तथा सीवनी के दोनों ओर रखा जाता है तथा फैली हुई अंगुलियों के साथ हथेलियाँ घुटनों पर रखी जाती हैं, मुख को खुला रख दृष्टि को नासिकाग्र करने को सिंहासन कहा गया है । (यह ह.प्र.१/५२ में उपलब्ध है तथा यहाँ पर कहा है कि यह त्रिबन्धों को सुलभ बनाता है । स्वामी कुवलयानन्द जी नासाग्रदृष्टि की जगह भ्रूमध्यदृष्टि का सुझाव देते हैं क्यों कि उसका सिंह के साथ अधिक साम्य है । (विस्तार के लिखे देखें स्वामी कुवलयानन्द लिखित 'आसन', कैवल्यधाम द्वारा प्रकाशित १९९९, पृ.सं.७०-७१)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

६. **मयूरासन** (व.सं.१/७६-७७)

इस में दोनों हथेलियां को जमीन पर स्थापित कर तथा कुहनियों को शरीर के दोनों ओर सटा कर तथा सिर एवं पैरों को ऊपर की ओर अधर में दण्ड के समान धारण किया जाता है। (ह.प्र.१/३०-३१ तथा घे.स.२/२९-३०, ह.र. ३/४१-४२ मे भी उपलब्ध)। हठरत्नावली मयूरासन के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करती है जैसे **दण्ड मयूरासन** (जब इसे अधर में दण्ड के रूप स्थित किया जाय), **पार्श्वमयूरासन** (जब इसे बगल की ओर से किया जाय), **बद्धकेकि** (जब इसे पद्मासन में किया जाय), तथा **पिण्डमयूर** (जब इसे एक पैर फैलाकर तथा शेष मयूर के समान रखकर किया जाय) (ह.र.३/४३-४५)।

७. **कुक्कुटासन** (व.सं. १/७८)

इसमें, पद्मासन अपनाकर, हाथों को पिण्डली तथा जंघा के बीच में डाल कर हथेलियों को जमीन पर कसकर रखना - ताकि सम्पूर्ण शरीर उन्हीं पर उठाया जा सके - का समावेश होता है। (यह ह.प्र.१/२३, घे.सं.२/३१ में भी उपलब्ध है।) कपालकुरण्टक हठाभ्यासपद्धति में इस का पङ्गुकुक्कुटासन नाम मिलता है जिस में सम्पूर्ण शरीर जमीन पर कसकर रखे हुए एक ही हाथ के आधार से ऊपर उठाया जाता है।

८. **भद्रासन** (व.सं. १/७९)

दोनों तलवों को सटाकर, दोनों एडियों को अण्डकोष के नीचे सीवनी के दोनों ओर क्रमशः रखकर तथा दोनों पैरों को कसकर पकडकर इसे किया जाता है। (ह.प्र. १/५४ के अनुसार यह आसन गोरक्षासन के नाम से भी जाना जाता है। घे.सं. (२/९-१०) भद्रासन में एडियों की स्थिति का अलग विन्यास बताती है।)

९. **कूर्मासन** (व.सं.१/८०)

इस के अन्तर्गत एडियों पर इस तरह बैठना ताकि अंगूठे विपरीत दिशा में बाहर की ओर निकले हुए हों। (ह.प्र.१/२२ में इसी प्रकार की विधि उपलब्ध है, तेजोबिन्दूपनिषद् ३८ इस स्थिति को योगासन कहता है।)

१०. **मुक्तासन** (व.सं.१/८१-८२)

१. त्रिकास्थि के ऊपर बाँयी एडी को रखकर तथा दाहिनी एडी को बाँयी एडी पर रखकर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इसे किया जाता है। ह.प्र.१/३६ इसे सिद्धासन का एक प्रकार बताती है जबकि इसी पर ज्योत्स्ना एडी के इस विन्यास को गुप्तासन कहती है ।

२. सीवनी के बाँये भाग को बाँयी एडी से तथा दाहिने भाग को दाहिनी एडी से दबाना मुक्तासन के नाम से भी जाना जाता है । यह एक नया प्रकार है जो घे.सं., ह.प्र. अथवा ह.प्र.ज्यो. में उपलब्ध नहीं है । यह प्रथम अध्याय इस निर्देश के साथ समाप्त होता है कि नाडीशुद्धि के उपरान्त ही प्राणायाम का अभ्यास किया जाय अन्यथा समस्त प्रयास निरर्थक हो सकते हैं ।

* * * * *

द्वितीय अध्याय

चूँकि प्रथम अध्याय के अन्त में प्राणायाम प्रारम्भ करने से पूर्व नाडीशुद्धि करने पर बल दिया था, अतः यह अघ्याय नाडीशुद्धि प्रक्रिया, नाडियोंका उद्गम, कन्द, वायुसंख्या, उनके स्थान तथा कार्य इत्यादि के विषय में जानकारी के हेतु से प्रारम्भ होता है ।

शक्ति के द्वारा इन सभी के विषय में पूछे जाने पर वसिष्ठ जी योग की दृष्टि से मानवीय शरीर का वर्णन करने लगते हैं । इस सन्दर्भ में वे देहमध्य, कन्द, कुण्डलिनी, नाडियों का स्रोत, १४ नाडियों के नाम, उन का कन्द से उद्गम, साथ ही उन का अंतिम छोर, वायु उनके स्थान एवं कार्य आदि के विषय में चर्चा करते हैं । (प्रस्तावना में इन सभी संकल्पनाओं पर विस्तार से विचार किया गया है ।)

नाडीशोधन प्राणायाम हेतु पूर्वावश्यक तथ्यों का वर्णन करते हैं । सर्वप्रथम सभी कामनाओं के प्रति -पुण्य के भी प्रति - विराग विकसित किया जाए, एक आदर्श स्थान चुनकर एक कुटिया बनायी जाए । वह सुन्दर एवं पवित्र स्थान हो जहाँ फल, कन्द तथा जल विपुल मात्रा में उपलब्ध हो तथा वह नदी किनारे अथवा देवालय के समीप हो । आदर्श स्थान के चुनाव के विषय में विभिन्न ग्रन्थों में वर्णन मिलता है । (ह.प्र. १/१२ तथा घे.सं. ५/३-५ में हमे इन का बहुत अच्छा वर्णन मिलता है ।)

वसिष्ठ कहते हैं सुन्दर कुटिया एक आदर्श स्थान पर बनायी जाए । परन्तु इस का विशद वर्णन हमें ह.प्र.१/१३ तथा घे.स.५/६-७ में मिलता है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठ जी कुछ वैयक्तिक तैय्यारियों का भी विधान बताते हैं जो ह.प्र. तथा घे.स. में अनुपलब्ध है । वे पवित्र मन्त्रों द्वारा मन एवं काय को शान्त तथा धैर्यमुक्त बनाये रखना, समस्त शरीर में भस्म का लेप करना, बैठने के लिए कुश का या हिरण के चर्म का या किसी अन्य मृदु आसन आदि का विधान करते हैं । साधना आरम्भ करने से पूर्व विघ्नहर्ता श्री गणेश जी की पूजा फल पत्र, पुष्प, जल के द्वारा की जाए ताकि साधना के सभी विघ्न नष्ट हों । तदनन्तर इष्ट देवता की पूजा कर अपने गुरु के सामने दण्डवत् प्रणाम करें ।

वसिष्ठ जी आगे प्राणायाम हेतु आवश्यक शरीर स्थिति के विषय को स्पष्ट बताते हुए कहते हैं कि प्राणायाम के लिए पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख होकर पद्मासन में बैठना चाहिए, गर्दन, सिर तथा मेरुदण्ड सम स्थिति में हो, मुख बन्द रखा जाए तथा साधक शान्त एवं स्थिरता बनायें रखे ।

इन सभी पूर्वावश्यक बातों के कथनोपरान्त वसिष्ठ जी नाडीशोधक प्राणायाम की विधि का वर्णन करते हैं, जो निम्न प्रकार है - दाहिने हाथ की अंगुलियों की सहायता से दाहिनी नासिका बन्द कर नासाग्रदृष्टि जमाकर तथा वहीं **'वं'** बीजाक्षरयुक्त दीप्तिमान गोलाकार चंद्र की कल्पना कर उस पर ध्यान करते हुए बारह मात्रायुक्त इडा नाडी से पूरक करें ।

स्फुरतज्वाला के समान अग्नि मण्डल के बीच **'रं'** बीजाक्षरयुक्त का ध्यान करते हुए पिंगला नाडी से धीरे धीरे रेचक करें ।

इसका बार बार अभ्यास करना चाहिए । इसमें कुम्भक का निर्देश नहीं मिलता है । ऐसा लगता है कि वसिष्ठ जी नाडीशोधन प्राणायाम में कुम्भक का विधान नहीं करते ।

जहाँ तक रेचक में मानसदर्शन अर्थात् किसी बीजाक्षर की कल्पना की बात है यह घेरण्डसंहिता के अधिक समीप है पर बीजाक्षर भिन्न हैं । हठप्रदीपिका में इस प्रकार के मानसदर्शन या बीजाक्षर का संकेत हमें नहीं मिलता है । किन्तु वह नाडीशोधन प्राणायाम में कुम्भक का विधान करती है ।

नाडीशोधन प्राणायाम की चर्चा नाडीशुद्धि के लक्षणों के साथ सम्पन्न होती है (व.सं.२/६८-६९)। ये लक्षण हठप्रदीपिका २/१९-२० में वर्णित लक्षणों से लगभग समान हैं । नाडीशुद्धि के लक्षण प्रकट होने तक नाडीशोधन प्राणायाम करते रहने की सूचना दी गयी है ।

* * * * *

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीय अध्याय

इस अध्याय में अष्टांग योग के दो अंगों का - प्राणायाम तथा प्रत्याहार - का वर्णन किया गया है । योग ग्रंथों में हमें सामान्यतया प्राणायाम की दो परम्पराओं का वर्णन मिलता है । इनमें एक परम्परा प्राणायाम के साथ बीजमन्त्र अथवा प्रणव के अनुप्रयोग का विधान करती है । जब कि दूसरी परम्परा प्राणायाम के साथ ऐसे किसी बीजमन्त्र या प्रणव के अनुप्रयोग का विधान नहीं करती। हठप्रदीपिका दूसरी परम्परा तो वसिष्ठ संहिता पहली परम्परा का अनुसरण करती है। घेरण्ड संहिता दोनों परम्पराओं का वर्णन करती है तथा उन्हें सगर्भ एवं निगर्भ नाम से अभिहित करती है । मन्त्रसहित प्राणायाम को सगर्भ जब की मन्त्ररहित को निगर्भ प्राणायाम कहा गया है । वसिष्ठ संहिता के प्रणवात्मक प्राणायाम को घेरण्ड संहिता के सगर्भ प्राणायाम के समकक्ष कहा जा सकता है ।

प्रणवात्मक प्राणायाम का वर्णन करते समय वसिष्ठ जी सर्वप्रथम सृष्टि, स्थिति तथा लय का क्रमशः प्रतिनिधित्व करने वाले अ, उ, म् वर्णों की चर्चा करते हैं । आगे अ, उ, म् के स्वरूप का वर्णन करते हैं ।

'अ' का वर्णन षोडशवर्षीया, हाथ में दण्ड धारण करने वाली, हंसारूढ तथा रक्तकाया गायत्री के रूप में किया गया है (व.सं. ३/५), 'उ' शुभ्रकाया युक्त गरुडारूढ, चक्रधारिणी नाम से प्रसिद्ध युवती के रूप में किया है (व.सं.३/६)।

'म' श्वेतकाया वृद्धा, त्रिनेत्रा, हाथ में भालायुक्त, बैलपर सवार सरस्वती, महेश्वरी एवं पश्चिमासंज्ञा के रूप में किया है (व.सं.३/७)।

वसिष्ठ संहिता की भूमिका में उपलब्ध प्राणायाम की विधि का विस्तार से वर्णन दिया जा चुका है ।

प्राणायाम 'प्राणजय' की भी विधि है (व.सं. ३/३२)। आगे वसिष्ठ जी प्राणजय की अन्य विधियों के विषय में चर्चा करते हैं -

१. वायु से उदर को सम्यक् रूप से भर कर पादांगुष्ठ, नाभि अथवा नासाग्र पर ध्यान करें (व.सं.३/३४)।
२. इन्द्रियों को अपने अपने विषयों से हटाकर, अपान वायु को ऊपर की ओर उठाकर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अग्निस्थान अर्थात् नाभि में स्थापित करे । तदनंतर कर्णादि ज्ञानेन्द्रियों को दोनों हाथों से सम्यक् ढंग से अर्थात् कानों को अंगूठों से, आँखों को तर्जनी से तथा दोनों नासारन्ध्रों को मध्यमा अंगुलियों द्वारा बन्द करे। यह परिणाम स्वरूप नादोत्पत्ति के रूप में फलित होता है । ये ध्वनियाँ शंख, गर्जना तथा पर्वतीय झरनों की ध्वनि के समान होती हैं । यह वायुजय के नाम से प्रसिद्ध है (व.सं.३/३६-४०)।

३. केवल कुम्भक का अभ्यास कर, निर्मल होकर, ध्यानात्मक आसन (स्वस्तिकासन) में स्थिर हो कर, दाहिने गुल्फ को निहारें तथा प्रणव का मानसिक जाप करें । यह अपान वायु को अग्निस्थान में स्थापित करता है । चंचल चित्त मनुष्य को चाहिए कि अग्निजय होने तक इस प्रकार अभ्यास करे तथा प्राणवायु को अग्नि के स्थान से ऊपर उठाये । तदनंतर नाभि का निरीक्षण करते हुए ओंकार का तबतक मानसिक जाप करे जबतक चित्त उसमें लीन न हो जाय । यह कुण्डलिनी जागरण में निष्पन्न होता है (व.सं.३/४४-५०)।

प्राणायाम के इस प्रकार के वर्णन के अनन्तर वसिष्ठ जी प्रत्याहार के प्रकारों का वर्णन करते हैं । प्रस्तावना में इसे विस्तार के साथ प्रत्याहार के अन्तर्गत बताया है । प्रत्याहार के चौथे प्रकार की चर्चा के सन्दर्भ में वसिष्ठ शरीर के अठारह मर्मस्थानों का वर्णन उन के विशिष्ट स्थान के साथ करते हैं । शरीरस्थ मर्मस्थान के अन्तर्गत इन के स्थानों का विस्तार से वर्णन दिया गया है । (देखे - प्रस्तावना प्रत्याहार के अन्तर्गत)।

* * * * *

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय में वसिष्ठ जी अष्टांग योग के अन्तिम तीन अंगों - धारणा, ध्यान एवं समाधि - का वर्णन करते हैं । इन तीनों की चर्चा 'प्रस्तावना' के अन्तर्गत सम्मिलित है ।

चूँकि निर्गुण ध्यान की चर्चा विस्तार से प्रस्तावना में पहले से ही की गई है यहाँ पर सगुण ध्यान के प्रकारों की चर्चा अपेक्षित है ।

१. अष्टदलयुक्त अपने हृदय कमल में विराजमान दिव्य शरीरयुक्त नारायण का ध्यान करे जिन के हाथ में शंख, चक्र तथा गदा है, जो मुकुट एवं मणिबंध पहने हुए हैं, जिन का मुख

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पूर्ण चन्द्रमा के समान है, जो पीत वस्त्र धारण किये हुए हैं, उस नारायण से अपने तादात्म्य का अनुभव ही सगुण ध्यान है । (व.सं.४/२६-३१)

२. भावना करें कि हृदयकमल के मध्य में वैश्वानर है तथा वातरहित दीप के समान अग्नि प्रज्वलित है उस अग्निशिखा में परम आत्मतत्त्व को देखते हुए उसके साथ तादात्म्य का मनोभाव विकसित करे । यह भी एक प्रकार का सगुण ध्यान ही है (व.सं.४/३२-३८)।

३. प्रकाशस्वरूप अपनी आत्मा को भ्रूमध्य पर अपना ध्यान केन्द्रित कर यह अनुभव करे कि 'मैं वही हूँ।' यह भी सगुण ध्यान कहलाता है (व.सं.४/३९-४०)।

४. अष्टदल हृदयकमल में स्वयं को अर्भक होने की भावना तथा ऐसा देखें कि वह अमृत से भरा जा रहा है एवं 'अहं ब्रह्मास्मि' की अनुभूति करें । ऐसा अनुभव भी सगुण ध्यान कहा गया है । यहाँ पर फिर वसिष्ठ जी मुक्ति हेतु निष्काम भाव से अपने कर्तव्य निभाने का स्मरण दिलाते हैं (व.सं.४/४१-४८)

५. सूर्यमण्डल पर ध्यान करे तथा उस में पद्मासनस्थित, समस्त विश्व को दैदिप्यमान करने वाले, हेमपुरुष का ध्यान करते हुए 'मै वही हूँ' की भावना करना भी उत्कृष्ट ध्यान कहा गया है (व.सं. ४/४९-५३)।

पतञ्जलि ने 'तत्र प्रत्ययैकतानताध्यानम्' (पायोसू. ३/२) के रूप से ध्यान को परिभाषित किया है । यह परिभाषा ध्यानाभ्यास के अन्तिम ध्येय को प्रस्तुत करती है । पतञ्जलि द्वारा प्रदत्त कोई विशिष्ट ध्यान विधि हमें नजर नहीं आती । व्यास जी ने अपने भाष्य में कतिपय ध्यान स्थानों की चर्चा की । यदि हम वसिष्ठ के दृष्टिकोण से व्यास जी का विश्लेषण करें तो हम यह कह सकते हैं कि व्यास जी सगुण ध्यान का ही विधान कर रहे हैं ।

वसिष्ठ के अनुसार ध्यान मात्र दो प्रकार के होने की सम्भावना की बात कह सकते हैं - सरूप अथवा मूर्त तथा रूपरहित अथवा अमूर्त । ये क्रमशः सगुण तथा निर्गुण कहे गये हैं । परवर्ती साहित्य में हमें ध्यान का वर्णन अलग अलग नामों से मिलता है । घेरण्ड संहिता तीन प्रकार के ध्यान का वर्णन करती है यथा स्थूल, ज्योति एवं सूक्ष्म । प्रथम दो प्रकार सगुण ध्यान के अन्तर्गत तो अंतिम सूक्ष्म को निर्गुण ध्यान के अन्तर्गत रखा जा सकता है । इसमें यह भी कहा है कि सूक्ष्म ध्यान सभी ध्यानों में श्रेष्ठ ध्यान है (घेरण्ड संहिता ५/१-२)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अपने अष्टांग योग में स्वामी चरणदास जी भी चार प्रकार के ध्यान का वर्णन करते हैं यथा पदस्थ, पिण्डस्थ, रूपस्थ तथा रूपातीत (अष्टांगयोग - स्वामी चरणदास, कैवल्यधाम द्वारा प्रकाशित पृ.३४-३६)। यहाँ पर भी प्रथम तीन प्रकार ध्यान के सगुण तथा चतुर्थ के निर्गुण ध्यान प्रकार में परिगणित कर सकते हैं, जिसे स्वामी चरणादास ने रूपातीत ध्यान की संज्ञा दी है ।

इस प्रकार वसिष्ठ संहिता मे ध्यान को दो विस्तृत किन्तु विवादरहित तथा सार्वभौमिक दृष्ट्या स्वीकारणीय रूप में प्रस्तुत किया है ।

* * * * *

पञ्चम अध्याय

शक्ति के द्वारा यह पूछे जाने पर कि आत्मा का क्या स्वरूप है? तथा मृत्यु काल को कैसे जाना जाय? वसिष्ठ जी आत्मतत्त्व के विषय में तथा राशि एवं श्वास-प्रश्वास पर आधारित मृत्यु-काल के लक्षणों के बारे में बताते हैं। इन दोनों पहलुओं का विस्तार से वर्णन, प्रस्तावना में जीव, जीव की चार अवस्थाएँ, पंच आयामयुक्त विश्व एवं शुभाशुभ लक्षणों के अन्तर्गत, दिया गया है।

* * * * *

षष्ठम् अध्याय

वसिष्ठ संहिता के इस अन्तिम अध्याय में, शक्ति इस प्रश्न के बारे में जिज्ञासा रखते हैं कि मृत्युपर कैसे विजय प्राप्त की जाय और वसिष्ठ जी निम्न प्रकार से उत्तर देते हैं ।

बाहरी तथा आन्तरिक लक्षणों के आधार पर अपने मृत्युकाल के विषय में ज्ञान प्राप्त कर साधक को चाहिए कि वे शांत तथा समाहित बना रहे, शास्त्र द्वारा बताए गये स्वकर्मों का आचरण बनाए रखे तथा निष्कामभाव से तारक मन्त्र अर्थात् ओम् का जाप करे । यह व्यक्ति को दीर्घायु प्रदान करता है तथा वह ब्रह्मज्ञानवान् बनता है ।

तदनंतर वसिष्ठ जी प्रणव नामक तारक मन्त्र का वर्णन करते हैं । आरम्भ में 'सत्' मात्र विद्यमान था, जो सभी का कारण था । इसी सत् से 'ओम्' के रूप में ज्ञात चतुर्वर्णीय अक्षर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पैदा हुआ । जो कोई अपने कपालस्थ ओंकार का ध्यान करते हुए प्रणव का जाप करता है वह मृत्यु पर विजय पाकर दीर्घायु बनता है । मृत्युपर विजय प्राप्त करने के लिए त्र्यम्बक मन्त्र जाप तथा रुद्राराधना ये अन्य मार्ग है । व.सं.६/५१-५२ में यह कहा है कि यदि कोई मृत्यु से भयभीत है, वह अपवित्र रहने पर भी मृतसंजीवनी का जाप करे क्योंकि त्र्यम्बक के अतिरिक्त कोई भी मृत्यु से बचाने वाला नहीं है (व.सं.६/४१)। मृत्यु पर विजय पाने का एक अन्य उपाय है - अनाहत पद्मस्थित नारायण का जाप करना तथा स्वयं को उसी में पूर्णतया लीन कर लेना (व.सं. ६/५६)। मृत्यु को टालने की परम विधि है, योग का अंतिम अंग - समाधि का अभ्यास । यद्वा समाधिमभ्यस्य वञ्चयेत् कालमागतम्' (व.सं.६/५८)

* * * * *

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठ संहिता - योगकाण्डम्

प्रथमोऽध्यायः

वसिष्ठं वाग्विदां श्रेष्ठं त्रिकालज्ञमनुत्तमम्[१]।
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं योगेषु परिनिष्ठितम्[२] ।।१।।

(वाग्विदां श्रेष्ठं, त्रिकालज्ञं अनुत्तमं सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञं, वसिष्ठं योगेषु परिनिष्ठितम्-)

वक्ताओं में श्रेष्ठ, भूत, वर्तमान एवं भविष्य के ज्ञाताओं में सर्वोत्तम सभी शास्त्रों के मर्मज्ञ, वसिष्ठ योग में पारंगत -

सर्वभूतहितं शान्तं सत्यसन्धं गतक्लमम्[३]।
गुणज्ञं सर्वभूतेषु परार्थैकप्रयोजनम्[४] ।।२।।

(सर्वभूतहितं, शान्तं, सत्यसन्धं, गतक्लमं, सर्वभूतेषु गुणज्ञं, परार्थैकप्रयोजनम्-)

सभी प्राणियों के हितैषी, शान्त, सत्यनिष्ठ, श्रमरहित (प्रसन्न), सभी जीवो में श्रेष्ठ गुणी दूसरों के ही उपकार में रत -

जितेन्द्रियं जितक्रोधं ब्रह्मज्ञं ब्राह्मणप्रियम्[५] ।
तपोवनगतं सौम्यं सदाध्ययनतत्परम्[६] ।।३।।

(जितेन्द्रियं, जितक्रोधं, ब्रह्मज्ञं, ब्राह्मणप्रियं, तपोवनगतं, सौम्यं, सदाध्ययनतत्परम्-)

जितेन्द्रिय, जितक्रोध, ब्रह्मज्ञ, ब्राह्मणो के प्रिय, तपोवन में रहने वाले, भद्र सतत् अध्ययनरत-

ब्रह्मविद्भिर्महाभागैर्ब्राह्मणैश्च सुसेवितं[७] ।
नित्यं धर्मरतं नित्यं कृतपूर्वाह्निकक्रियम्[८] ।।४।।

(ब्रह्मविद्भिः महाभागैः ब्राह्मणैः च सुसेवितम्, नित्यं धर्मरतं, नित्यं कृतपूर्वाह्निकक्रियम्-)

ब्रह्मज्ञों तथा श्रेष्ठ ब्राह्मणों से सेवित, सदा धर्मरत, नियमपूर्वक पूर्वाह्निक कर्म का अनुष्ठान किए हुए -

(**टिप्पणी** - ब्राह्मणों के लिए, पूर्वाह्निक क्रिया (प्रातः कालीन संन्ध्यावन्दन) शरीर और

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मन की शुद्धि के लिए अत्यावश्यक कर्म माना गया है। इस कर्म को क्रियायोग, विशेषतः ईश्वरप्रणिधान के अन्तर्गत परिगणित किया जा सकता है।)

प्रणम्य दण्डवद् भूमौ महाकारुणिकं मुनिम्[९] ।
पप्रच्छ पितरं शक्तिः प्राञ्जलिः श्रद्धयान्वितः[१०] ।।५।।

(महाकारुणिकं, पितरं मुनिं (वसिष्ठं) भूमौ दण्डवद् प्रणम्य श्रद्धयान्वितः प्राञ्जलिः शक्तिः पप्रच्छ)

अत्यन्त दयालु पिता मुनि (वसिष्ठ) को भूमि पर दण्डवत् प्रणाम कर श्रद्धा से युक्त तथा बद्धाञ्जलि होकर शक्ति ने पूछा ।।

शक्तिरुवाच[११] -

भगवन् सर्वशास्त्रज्ञ सर्वभूतहिते रत[१२] ।
केनोपायेन संसाराद् बहुदुःखसमाकुलात्[१३] ।।६।।
नानाविधभयोपेताज्जन्ममृत्युजरान्वितात्[१४] ।
ज्ञानं प्राप्य कथं तस्मान्मुक्तोऽहं स्यां मदान्धधीः[१५] ।।७।।

(सर्वशास्त्रज्ञ, सर्वभूतहिते रत भगवन्! अहं मदान्धधीः नानाविधभयोपेतात्, जन्ममृत्युजरान्वितात्, तस्मात् बहुदुःखसमाकुलात्, संसारात्, केन उपायेन ज्ञानं प्राप्य कथं मुक्तः स्याम् ?)

शक्ति ने पूछा -

सभी शास्त्रों के ज्ञाता, जीवमात्र के हितैषी, हे भगवन्, मैं मदान्ध-बुद्धि अनेकविध भयों से युक्त, जन्म, मृत्यु, जरा आदि से युक्त, इस बहुविध दुःखों से परिपूर्ण संसार से, किसप्रकार ज्ञान प्राप्त कर, कैसे मुक्त होऊँगा ।

पुत्रेणैवं पिता पृष्टः शक्तिना वेदवादिना[१६] ।
ऋषिरालोक्य नेत्राभ्यां वाक्यमेतदभाष(त)वि ।।८।।

(वेदवादिना, पुत्रेण शक्तिना, एवं पृष्टः पिता, ऋषिः (वसिष्ठः) नेत्राभ्यां आलोक्य एतद् वाक्यं अभाषत)

वेदाभ्यासी पुत्र शक्ति के द्वारा इसप्रकार से पूछे जाने पर पिता ऋषि वसिष्ठ, कृपादृष्टि से देखकर यह वाक्य बोले -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठ उवाच[१८] -

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते शक्ते बुद्धिमतां वर[१९] ।
वक्ष्यामि सुखदं नित्यमुपायं भवनाशनम्[२०] ।।९।।

(बुद्धिमतां वर शक्ते! उत्तिष्ठ, उत्तिष्ठ, भद्रं ते, भवनाशनं, सुखदं नित्यमुपायं वक्ष्यामि ।)

वसिष्ठ ने कहा-

बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, हे शक्ति, उठो, तुम्हारा कल्याण हो, संसार से छुड़ाने वाले, सुखकारी सनातन उपाय को कहता हूँ ।

इत्युक्त्वा भगवान् योगी वसिष्ठो ब्रह्मविद्वरः[२१] ।
गायन्नारायणं देवं सर्वभूतहृदिस्थितम्[२२] ।।१०।।

(ब्रह्मविद्वरः, योगी भगवान् वसिष्ठः इति उक्त्वा, सर्वभूतहृदिस्थितं देवं नारायणं गायन्-)

ब्रह्मज्ञों में श्रेष्ठ योगी भगवान् वसिष्ठ यह कहकर जीवमात्र के हृदय में विद्यमान, भगवान् नारायण का गुणगान करते हुए -

वक्ष्ये देवं जगद्योनिं योगिध्येयं निरञ्जनम्[२३] ।
आनन्दमजरं नित्यं परमानन्दमीश्वरम्[२४] ।।११।।

(जगत् योनिं, योगिध्येयं, निरञ्जनं, आनन्दं, अजरं, नित्यं, परमानन्दं, ईश्वरं देवम्-(वक्ष्ये))

संसार के मूल कारण, योगियों के ध्येय, गुणरहित आनन्द, अजर, सनातन, परमानन्द ईश्वर -

जगन्नाथं हृषीकेशं प्रणम्य सुसमाहितः[२५] ।
शक्तिमालोक्य नेत्राभ्यां कृपया चेदमब्रवीत्[२६] ।।१२।।

(सुसमाहितः जगन्नाथं, हृषीकेशं प्रणम्य शक्तिं नेत्राभ्यां कृपया आलोक्य च इदम् अब्रवीत्)

सुस्थिरचित्त हो कर जगन्नाथ हृषीकेश को प्रणाम कर, शक्ति को कृपादृष्टि से देखते हुए, यह बोले -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

एह्येहि मुनिशार्दूल गुरुभक्त जितेन्द्रिय[२७] ।
शृणु त्वं ब्रह्मणा प्रोक्तं पूर्वं यन्मम मुक्तिदम्[२८] ।।१३।।

(गुरुभक्त, मुनिशार्दूल, जितेन्द्रिय! एहि एहि, पूर्वं ब्रह्मणा यत् मुक्तिदं मम प्रोक्तं (तत्) त्वं श्रृणु ।)

हे गुरुभक्त, मुनिश्रेष्ठ, जितेन्द्रिय आओ, आओ, पहले ब्रह्मा ने मुक्ति के लिए जो कुछ मुझसे कहा था वह तुम सुनो ।

पद्मासने सुखासीनं चतुराननमव्ययम्[२९] ।
चराचराणां स्रष्टारं ब्रह्माणं परमेश्वरम्[३०] ।।१४।।
कदाचित्तत्र गत्वाऽहं स्तुत्वा स्तोत्रैः प्रणम्य च[३१] ।
पृष्टवानिममेवार्थं यत् त्वं मां परिपृच्छसि[३२] ।।१५।।

(कदाचित् पद्मासने सुखासीनं चतुराननं, अव्ययं, चराचराणां स्रष्टारं, परमेश्वरं, ब्रह्माणं, तत्र गत्वा स्तोत्रैः स्तुत्वा प्रणम्य च, यत् त्वं मां परिपृच्छसि, इमम् एवार्थम् अहं पृष्टवान् ।)

एक समय पद्मासन में सुखपूर्वक बैठे हुए, चतुर्मुख, अविनाशी, जड़-चेतन के स्रष्टा, भगवान ब्रह्मदेव के पास जाकर, मैंने स्तोत्रों से स्तुति कर तथा प्रणाम कर - जो तुम मुझसे पूछते हो, वही - उनसे पूछा था ।

देव-देव जगन्नाथ चतुर्मुख वरानन[३३] ।
अनेकशास्त्रविभ्रान्तो भ्रमच्चित्तो भ्रमाम्यहम्[३४] ।।१६।।

(देव देव, जगन्नाथ, चतुर्मुख, वरानन! अनेकशास्त्र-विभ्रान्तः भ्रमच्चित्तः अहम् भ्रमामि ।)

हे देव, हे जगन्नाथ, हे उत्कृष्ट चतुर्मुख वाले, अनेक शास्त्रों में विभ्रान्त हो जाने से, अस्थिरचित्त होकर मैं घूमता हूँ । (सत्य की खोज में ।)

भगवन् केन गच्छेयं तन्निष्ठं परमं पदम्[३५] ।
आनन्दमजरं गुह्यं तन्मे ब्रूहि पितामह[३६] ।।१७।।

(भगवन्, पितामह! आनन्दं, अजरं, गुह्यं, तन्निष्ठं परमं पदं, केन गच्छेयं तत् मे ब्रूहि ।)

हे भगवन्, पितामह, आनन्द, अजर, गूढ़, उस अन्तिम परमपद को मैं कैसे प्राप्त करुं - वह मुझे बताएँ ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मयैवमुक्तः सन्तुष्टः स्वयम्भूर्लोकनायकः[३७] ।
दृष्ट्वा मां सुप्रसन्नात्मा कृपयेदमवोचत[३८] ।।१८।।

(मया एवम् उक्तः लोकनायकः स्वयंभूः सन्तुष्टः (सन्) सुप्रसन्नात्मा, मां दृष्ट्वा कृपया इदम् अवोचत् ।)

मेरे ऐसा कहने पर लोकनायक, स्वयम्भू, सन्तुष्ट होकर, प्रसन्नचित्त से मुझे देखते हुए, कृपापूर्वक यह बोले ।

जातस्य द्विविधौ ज्ञेयौ पन्थानौ वेदचोदितौ[३९] ।
कर्मात्मकावुभावेतौ प्रवर्तकनिवर्तकौ[४०] ।।१९।।

(प्रवर्तकनिवर्तकौ जातस्य द्विविधौ पन्थानौ वेदचोदितौ ज्ञेयौ, उभौ एतौ कर्मात्मकौ (ज्ञेयौ)।

जीवमात्र के लिए प्रवर्तक एवं निवर्तक ये दो प्रकार के मार्ग वेदों के द्वारा बताए गये हैं । ये दोनों ही कर्मात्मक समझने चाहिए ।

वर्णाश्रमाणां कर्मैव कामसंकल्पपूर्वकम्[४१] ।
प्रवर्त्तकं भवेदेतत् संसारे वै प्रवर्तनात्[४२]।।२०।।

(संसारे वर्णाश्रमाणां कामसंकल्पपूर्वकं कर्म एव प्रवर्तनात् एतत् वै प्रवर्त्तकं भवेत् ।)

संसार में वर्णाश्रमियों के लिए कामसंकल्पपूर्वक किये गये कर्म ही प्रवृति का कारण होने से निश्चय ही प्रवर्तक होते हैं।

(टिप्पणी - वर्ण और आश्रम - ये जीवन के कर्म और अवस्थाओं के वैदिक विभाजन हैं। कर्मानुसार चार प्रकार के विभाजन हैं - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, तथा जीवन की चार अवस्थाएँ हैं -ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास ।)

तदेव ज्ञानसंयुक्तं सर्वकामविवर्जितम्[४३] ।
निवर्त्तकं भवेदेतज्जन्मस्तु निवर्त्तनात्[४४] ।।२१।।

(सर्वकामविवर्जितं ज्ञानसंयुक्तं तत् एव जन्मनः निवर्त्तनात् एतत् तु निवर्तकं भवेत् ।)

सभी कामनाओं से रहित तथा ज्ञानयुक्त कर्मानुष्ठान आवागमन से मुक्ति दिलाने वाला होने के कारण निवर्तक मार्ग कहा जाता है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

निवर्तकं च वेदेषु द्विविधं सूरयो विदुः[४५]।
बाह्यमाभ्यन्तरं चेति प्रत्येकं मुक्तिसाधनम्[४६] ।।२२।।

(वेदेषु सूरयः निवर्त्तकं बाह्यं आभ्यन्तरं च द्विविधं विदुः, प्रत्येकं च मुक्तिसाधनम् इति ।)

वेदों में ऋषियों ने निवर्त्तक कर्म को बाह्य और आभ्यन्तर दो प्रकार का बताया हैं -। ये दोनों ही मोक्ष के साधन हैं ।

बाह्यं बहिः क्रियेत्येवं यत्तद्विहितसाधनम्[४७] ।
आभ्यन्तरं तु बुद्ध्यैव विध्यनुष्ठानमात्मनि[४८] ।।२३।।

(एवं विहितसाधनं यत् बहि क्रिया तत् बाह्यम् इति । आत्मनि बुद्धया विध्यनुष्ठानं तु आभ्यन्तरम् ।)

इस प्रकार वेदसम्मत साधनों से सम्पन्न जो बाह्य प्रयोगात्मक क्रिया (होती है) उसी को बाह्य (निवर्तक कर्म) समझना चाहिए । आत्मा में बुद्धि द्वारा मानसिक रुप से वेदोक्त (क्रिया) का अनुपालन आभ्यन्तर (निवर्तक कर्म) कहलाता है ।

तयोराभ्यन्तरं कुर्यान्नित्यकर्म यथाविधि[४९] ।
ज्ञानभक्तिसमायुक्तः सदानन्दमवाप्नुयात्[५०] ।।२४।।

(तयोः आभ्यन्तरं नित्यकर्म यथाविधि ज्ञानभक्तिसमायुक्तः कुर्यात्। (तेन) सदा आनन्दं अवाप्नुयात् ।)

इन दोनों में से आभ्यन्तरकर्मानुष्ठान नित्यकर्म विधिपूर्वक ज्ञान और भक्ति से युक्त होकर करना चाहिए । इससे सतत् आनन्द प्राप्त किया जा सकता है ।

ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वापि यावद्देहस्य साधनम्[५१] ।
तावद्वर्णाश्रमप्रोक्तं कर्तव्यं कर्म मुक्तये[५२] ।।२५।।

(ज्ञानिनः अज्ञानिनः वा अपि यावत् देहस्य साधनम् तावत् वर्णाश्रमप्रोक्तं कर्म मुक्तये कर्त्तव्यम् ।)

ज्ञानी हो या अज्ञानी, जब तक शरीर रूप साधन वर्तमान है, तब तक वर्णाश्रमोक्त कर्मानुष्ठान मुक्ति के लिए अवश्य करना चाहिए ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इत्येवं कर्मसर्वस्वं कर्मकाण्डं च तत्त्वतः[५३] ।
उपदिश्य तदा ब्रह्मा योगनिष्ठोऽभवत् स्वयम्[५४] ।।२६।।

(इति एवं कर्मसर्वस्वं कर्मकाण्डं च तत्त्वतः उपदिश्य तदा ब्रह्मा स्वयं योगनिष्ठः अभवत् ।)

यही कर्ममात्र का मूल है और वास्तव में कर्मकाण्ड भी यही है इस प्रकार तत्त्वतः उपदेश कर ब्रह्मा स्वयं योगनिष्ठ हो गए ।

यतः कर्मैव कुर्वन्ति ज्ञानिनोऽपि मुमुक्षवः ।
ततस्त्वमपि विप्रेन्द्र ज्ञानेनाचर कर्म तत्[५५] ।।२७।।

(यतः ज्ञानिनः मुमुक्षवः अपि कर्म एव कुर्वन्ति, ततः विप्रेन्द्र! त्वम् अपि तत् कर्म ज्ञानेन आचर ।)

क्योंकि ज्ञानी और मुमुक्षु भी कर्मानुष्ठान ही करते हैं, इसलिए हे विप्रश्रेष्ठ, तुम भी उन्हीं कर्मों का ज्ञानपूर्वक अनुष्ठान करो ।

एतच्छ्रुत्वा वसिष्ठोक्तं पुत्रः शक्तिरतन्द्रितः[५६] ।
पुनः प्राह मुनिश्रेष्ठं प्रयतः श्रद्धयान्वितः[५७] ।।२८।।

(एतत् वसिष्ठोक्तं अतन्द्रितः श्रुत्वा पुत्रः शक्तिः श्रद्धयान्वितः मुनिश्रेष्ठं पुनः प्राह ।)

वसिष्ठ द्वारा कही गई इन बातों को सावधान पूर्वक सुनकर पुत्र शक्ति ने नम्रतापूर्वक मुनिश्रेष्ठ से पुनः कहा -

शक्तिरुवाच[५८] -
विध्युक्तं कर्म विप्रेन्द्र ज्ञानेन सह कुर्वतः[५९] ।
मुक्तिरुक्ता त्वया द्वाभ्यां तयोर्ज्ञानं वद प्रभो[६०] ।।२९।।

(विप्रेन्द्र! विध्युक्तं कर्म ज्ञानेन सह कुर्वतः, त्वया मुक्तिः उक्ता, प्रभा! तयोः द्वाभ्यां ज्ञानं वद ।)

शक्ति ने कहा -

हे विप्रश्रेष्ठ, शास्त्रोक्त कर्मानुष्ठान तथा ज्ञानपूर्वक कर्मानुष्ठान आपके द्वारा मुक्ति के साधन कहे गए । हे प्रभो, उन दोनों में से ज्ञान का स्वरूप कहें ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आत्मजेनैवमुक्तस्तु वसिष्ठः प्रीतमानसः[६१] ।
पुत्रमालोक्य नेत्राभ्यां ज्ञानरूपमभाषत[६२] ।।३०।।

(आत्मजेन एवम् उक्तः तु प्रीतमानसः वसिष्ठः नेत्राभ्यां पुत्रं आलोक्य ज्ञानरूपं अभाषत ।)

पुत्र के द्वारा ऐसा कहने पर प्रसन्नचित्त वसिष्ठ नेत्रों से पुत्र को देखकर, ज्ञान का स्वरूप बोले -

वसिष्ठ उवाच[६३] -
ज्ञानं योगात्मकं विद्धि योगश्चात्मनि तिष्ठति[६४] ।
स योगोऽष्टाङ्गसंयुक्तः सर्वधर्मः स उच्यते[६५] ।।३१।।

वसिष्ठ बोले -

(ज्ञानं योगात्मकं विद्धि, योगः च आत्मनि तिष्ठति, स योगः अष्टांगसंयुक्तः, स सर्व धर्मः उच्यते ।)

ज्ञान को योग का स्वरूप समझो और योग आत्मा की ओर ले जाता है । वह योग आठ अंगों से सम्पन्न है, तथा वही सर्वसामान्य के लिए धर्म कहा जाता है ।

(टिप्पणी - वसिष्ठ भी पतंजलि के समान योग के आठ अंगों को स्वीकार करते हैं ।)

अङ्गानि सम्यग्वक्ष्यामि यथाप्रज्ञं यथाश्रुतम्[६६] ।
समाहिततमो भूत्वा शृणु पुत्रक सुव्रत[६७] ।।३२।।

(यथाश्रुतं यथाप्रज्ञं अङ्गानि सम्यक् वक्ष्यामि, सुव्रत पुत्रक! समाहिततमः भूत्वा शृणु ।)

जैसा मैंने सुना है, जैसा मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार समझा है, और वैसे ही उन अंगों को अच्छी प्रकार कहता हूँ । हे निष्ठावान पुत्र, एकाग्रचित्त होकर सुनो ।

यमश्च नियमश्चैव तथासनमपीष्यते[६८] ।
प्राणायामस्तथा शक्ते प्रत्याहारश्च धारणा[६९] ।
ध्यानं समाधिरेतानि योगाङ्गानि तपोधन[७०] ।।३३।।

(तपोधन शक्ते ! यमः च नियमः च तथा एव आसनम् अपि ईष्यते, प्राणायामः, प्रत्याहारः तथा च धारणा ध्यानं समाधि एतानि योगाङ्गानि (उक्तानि)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हे तपोधन शक्ति, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये सब योग के अंग कहे गए हैं ।

आदौ चत्वारि बाह्यानि तदन्वाभ्यन्तराणि च[७१] ।।३४।।

(आदौ चत्वारि बाह्यानि तद् अनु च आभ्यन्तराणि ।)

इनमें प्रारम्भ के चार बहिरंग हैं तथा बाद के अन्तरंग ।

यमाश्च दशधा प्रोक्ता नियमाश्च तथा दश[७२] ।
आसनानां च सर्वेषामुत्तमानि तथा दश[७३] ।
तेषूत्तमानि चत्वारि मुक्तिमार्गाणि पुत्रक[७४] ।।३५।।

(यमाः च दशधा तथा नियमाः च दश प्रोक्ता तथा सर्वेषां आसनानां च दश उत्तमानि (प्रोक्ता), पुत्रक! तेषु मुक्तिमार्गाणि चत्वारि उत्तमानि ।)

यम दस प्रकार के तथा नियम भी दस प्रकार के कहे गए हैं, और सभी आसनों में दस आसन उत्तम कहे गए हैं । पुत्र, उनमें भी मोक्ष मार्ग के लिए चार (आसन) उत्तम हैं ।

प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तः प्रत्याहारश्चतुर्विधः[७५] ।।३६।।

(प्राणायामः त्रिधा प्रत्याहारः च चतुर्विधः प्रोक्तः ।)

प्राणायाम तीन प्रकार के तथा प्रत्याहार चार प्रकार के कहे गए हैं ।

धारणा पञ्चधा प्रोक्तः ध्यानं षोढा प्रकीर्तितम्[७६] ।
समाधिः समता प्रोक्ता यावद् ध्यानं पृथक्-पृथक्[७७] ।।३७।।

(धारणा पञ्चधा (तथा) ध्यानं षोढा प्रकीर्तितम्, समता यावत् पृथक्-पृथक् (तावत्) ध्यानम् (अखण्डःतु) समाधिः प्रोक्ता ।)

धारणा पाँच प्रकार की तथा ध्यान छः प्रकार के कहे गए हैं । पृथक्-पृथक् सम-स्थिति को ध्यान तथा अखण्ड सम-स्थिति को समाधि कहा गया है ।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं धृतिः क्षमा[७८] ।
दयार्जवं मिताहारः शौचं चैव यमा दश[७९] ।।३८।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(अहिंसा, सत्यं, अस्तेयं, ब्रह्मचर्यं, धृतिः, क्षमा, दया, आर्जवं, मिताहारः, शौचं च दश एव यमाः ।)

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, धृति, क्षमा, दया, आर्जव, मिताहार और शौच ये दस ही यम हैं ।

(**टिप्पणी** - पतंजलि से भिन्नता रखते हुए वसिष्ठ ने दस यम कहे हैं । उन्होंने पतंजलि के यम की सूची से अपरिग्रह को हटाकर छः और जोड़ दिए हैं और इस प्रकार दस यम हो गए । विस्तार के लिए देखें प्रथम अध्याय का समीक्षात्मक सारांश -)

कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा[८०] ।
अक्लेशजननं प्रोक्तमहिंसा इति योगिभिः[८१] ।।३९ ।।

(कर्मणा मनसा वाचा सर्वदा सर्वभूतेषु अक्लेशजननं योगिभिः अहिंसा इति प्रोक्तम् ।)

कर्म, मन और वाणी से सर्वदा जीवमात्र को पीड़ा न देना ही योगियों ने अहिंसा कही है ।

विध्युक्तं चेदहिंसा स्यात् क्लेशनं नैव जन्तुषु[८२] ।
विधिनोक्तेऽपि हिंसा स्यादभिचारादि कर्म यत्[८३] ।।४०।।

(विध्युक्तं (कर्म) चेत् जन्तुषु क्लेशनं न एव, अहिंसा स्यात्। यत् अभिचारादि कर्म (तत्) विधिना उक्तः अपि हिंसा स्यात् ।)

शास्त्रोक्त कर्म यदि प्राणियों को पीड़ा देने वाला न हो तो वह अहिंसा है और यदि पीड़ादायक कर्म शास्त्रोक्त भी हो तो वह हिंसा है ।

सत्यं भूतहितं प्रोक्तं यथान्यायाभिभाषणम्[८४]।
प्रियं च सत्यमित्युक्तं सत्यमेतद् ब्रवीमि ते[८५]।।४१।।

(भूतहितं प्रियं च सत्यं यथान्याय - अभिभाषणं इति सत्यं उक्तम्, एतत् ते सत्यं ब्रवीमि।)

प्रणियों के हित के लिए न्याय के अनुसार जो प्रिय और यथार्थ बोला जाता है उसी को सत्य कहते हैं, यह मैं तुमसे सत्य कहता हूँ।

कर्मणा मनसा वाचा सर्वद्रव्येषु निःस्पृहा[८६]।
अस्तेयमिति तत् प्रोक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः[८७]।।४२।।

(सर्वद्रव्येषु कर्मणा मनसा वाचा (यत्) निःस्पृहा तत्त्वदर्शिभिः मुनिभिः तत् अस्तेयं इति प्रोक्तम्।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सभी द्रव्यों में क्रिया, मन और वाणी से निःस्पृह रहने को ही तत्त्वदर्शी ऋषियों ने अस्तेय कहा है ।

कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा[८८]।
सर्वत्र मैथुनत्यागं ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते[८९]।।४३।।

(सर्वदा सर्वभूतेषु कर्मणा मनसा वाचा सर्वत्र मैथुनत्यागं ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते।)

सर्वदा जीवमात्र में क्रिया, मन और वाणी से सर्वत्र मैथुन का त्याग ही ब्रह्मचर्य कहा जाता है ।

ऋतावृतौ स्वदारेषु संगतिश्च विधानतः[९०]।
ब्रह्मचर्यं च तत् प्रोक्तं गृहस्थाश्रमवासिनाम्[९१]।।४४।।

(च गृहस्थाश्रमवासिनां (कृते) विधानतः ऋतौ ऋतौ स्वदारेषु (यत्) संगतिः तत् च ब्रह्मचर्यं प्रोक्तम्।)

और गृहस्थाश्रमवासियों के लिए शास्त्रानुसार ऋतुकाल के बाद स्वपत्नियों से समागम करना यह भी ब्रह्मचर्य ही कहा गया है।

शुश्रूषा च गुरोर्नित्यं ब्रह्मचर्यमितीरितम्[९२]।।४५।।

(गुरोः नित्यं शुश्रूषा च ब्रह्मचर्यं इति ईरितम्।)

गुरुसेवा में सदा संलग्न रहना भी ब्रह्मचर्य ही कहा जाता है।

(टिप्पणी - ब्रह्मचर्य का वर्णन यहाँ वेदोक्त आश्रमों को ध्यान में रखकर किया गया है, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ अथवा सन्यास।)

अर्थहानौ च बन्धूनां वियोगे वाऽपि संपदाम्[९३]।
तेषां प्राप्तौ च सर्वत्र चित्तस्य स्थापनं धृतिः[९४]।।४६।।

(अर्थहानौ च बन्धूनां वियोगे च संपदां वा अपि तेषां प्राप्तौ सर्वत्र चित्तस्य स्थापनं धृतिः।)

अर्थहानि, स्वजन वियोग तथा वैभव नष्ट होने पर अथवा इन सब की प्राप्ति पर भी, सभी स्थितियों में चित्त को स्थिर रखना ही धृति है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रियाप्रियेषु सर्वेषु समत्वं यच्छरीरिणाम्[९५]**।**
क्षमासाविति गदिता विद्वद्भिर्वेदवादिभिः[९६]**।।४७।।**

(प्रिय-अप्रियेषु सर्वेषु शरीरिणां यत् समत्वं असौ वेदवादिभिः विद्वद्भिः क्षमा इति गदिता।)

प्रिय अप्रिय सभी जीवों में समता का भाव रखना क्षमा है - ऐसा वेदवादी विद्वानों ने कहा है ।

परे वा बंधुवर्गे वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा[९७] **।**
आस्ते यत्र कृपाबुद्धिर्दया सा परिकीर्तिता[९८]**।।४८।।**

(परे वा बन्धुवर्गे मित्रे वा द्वेष्टरि वा सदा यत्र कृपाबुद्धिः आस्ते सा दया परिकीर्तिता।)

दूसरों के प्रति, स्वजन एवं मित्र के प्रति अथवा शत्रु के प्रति सदैव करुणाबुद्धि रखना ही दया कहा गया है ।

विहितेषु तदन्येषु मनोवाक्कायकर्मणाम्[९९]**।**
प्रवृत्तौ वा निवृत्तौ वा एकरूपत्वमार्जवम्[१००]**।।४९।।**

(विहितेषु प्रवृत्तौ वा तत् अन्येषु निवृत्तौ वा मनो-वाक्-काय-कर्मणाम् एकरूपत्वं आर्जवम्।)

(शास्त्र) विहित में प्रवृत्ति तथा उससे अतिरिक्त में निवृत्ति इन में मन, वाणी और क्रिया की एकरूपता रहे तो उसे ही आर्जव कहते हैं।

अष्टौ ग्रासा मुनेरुक्ताः षोडशारण्यवासिनाम्[१०१]**।**
द्वात्रिंशच्च गृहस्थस्य यथेष्टं ब्रह्मचारिणाम्[१०२]**।**
उक्तमेतन्मिताहारमन्येषामल्पभोजनम्[१०३]**।।५०।।**

(मुनेः अष्टौ ग्रासाः, अरण्यवासिनां षोडशाः, गृहस्थस्य च द्वात्रिंशत्, ब्रह्मचारिणां यथेष्टम्, अन्येषां अल्पभोजनम्। एतत् मिताहारं उक्तम्।)

सन्यासियों के लिए आठ ग्रास (कौर), वानप्रस्थों के लिए सोलह ग्रास, गृहस्थों के लिए बत्तीस ग्रास तथा ब्रह्मचारियों के लिए यथेष्ट (आवश्यकतानुसार)। इससे अतिरिक्त लोगों के लिए पूर्णआहार से कम, इसे मिताहार कहते हैं।

(टिप्पणी - योग के मार्ग में आगे बढने के लिए मिताहार एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आवश्यक साधन माना गया है। यद्यपि पतंजलि के योगसूत्र में इसका कोई उद्धरण हमें नहीं मिलता किंतु बाद के हठयोगाचार्यों ने इस पर अधिक जोर दिया है तथा अपने-अपने दृष्टिकोण से इसकी व्याख्या भी प्रस्तुत की है। स्वामी चरणदास - जो हठयोग के प्रमुख आचार्य रहे हैं - ने मिताहार के अर्थ का सार बहुत संक्षेप में और सही ढ़ंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है - क्षुधा मिटै नहि आलस आवै। प्रत्येक व्यक्ति को उतनी ही मात्रा में भोजन करना चाहिए जिससे उसकी भूख मिट ही जाए, साथ ही आलस्य की अनुभूति न हो।)

शौचं च द्विविधं प्रोक्तं बाह्यमाभ्यन्तरम् तथा[१०४]।
मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं मनःशुद्धिं तथान्तरम्[१०५]।
मनःशुद्धिश्च विज्ञेया धर्मेणाध्यात्मविद्यया[१०६]।।५१।।

(शौचं द्विविधं प्रोक्तं, बाह्यं तथा आभ्यन्तरम् च मृज्जलाभ्यां बाह्यं स्मृतम्, तथा मनः शुद्धिं च आन्तरम्, मनः शुद्धिः धर्मेण अध्यात्मविद्यया विज्ञेया ।)

शौच दो प्रकार के कहे गए हैं - बहिरंग तथा अन्तरंग । मिट्टी और जल से बहिरंग तथा मन की शुद्धि को अन्तरंग शोच कहा गया है । वह मनःशुद्धि धर्माचरण तथा अध्यात्मविद्या के द्वारा प्राप्त्य है ।

प्रोक्ताः प्रीतेन ते भक्त्या अहिंसाद्या यमा दश[१०७]।।५२।।

(ते भक्त्या प्रीतेन अहिंसाद्या दश यमाः प्रोक्ताः ।)

तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न होकर मैंने अहिंसा आदि दस यमों का वर्णन किया ।

तपः सन्तोषमास्तिक्यं दानमीश्वरपूजनम्[१०८]।
सिद्धान्तश्रवणं चैव ह्रीर्मतिश्च जपो व्रतम्[१०९]।
नियमा दशधा प्रोक्तास्तांश्च सर्वान् पृथक् श्रृणु[११०]।।५३।।

(तपः सन्तोषम् आस्तिक्यं दानम् ईश्वरपूजनं सिद्धान्तश्रवणं च ह्री मतिः जपः व्रतं च दशधा नियमा प्रोक्ताः, तान् च सर्वान् पृथक् श्रृणु ।)

तप, सन्तोष, आस्तिकता, दान, ईश्वरपूजा, सिद्धान्तश्रवण, लज्जा, मति, जप और व्रत ये दस नियम कहे गए हैं। अब उन सबों को अलग-अलग सुनो ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिनोक्तेन मार्गेण कृच्छ्रचान्द्रायणादिना[१११]।
शरीरशोधनं प्राहुस्तपसां तप उत्तमम्[११२]।।५४।।

(कृच्छ्रचान्द्रायणादिना विधिना उक्तेन मार्गेण शरीरशोधनं तपसां उत्तमं तपः प्राहुः।

कठोर चान्द्रायण आदि व्रतों के द्वारा शास्त्रोक्त मार्ग से शरीर की शुद्धि को ही तपों में उत्तम तप कहा गया है।

(**टिप्पणी** - कृच्छ्र-कठोर, चान्द्रायण-चन्द्रमा की कला के अनुसार किया जाने वाला व्रत। इस विशेष व्रत को काफी कठिन माना जाता है क्योंकि जो व्यक्ति इस प्रकार का व्रत लेता है वह चन्द्रमा की कला के आधार पर भोजन ग्रहण करता है, अर्थात् प्रतिपाद में एक ग्रास और उसके आधार पर फिर बढ़ते-बढ़ते पूर्णिमा तक पन्द्रह ग्रास और फिर कृष्णपक्ष में क्रमशः घटते-घटते अमावस्या के दिन एक भी ग्रास नहीं लेना - इसे ही कृच्छ्र चान्द्रायण व्रत कहा जाता है ।)

यदृच्छालाभसन्तुष्टं मनः पुंसां भवेदिति[११३]।
या धीस्तामृषयः प्राहुः सन्तोषं सुखलक्षणम्[११४]।।५५।।

(यदृच्छालाभसन्तुष्टं पुंसां मनः भवेत् इति या धीः ताम् ऋषयः सुखलक्षणं सन्तोषं प्राहुः।)

अनायास लाभ स्थिति में जिस मनुष्य का मन संतुष्ट रहे ऐसी बुद्धि को ही ऋषिगण सुखाकारक संतोष कहते हैं ।

धर्माधर्मेषु विश्वासो यस्तदास्तिक्यमुच्यते[११५]।।५६।।

(धर्माधर्मेषु यः विश्वासः तत् आस्तिक्यं उच्यते ।)

धर्म (कर्त्तव्य) और अधर्म (अकर्त्तव्य) में विश्वास रखना ही आस्तिकता है ।

न्यायार्जितं धनं धान्यमन्यद्वा यत् प्रदीयते[११६]।
आर्तेभ्यः श्रद्धया युक्तो दानमेतत् प्रकीर्तितम्[११७]।।५७।।

(न्यायार्जितं धनं धान्यं अन्यत् वा आर्तेभ्यः श्रद्धया युक्तः यत् प्रदीयते एतत् दानं प्रकीर्तितम् ।)

न्याय से अर्जित धन-धान्य या अन्य कोई वस्तु श्रद्धापूर्वक आतुरों को जो दिया जाता है - उसे ही दान कहा गया है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यत् प्रसन्नस्वभावेन विष्णोरभ्यर्चनं तथा[११८]।
यथावदर्चनं भक्त्या एतदीश्वरपूजनम्[११९]।।५८।।

(प्रसन्नस्वभावेन तथा भक्त्या यत् विष्णोः यथावत् अभ्यर्चनं अर्चनं एतत् ईश्वरपूजनम् ।)

प्रसन्नचित्त तथा भक्तिपूर्वक विष्णु की शास्त्रोक्त विधि से पूजा-अर्चना करना ही ईश्वरपूजन है ।

रागादपेतं हृदयं वागदुष्टानृतादिना[१२०]।
हिंसादिरहितं कायमेतदीश्वरपूजनम्[१२१]।।५९।।

(हृदयं रागात् अपेतं वाक् अनृतादिना अदुष्टा, कायं हिंसादि रहितं, एतत् ईश्वरपूजनम्।)

अन्तःकरण का रागरहित होना, वाणी का असत्यादि भाषण से दूषित न होना तथा शरीर का हिंसा आदि से रहित होना यह ईश्वरपूजन है।

सिद्धान्तश्रवणं प्रोक्तं वेदान्तभावनं तु वै[१२२]।।६०।।

(वेदान्तभावनं वै तु सिद्धान्तश्रवणं प्रोक्तम्।)

वेदान्त-चिन्तन को ही सिद्धान्तश्रवण कहा गया है ।

स्वकीयशाखाध्ययनमितिहासपुराणयोः।
अधीतस्य तथान्यस्य सिद्धान्तश्रवणं भवेत्।।६१।।

(स्वकीय शाखा (तथा च) इतिहास-पुराणयोः अध्ययनं तथा अन्यस्य अधीतस्य सिद्धान्तश्रवणं भवेत् ।)

अपने-अपने (वैदिक) शाखा का अध्ययन, इतिहास पुराणों का अध्ययन तथा अन्य सद्ग्रन्थों का भी अध्ययन करना सिद्धान्तश्रवण कहा जाता है ।

वेदलौकिकमार्गेषु कुत्सितं कर्म यद्भवेत्[१२३]।
तस्मिन् भवति या लज्जा ह्रीः सैवेति प्रकीर्तिता[१२४]।।६२।।

(वेदलौकिकमार्गेषु यत् कर्म कुत्सितं भवेत् तस्मिन् या लज्जा भवति स एव ह्रीः इति प्रकीर्तिता ।)

वेदाचार और लोकाचार में जो कर्म निन्दित हैं, उसमें लज्जा होने को ही ह्री कहा गया है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विहितेषु च सर्वेषु श्रद्धया या मतिर्भवेत्[१२५]।
गुरुणा चोपदिष्टेन यद्बाह्यं तद्विवर्जयेत्[१२६]।।६३।।

(विहितेषु सर्वेषु च श्रद्धया गुरुणा उपदिष्टेन च बाह्यं यत् विवर्जयेत् तत् या (सा) मतिः भवेत्।)

शास्त्रविहित सभी कर्मों में निष्ठा और गुरु के आदेश के अतिरिक्त (कर्म) का त्याग करना ही मति है ।

विधिनोक्तेन मार्गेण मन्त्राभ्यासो जपः स्मृतः[१२७]।
जपश्च त्रिविधः प्रोक्त उच्चैरुपांशु मानसः[१२८]।।६४।।

(विधिना उक्तेन मार्गेण मन्त्राभ्यासः जपः स्मृतः, जपः च त्रिविधः प्रोक्तः, उच्चैः उपांशु मानसः च एव ।

शास्त्रोक्त विधि से मन्त्र का अभ्यास करना जप कहा गया है । जप तीन प्रकार के कहे गए हैं - उच्च, उपांशु और मानस ।

उच्चैर्जपादुपांशुश्च सहस्रगुणमुच्यते[१२९]।
सहस्रगुणमुत्कृष्टं तस्मादपि च मानसः[१३०]।।६५।।

(उच्चैः जपात् सहस्रगुणं उपांशुः च उच्यते तस्मात् अपि सहस्रगुणं उत्कृष्टं मानसः च (उच्यते)।)

जोर-जोर से जप करने से हजार गुना अच्छा उपांशु जप (मन्द जप) कहा गया है और उससे भी हजार गुना अच्छा मानस जप कहा गया है ।

प्रसन्नगुरुणा पूर्वमुपदिष्टोऽभ्यनुज्ञया[१३१]।
धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थमुपायग्रहणं व्रतम्[१३२]।।६६।।

(प्रसन्नगुरुणा पूर्वं उपदिष्टः अभि-अनुज्ञया धर्म-अर्थ-काम-सिद्धि-अर्थम् - उपायग्रहणं व्रतम् ।)

प्रसन्नचित्त गुरु द्वारा पूर्व प्राप्त उपदेश और आज्ञा के अनुसार धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि के लिए अनुष्ठान का आचरण व्रत है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आसनानि च वक्ष्यामि श्रृणु पुत्र समाहितः[१३४]।
स्वस्तिकं गोमुखं पद्मं वीरं सिंहासनं तथा[१३५]।
मायूरं कुक्कुटं चैव कूर्मं भद्रासनं तथा[१३६]।
मुक्तासनं तथा तेषां पृथक् वक्ष्यामि लक्षणम्[१३७]।।६७।।

(पुत्र ! आसनानि च वक्ष्यामि समाहितः श्रृणु, स्वस्तिकं, गोमुखं, पद्मं, वीरं, सिंहासनं तथा मायूरं कुक्कुटं च एव कूर्मं, भद्रासनं तथा मुक्तासनं प्रोक्तं, तेषां पृथक् लक्षणं वक्ष्यामि।)

हे पुत्र । अब आसनों का वर्णन करुँगा। इसे एकाग्रचित्त होकर सुनो। स्वस्तिक, गोमुख, पद्म, वीर, सिंहासन, मयूर, कुक्कुट, कूर्म, भद्र तथा मुक्त ये (दस) आसन कहे गए हैं। अब इनका अलग-अलग वर्णन करूँगा ।

जानूर्वोरन्तरं सम्यक् कृत्वा पादतले उभे[१३८]।
ऋजुकायस्तथासीनः स्वस्तिकं तत् प्रचक्षते[१३९]।।६८।।

(जानु-ऊर्वोः अन्तरे उभे पादतले सम्यक् कृत्वा तथा ऋजुकायः आसीनः तत् स्वस्तिकं प्रचक्षते।)

घुटनों और जांघ के बीच में दोनों तलवे को अच्छी प्रकार रखकर तथा शरीर को सीधा रखते हुए बैठने को स्वस्तिक (आसन) कहते हैं -

सीवन्यामात्मनः पार्श्वे गुल्फौ निक्षिप्य पादयोः[१४०]।
एतद्वा स्वस्तिकं प्रोक्तं सर्वपापप्रणाशनम्[१४१]।।६९।।

(वा आत्मनः सीवन्यां पार्श्वे पादयोः गुल्फौ निक्षिप्य एतत् स्वस्तिकं सर्वपापप्रणाशनं प्रोक्तम्।)

अथवा अपनी सीवनी के समीप दोनों पाँवों के टखनों को रखकर भी जो स्वास्तिक (आसन होता है) सभी पापों को नाश करने वाला कहा गया है।

सव्ये दक्षिणगुल्फं तु पृष्ठपार्श्वे निवेशयेत्[१४२]।
दक्षिणेऽपि तथा सव्यं गोमुखं तत् प्रचक्षते[१४३]।।७०।।

(पृष्ठपार्श्वे सव्ये तु दक्षिणगुल्फं निवेशयेत् तथा दक्षिणे अपि सव्यं तत् गोमुखं प्रचक्षते।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पीठ के समीप बाँई ओर दाहिना रखना और उसी प्रकार दाहिनी ओर बाँया रखने पर गोमुख आसन कहा जाता है।

अङ्गुष्ठौ च निबध्नीयाद्धस्ताभ्यां व्युत्क्रमेण तु[१४४]।
ऊर्वोरुपरि विप्रेन्द्र कृत्वा पादतले उभे[१४५]।
पद्मासनं भवेदेतत् सर्वेषामेव पूजितम्[१४६]।।७१।।

(विप्रेन्द्र, ऊर्वोः उपरि उभे पादतले कृत्वा च हस्ताभ्यां तु अङ्गुष्ठौ च व्युत्क्रमेण निबध्नीयात्। एतत् सर्वेषाम् एव पूजितं पद्मासनं भवेत्।)

हे विप्रेन्द्र, जाँघों के ऊपर दोनों तलवे रखकर एवं बाएँ हाथ से दाएँ तथा दाएँ हाथ से बाएँ अंगूठे को पकड़कर आसन करने से पद्मासन होता है, जो सभी के द्वारा पूजित अर्थात् करणीय है।

एकं पादमथैकस्मिन् विन्यस्योरौ च संस्थितम्[१४७]।
इतरस्मिंस्तथैवोरुं वीरासनमितीरितम्[१४८]।।७२।।

(एकस्मिन् उरौ एकं पादम् विन्यस्य अथ च इतरस्मिन् उरू तथैव संस्थितं इति वीरासनं ईरितम्।)

एक जांघ के ऊपर एक पाँव तथा दूसरे पाँव पर दूसरे जाँघ को रखकर बैठने से वीरासन होता है।

गुल्फौ च वृषणस्याधः सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपेत्[१४९]।
दक्षिणं सव्यगुल्फेन दक्षिणेनेतरेतरम्[१५०]।।७३।।
हस्तौ जानौ च संस्थाप्य स्वाङ्गुलीश्च प्रसार्य च[१५१]।
व्यात्तवक्त्रौ निरीक्षेत नासाग्रं सुसमाहितः[१५२]।।७४।।
सिंहासनं भवेदेतत् पूजितं योगिभिः सदा[१५३]।।७५।।

(गुल्फौ वृषणस्य अधः सीवन्याः पार्श्वयोः च क्षिपेत्। दक्षिणेन सव्यगुल्फेन इतरेतरं दक्षिणं (संस्थाप्य) हस्तौ जानौ च संस्थाप्य स्व-अङ्गुलीः प्रसार्य च व्यात्तवक्त्रः सुसमाहितः च नासाग्रं निरीक्षेत । एतत् सदा योगिभिः पूजितं सिंहासनं भवेत् ।)

दोनों टखनों को अण्डकोष के नीचे, सीवनी के दोनों भाग में रखकर, दाहिने भाग में बाएँ

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

और बाएँ भाग में दाहिने टखने को रखकर, हाथों को घुटनों पर रखकर, अंगुलियों को फैलाकर और मुँह फाड़कर एकाग्रचित्त से नासाग्र की ओर दृष्टि रखे यह योगियों से सदा पूजित सिंहासन होता है ।

अवष्टभ्य धरां सम्यक् तलाभ्यां च करद्वयम्[१५४] **।**
हस्तयोः खर्परे चापि स्थापयेन्नाभि पार्श्वयोः[१५५] **।।७६।।**
समुन्नतशिरः पादो दण्डवद् व्योम्नि संस्थितः[१५६] **।**
मयूरासनमेतद्धि सर्वपाप विनाशनम्[१५७] **।।७७।।**

(कर द्वयं तलाभ्यां धरां च सम्यक् अवष्टभ्य, हस्तयोः खर्परे नाभिपार्श्वयोः अपि च स्थापयेत्, समुन्नत शिरः पादः दण्डवद् व्योम्नि संस्थितः एतद् हि सर्वपाप विनाशनं मयूरासनम्)

दोनों हाथों की हथेलियों को भूमि पर स्थापित कर नाभी के दोनों ओर हाथों की कोहनियों को अच्छी तरह लगाऐं (तथा) सिर एवं पाँव को समरुप उठाते हुए दण्ड के समान अधर में स्थित रहे । इसी को हि सभी पापों का नाश करनेवाला मयूरासन कहा जाता है ।

पद्मासनं समास्थाय जानूर्वोरन्तरे करौ।
भूमौ निवेश्य संस्थाप्य व्योमस्थं कुक्कुटासनम्[१५८] **।।७८।।**

(पद्मासनं समास्थाय जानु-उर्वोः अन्तरे करौ निवेश्य भूमौ संस्थाप्य च व्योमस्थं कुक्कुटासनम्।)

पद्मासन लगाकर घुटना और जाँघ के बीच से हाथों को ले जाकर भूमि के ऊपर रखकर अधर में उठे रहने से कुक्कुटासन होता है।

गुल्फौ च वृषणस्याधः सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपन्[१५९]**।**
पार्श्वपादौ च पाणिभ्यां दृढं बद्ध्वा सुनिश्चलम्[१६०]**।**
भद्रासनं भवेदेतत् सर्वव्याधिविषापहम्[१६१]**।।७९।।**

(वृषणस्य अधः सीवन्याः पार्श्वयोः गुल्फौ क्षिपन् च पार्श्वपादौ पाणिभ्यां दृढं सुनिश्चलं बद्ध्वा च एतत् सर्वव्याधिविषापहं भद्रासनं भवेत्।)

अण्डकोष के नीचे, सीवनी के दोनों ओर दोनों टखनों को रखें और समीपस्थ पाँवों को दोनों हाथों से दृढ़ता तथा स्थिरता से पकड़ें - यह सभी रोगों और विषों को दूर करनेवाला भद्रासन होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गुदं निरुध्य गुल्फाभ्यां व्युत्क्रमेण समाहितः[१६२]।
कूर्मासनं भवेदेतदिति योगविदो विदुः[१६३]।।८०।।

(व्युत्क्रमेण गुल्फाभ्यां गुदं निरुध्य समाहितः (सन्) एतत् कूर्मासनं भवेत् इति योगविदो विदुः।)

पाँव को बाहर की ओर उलट कर दोनों टखनों से गुदा को दबाकर एकाग्रचित्त होकर रहें, इसे ही योगी लोग कूर्मासन कहते हैं।

मेढ्रादुपरि निक्षिप्य सव्यं गुल्फं तथोपरि[१६४]।
गुल्फान्तरं विनिक्षिप्य मुक्तासनमिदं स्मृतम्[१६५]।।८१।।

(सव्यं गुल्फं मेढ्रात् उपरि निक्षिप्य तथा- उपरि गुल्फान्तरं विनिक्षिप्य इदं मुक्तासनं स्मृतम् ।)

बाएँ टखने को लिङ्ग के ऊपर रखें और उसके ऊपर दूसरे टखने को अच्छी प्रकार रखें । इसे मुक्तासन कहा गया है ।

सम्पीड्य सीवनीं सूक्ष्मां गुल्फेनैव तु सव्यतः[१६६]।
सव्यं दक्षिणगुल्फेन मुक्तासनमिदं तु वा[१६७]।।८२।।

(वा सव्यतः गुल्फेन सूक्ष्मां सीवनीं सम्पीड्य तु दक्षिणगुल्फेन सव्यं (सम्पीड्य) इदं तु मुक्तासनम्।)

अथवा बायें टखने से सीवनी के सूक्ष्म भाग को तथा दाएँ टखने से बाएँ भाग को दबाकर भी मुक्तासन होता है ।

यमैश्च नियमैश्चैव आसनेन च संयुतः[१६८]।
कृत्वा तु नाडिकाशुद्धिं प्राणायामं ततः कुरु[१६९]।।८३।।

(यमैः नियमैः च आसनेन च एव संयुतः नाडिकाशुद्धिं तु कृत्वा ततः च प्राणायामं कुरु।)

यम, नियम और आसन का अभ्यास करने के बाद नाड़ीशुद्धि करने के अनन्तर ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राणायामादि सर्वाणि योगाङ्गानि प्रकुर्वतः[१७०]।
वृथा क्लेशो भवेत्तस्य नाडीशुद्धिमकुर्वतः[१७१]।।८४।।

(नाड़ीशुद्धिं अकुर्वतः प्राणायामादि सर्वाणि योग-अङ्गानि प्रकुर्वतः तस्य वृथा क्लेशः भवेत्।)

नाड़ीशुद्धि का अभ्यास न करते हुए प्राणायाम आदि आगे के सभी योगाङ्गों के अभ्यास करने वाले का श्रम व्यर्थ ही होता है ।

☀ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे प्रथमोऽध्यायः
इस प्रकार वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड का
प्रथम अध्याय समाप्त हुआ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

द्वितीयोऽध्यायः[१]

शक्तिरुवाच[२] -

भगवन् ब्रूहि मे तात नाडीशुद्धिं विधानतः[३]।
केनोपायेन शुद्धाः स्युर्नाडयः सर्वदेहिनाम्[४]।।१।।

शक्ति उवाच -

(भगवन् तात! सर्वदेहिनां नाडयः केन उपायेन शुद्धाः स्युः? नाडीशुद्धिं विधानतः मे ब्रूहि।)

शक्ति बोले -

हे भगवन्, तात, देहधारियों की नाड़ियों की शुद्धि किस उपाय से होगी? नाड़ीशुद्धि की प्रक्रिया विधिपूर्वक मुझसे कहें।

उत्पत्तिं चापि नाडीनां धारणं च यथाविधि[५]।
कन्दं तु कीदृशं प्रोक्त कति तिष्ठन्ति वायवः[६]।।२।।

(नाड़ीनां उत्पत्तिं, अपि च यथाविधि धारणं, कन्दं तु कीदृशं प्रोक्तं, (शरीरे) कति वायवः च तिष्ठन्ति।)

नाड़ियों की उत्पत्ति एवं उनके अनुरक्षण की विधि क्या है ? कन्द का रूप क्या है ? और (शरीर में) कितने वायु होते हैं ?

स्थानानि चैव वायूनां कर्माणि च पृथक् पृथक्[७]।
विज्ञातव्यानि यान्यस्मिन् देहे देहभृतां वर[८]।।
वक्तुमर्हसि तत्त्वेन त्वत्तो वेत्ता न विद्यते[९]।।३।।

(वायूनां स्थानानि पृथक् पृथक् कर्माणि च एव देहभृतां अस्मिन् देहे यानि च विज्ञातव्यानि, (हे) वर, तत्वेन वक्तुं अर्हसि (यतः) त्वत्तो वेत्ता न विद्यते।)

वायुओं के स्थान, उनके अलग-अलग कार्य तथा हे मुनिश्रेष्ठ । देहधारियों के इस शरीर में जो कुछ भी जानने लायक हो वह मुझे यथार्थ रूप से कहो, (क्योंकि) आपके समान दूसरा ज्ञानी नहीं है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इत्युक्तः शक्तिना योगी सम्यक् तद्गतमानसः[१०]।
स्वात्मजं कृपयालोक्य तत्सर्वमन्वभाषत[११]।।४।।

(शक्तिना इति उक्तः सम्यक् तत्-गतमानसः योगी स्व-आत्मजं कृपया आलोक्य तत् सर्वं अन्वभाषत ।)

शक्ति के इस प्रकार कहने पर, प्रश्न को भली प्रकार समझने वाले योगी, (वसिष्ठ जी) ने अपने पुत्र को कृपादृष्टि से देखकर, उन सबों का क्रमशः उत्तर देना आरम्भ किया ।

वसिष्ठ उवाच[१२] -

शरीरं तावदेवं हि षण्णवत्यङ्गुलात्मकम्[१३] ।
विद्ध्येतत् सर्वजन्तूनां स्वाङ्गुलीभिरिति द्विज[१४]।।५।।

(द्विज ! सर्वजन्तूनां शरीरं हि तावत् स्व-अङ्गुलिभिः षट्-नवति-अङ्गुलात्मकं इति एवं एतत् विद्धि ।)

वसिष्ठ बोले -

हे द्विज, प्रत्येक जीव का शरीर अपने अंगुली से छ्यानवे (९६) अंगुली माप का होता है, यह जानो ।

देहे द्वात्रिंशदस्थीनि वंशस्य पार्श्वयोर्द्वयोः[१५] ।
द्विसप्ततिसहस्राणि नाडीनामपि संस्थितिः[१६] ।।६।।

(देहे वंशस्य द्वयोः पार्श्वयोः द्वात्रिंशत् अस्थीनि, अपि द्विसप्तति सहस्राणि नाडीनाम् संस्थितिः (विद्यते)।)

शरीर में पृष्ठवंश के दोनों ओर बत्तीस (३२) अस्थियाँ हैं, और बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं।

शरीरादधिकः प्राणो द्वादशाङ्गुलसम्मितः[१७] ।
प्रयाणं कुरुते वायुस्तस्मात् प्राण इतीरितः[१८] ।।७।।

(प्राणः वायुः शरीरात् द्वादश अङ्गुल सम्मितः अधिकः (वा) प्रयाणं कुरूते तस्मात् प्राण इति ईरितः ।)

प्राण वायु शरीर से बारह अंगुल पर्यन्त या उस से अधिक प्रयाण (आना-जाना) करता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है, इसीलिए उसे प्राण कहा जाता है।

देहमध्ये शिखिस्थानं तप्तजाम्बूनदप्रभम्[१९] ।
त्रिकोणं मनुजानां च चतुरस्त्रं चतुष्पदाम्[२०] ।
मण्डलं तद्विहङ्गानां सत्यमेतद् ब्रवीमि ते[२१] ।।८।।

(देहमध्ये तप्तजाम्बूनदप्रभं शिखिस्थानं, तत् मनुजानां त्रिकोणं, चतुष्पदां च चतुरस्त्रं, विहङ्गानां (च) मण्डलं, एतत् ते सत्यं ब्रवीमि।)

देह मध्य में तप्त स्वर्ण के समान ज्योतिर्मय स्थान है। वह मानवों में त्रिकोणात्मक, पशुओं में चौकोर तथा पक्षियों में गोलाकार होता है - यह मैं तुम्हें सत्य कहता हूँ।

तन्मध्ये तु शिखा तन्वी सदा तिष्ठति पावकी[२२] ।
देहमध्यं तु कुत्रेति श्रोतुमिच्छसि चेत् शृणु[२३] ।।९।।

(तत् मध्ये तु तन्वी पावकी शिखा सदा तिष्ठति, देहमध्यं तु कुत्र इति श्रोतुं इच्छसि चेत् शृणु ।)

उसके बीच में अग्नि की पतली ज्योति सदा विद्यमान रहती है। वह देहमध्य कहाँ है - यह यदि सुनना चाहते हो तो सुनो -

गुदात्तु द्व्यङ्गुलादूर्ध्वमधो मेढ्रात्तु द्व्यगुलात्[२४] ।
एकाङ्गुलं तु तन्मध्ये देहमध्यमितीरितम्[२५] ।।१०।।

(गुदात् तु द्वि-अङ्गुलात् ऊर्ध्वं मेढ्रात् तु द्वि-अङ्गुलात् अधः, तत् मध्ये एक-अङ्गुलं तु देहमध्यं इति ईरितम्।)

गुदा से दो अङ्गुल ऊपर और लिङ्ग से दो अङ्गुल नीचे, इसके बीच के एक अङ्गुल स्थान को देहमध्य ऐसा कहा गया है।

कन्दमस्ति शरीरेऽस्मिन् देहमध्यान्नवाङ्गुलम्[२६] ।
चतुरङ्गुलमुत्सेधमायतं च तथाविधम्[२७] ।।११।।

(अस्मिन् शरीरे देहमध्यात् नव अङ्गुलं (उपरि) चतुरङ्गुलम् उत्सेधं तथाविधम् आयतं च कन्दम् अस्ति ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इस शरीर में देहमध्य से नौ अंगुल (ऊपर), चार अंगुल ऊँचा और चार अंगुल फैला हुआ कन्द है।

अण्डाकृतिवदाकारं त्वगस्थिपरिभूषितम्[२८] ।
तन्मध्यं नाभिरित्युक्तं तस्माच्चक्रसमुद्भवः[२९] ।।१२।।

(अण्ड-आकृति-वत् आकारं त्वक्-अस्थि-परिभूषितं तत् (कन्द) मध्यं नाभिः इति उक्तं, तस्मात् चक्र समुद्भवः।)

अण्डाकृति के समान तथा त्वचा और अस्थि से सुशोभित उस कन्द के मध्यभाग को नाभि कहते हैं । उस (नाभि) से चक्र का प्रादुर्भाव होता है ।

द्वादशारयुतं चक्रं देहस्तेन प्रतिष्ठितः[३०] ।
चक्रेऽस्मिन् भ्रमते जीवः पुण्यपापप्रचोदितः[३१] ।।१३।।

(चक्रं द्वादश-आर-युतं, तेन देहः प्रतिष्ठितः, अस्मिन् चक्रे पुण्य-पाप-प्रचोदितः जीवः भ्रमते ।)

चक्र बारह आरों से युक्त है और उसके कारण ही देह की स्थिति है । इसी चक्र में पुण्य-पाप से प्रेरित जीव घूमता रहता है ।

तन्तुपञ्जरमध्यस्थो यथा भ्रमति लौतिकः[३२] ।
जीवस्य मूलचक्रेऽस्मिन्नधः प्राणश्चरत्यसौ[३३] ।।१४।।

(यथा तन्तु-पञ्जर-मध्यस्थः लौतिकः भ्रमति तथा असौ प्राणः जीवस्य अस्मिन् मूलचक्रे अधः चरति ।)

जैसे तन्तुओं के जाल के बीच में बैठी हुई मकड़ी भटकती रहती है, उसी प्रकार यह प्राण जीव के इस मूलचक्र के नीचे घूमता रहता है ।

प्राणादृढो भवेज्जीवः सर्वदेहेषु सर्वदा[३४] ।
तस्योर्ध्वं कुण्डलीस्थानं नाभेस्तिर्यगधोर्ध्वतः[३५] ।।१५।।

(जीवः सर्वदेहेषु सर्वदा प्राणात् दृढः भवेत्, तस्य ऊर्ध्वं कुण्डली-स्थानं (यः) नाभेः तिर्यक्-अधः-ऊर्ध्वतः (विद्यते)।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जीव सभी शरीरों में सर्वदा प्राण से ही दृढ़ होता है, उस (मूलचक्र के) ऊपर में कुण्डली का स्थान है जो नाभि के ऊपर नीचे इधर-उधर फैली हुई है ।

अष्टप्रकृतिरूपाऽसावष्टधा कुण्डलीकृता[३६] ।
अकारादिक्षकारान्ता कुण्डलीत्यभिधीयते[३७] ।
यथावद्वायुचारं च निरुध्यैषा सदा स्थिता[३८] ।।१६।।

(अष्टप्रकृतिरूपा, अकार-आदि-क्षकार-अन्ता अष्टधा कुण्डलीकृता असौ कुण्डली इति अभिधीयते च वायुचारं निरुध्य एषा सदा यथावत् स्थिता ।)

आठ प्रकृतिवाली, अकार से क्षकार तक (बीजाक्षरयुक्त), आठ बार कुण्डलित होने के कारण वह कुण्डली नाम से कही जाती है और वह सुषुम्मामें वायु के संचार को रोककर सदा यथावत् अर्थात् कुण्डालाकर रूप में स्थित है ।

टिप्पणी - अ और क्ष देवनागरी लिपि का प्रथम और अन्तिम अक्षर हैं। इन दोनों के बीच पूरी वर्णमाला आ जाती है, जो ज्ञान का मूल स्रोत है। कुण्डली को अ से क्ष के बीच वर्णन करने का अभिप्राय यह है कि यह ज्ञान का मूल स्रोत है।

मुखेन सा समावेष्ट्य ब्रह्मरन्ध्रमुखं तथा[३९] ।
योगकाले त्वपानेन प्रबुद्धा सह वह्निना[४०] ।।१७।।

(सा मुखेन ब्रह्मरन्ध्रमुखं समावेष्ट्य (स्थिता) तथा योगकाले तु अपानेन वह्निना सह प्रबुद्धा ।)

वह मुख के द्वारा ब्रह्मद्वार को ढ़ककर स्थित है और योगाभ्यासकाल में अपान वायु के द्वारा अग्नितत्व के साथ जगती है ।

स्फुरन्ती हृदयाकाशान्नागरूपा महोज्जवला[४१] ।
योगिनां हृदयाकाशे नृत्यन्ती नित्यमध्यमा[४२] ।
वायुर्वायुसखेनैव ततो याति सुषुम्णया[४३] ।।१८।।

(नित्यमध्यमा, योगिनां हृदयाकाशे नृत्यन्ती, हृदयाकाशात् महोज्जवला नागरूपा स्फुरन्ती, वायुः वायुसखेन एव ततः सुषुम्णया याति ।)

सदा मध्य में रहने वाली, योगियों के हृदयाकाश में विचरण करती हुई और हृदयाकाश

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में महातेजस्वी नाग के समान भासमान होने वाली, हवा जैसे अपने मित्र अग्नि की सहायता से तीव्र गति से चलती है, वैसे ही वह सुषुम्णा मार्ग से प्रवाहित होती है ।

कन्दमध्ये स्थिता नाड़ी सुषुम्णेति प्रकीर्तिता[४४] ।
तिष्ठन्ति परितः सर्वाश्चक्रेऽस्मिन्नाडिसंज्ञके[४५] ।।१९।।

(कन्दमध्ये स्थिता नाड़ी सुषुम्णा इति प्रकीर्तिता, अस्मिन् नाडिसंज्ञके चक्रे परितः सर्वाः (नाड्यः) तिष्ठन्ति ।)

कन्द के बीच में स्थित नाड़ी सुषुम्णा नाम से कही जाती है । इस नाड़ी रूपी चक्र के चारों ओर सभी नाड़ियाँ रहती हैं ।

नाडीनामपि सर्वासां मुख्याः पुत्र चतुर्दश[४६] ।।२०।।

(पुत्र, सर्वासां नाडीनाम् अपि चतुर्दश मुख्याः ।)
हे पुत्र, सभी नाड़ियों में भी चौदह नाड़ियां मुख्य हैं ।

सुषुम्णेडा ततः पश्चात् पिङ्गला च सरस्वती[४७] ।।२१।।

(सुषुम्णा इडा ततः पश्चात् पिङ्गला सरस्वती च-)
वे हैं - सुषुम्णा, इडा उसके बाद पिङ्गला, सरस्वती-

कुहूश्च वरणा चैव सप्तमी च यशस्विनी[४८] ।
पूषा पयस्विनी चैव शङ्खिनी दशमी तथा[४९] ।।२२।।

(कुहूः वरणा च एव सप्तमी च यशस्विनी पूषा पयस्विनी तथा दशमी चैव शङ्खिनी ।)

कुहू, वरणा, सातवीं यशस्विनी, पूषा, पयस्विनी और दसवीं शङ्खिनी -

गान्धारी हस्तिजिह्वा च तथा विश्वोदरा स्मृता[५०] ।
अलम्बुषा च सर्वासां मुख्यास्त्वेताश्चतुर्दश[५१] ।।२३।।

(गान्धारी हस्तिजिह्वा तथा विश्वोदरा अलम्बुषा च एता चतुर्दश तु सर्वासां मुख्याः स्मृता ।)

गान्धारी, हस्तिजिह्वा, विश्वोदरा और अलम्बुशा ये चौदह (नाड़ियाँ) सभी में मुख्य हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तासु मुख्यतमास्तिस्त्रस्तिसृष्वेकोत्तमा मता[५२] ।
मुक्तिमार्गे सुषुम्णा सा ज्वलन्ती विश्वधारिणी[५३] ।।२४।।

(तासु मुख्यतमाः तिस्रः, तिसृषु एका मुक्तिमार्गे उत्तमा मता, सा ज्वलन्ती सुषुम्णा विश्वधारिणी विद्यते।)

उनमें भी सर्वप्रमुख तीन हैं और तीनों में भी एक मोक्ष मार्ग के लिए सर्वोत्तम मानी गई है । वह तेजस्विनी सुषुम्णा विश्व (शरीर) के आधारभूत रूप में विद्यमान है ।

कन्दस्य मध्यमे पुत्र सुषुम्णा सुप्रतिष्ठिता[५४] ।
पृष्ठमध्यस्थितेनास्थ्ना सह मूर्ध्नि स्थिता सदा[५५] ।।२५।।

(पुत्र, कन्दस्य मध्यमे सुषुम्णा सुप्रतिष्ठिता, (सा) पृष्ठ-मध्य-स्थितेन अस्थ्ना सह मूर्ध्नि सदा स्थिता।)

हे पुत्र, कन्द के बीच में सुषुम्णा अच्छी तरह प्रतिष्ठित है। वह पीठ की अस्थि (रीढ़ की हड्डी) के साथ मस्तक तक सदा विद्यमान रहती है।

मोक्षपन्थाः सुषुम्णा सा ब्रह्मरन्ध्रे प्रकीर्तिता[५६] ।
अव्यक्ता चैव विज्ञेया सूक्ष्मा सा वैष्णवी स्मृता[५७] ।।२६।।

(ब्रह्मरन्ध्रे प्रकीर्तिता सा सुषुम्णा मोक्षपन्थाः विज्ञेया । सूक्ष्मा अव्यक्ता वैष्णवी च एव सा स्मृता ।)

ब्रह्मरन्ध्र में स्थित वह सुषुम्णा मोक्ष मार्ग की ओर ले जानेवाली कही गई है। वह सुषुम्णा सूक्ष्म अव्यक्त तथा वैष्णवी (विष्णुतत्व प्रापक) कही गई है ।

इडा च पिङ्गला चैव तस्याः सव्ये च दक्षिणे[५८] ।
इडा तस्याः स्थिता सव्ये दक्षिणे पिङ्गला स्थिता[५९] ।।२७।।

(तस्याः सव्ये च दक्षिणे च इडा पिङ्गला एव च, इडा तस्याः सव्ये स्थिता दक्षिणे पिङ्गला स्थिता ।)

उसके बाएँ और दाएँ भाग में इडा और पिङ्गला हैं। बाएँ भाग में इडा और दाएँ भाग में पिङ्गला (नाड़ी) स्थित है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इडायां पिङ्गलायां च चरतश्चन्द्रभास्करौ[६०] ।
इडायां चन्द्रमा ज्ञेयः पिङ्गलायां रविः स्मृतः[६१] ।।२८।।

(इडायां पिङ्गलायां चन्द्रभास्करौ च चरतः। इडायां चन्द्रमा ज्ञेयः, पिङ्गलायां रविः स्मृतः।)

इडा और पिङ्गला में क्रमशः चन्द्र तत्व और सूर्य तत्व विचरण करते हैं। इड़ा में चन्द्र और पिङ्गला में सूर्य कहा गया है।

चन्द्रस्तासम इत्युक्तः सूर्यो राजस उच्यते[६२] ।
तावेव सकलं धत्तः कालं रात्रिन्दिवात्मकम्[६३] ।।२९।।

(चन्द्रः तामस इति उक्तः सूर्यः राजस उच्यते । तौ एव रात्रिं-दिवात्मकम् सकलं कालं धत्तः ।)

चन्द्र तामस कहा जाता है और सूर्य राजस कहा जाता है और वही दोनों रात-दिन रूप से सम्पूर्ण काल (समय) के नियामक हैं ।

भोक्त्री सुषुम्णा कालस्य गुह्यमेतदुदाहृतम् ।।३०।।

(सुषुम्णा कालस्य भोक्तृ इति एतत् गुह्यं उदाहृतम् ।)

उसमें गुप्त बात यह है कि सुषुम्णा काल का भक्षण करने वाली है ।

टिप्पणी - कुम्भक के अभ्यास के समय अन्तःस्थित प्राणवायु सुषुम्णा में प्रविष्ट होकर वहीं विद्यमान रहती है । उस विशिष्ट काल को, जिसमें प्राणवायु वहाँ रहती है, सुषुम्णा निगल जाती है अर्थात् ऐसे साधक पर उस क्षण समय का प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए सुषुम्णा को काल की भोक्तृ कहा गया है ।

सरस्वती कुहूश्चैव सुषुम्णापार्श्वयोः स्थिता[६४] ।
गान्धारी हस्तिजिह्वा च इडायाः पृष्ठपूर्वयोः[६५] ।
पूषा यशस्विनी चैव पिङ्गलापृष्ठपूर्वयोः[६६] ।।३१।।

सरस्वती कुहूः च एव सुषुम्णा (या) पार्श्वयोः स्थिता इडायाः पृष्ठपूर्वयोः गान्धारी हस्तिजिह्वा च पिङ्गलापृष्ठपूर्वयोः पूषा यशस्विनी च एव ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सरस्वती और कुहू (नाड़ियाँ) सुषुम्णा के दोनों बगल में रहती हैं। गान्धारी और हस्तिजिह्वा इडा के पीछे और आगे हैं। पूषा और यशस्विनी पिङ्गला के पीछे और आगे हैं।

कुह्वाश्च हस्तिजिह्वाया मध्ये विश्वोदरा स्थिता[६७] ।
यशस्विन्याः कुहोर्मध्ये वरणा च प्रतिष्ठिता[६८] ।।३२।।

(कुह्वाः हस्तिजिह्वायाः च मध्ये विश्वोदरा स्थिता, यशस्विन्याः कुहोः मध्ये च वरणा प्रतिष्ठिता ।)

कुहू और हस्तिजिह्वा के बीच में विश्वोदरा स्थित है । यशस्विनी और कुहू के बीच में वरणा स्थित है ।

पूषायाश्च सरस्वत्याः स्थिता मध्ये पयस्विनी[६९] ।
गान्धारायाः सरस्वत्याः स्थिता मध्ये च शङ्खिनी[७०] ।।३३।।

(पूषायाः सरस्वत्याः च मध्ये पयस्विनी स्थिता, गान्धारायाः सरस्वत्याः मध्ये च शङ्खिनी स्थिता ।)

पूषा और सरस्वती के बीच में पयस्विनी स्थित है और गान्धारी तथा सरस्वती के बीच में शङ्खिनी स्थित है ।

अलम्बुषा च विप्रेन्द्र कन्दमध्यादधः स्थिता[७१] ।
पूर्वभागे सुषुम्णायास्त्वामेढ्रान्तं कुहूः स्थिता[७२] ।।३४।।

(विप्रेन्द्र, अलम्बुषा च कन्दमध्यात् अधः स्थिता, सुषुम्नायाः पूर्वभागे आमेढ्रान्तं कुहूः स्थिता ।)

हे विप्रश्रेष्ठ, अलम्बुषा कन्दमध्य के नीचे स्थित है। सुषुम्णा के पूर्वभाग में लिङ्गपर्यन्त कुहू नाड़ी जाती है ।

अधश्चोर्ध्वं च विज्ञेया वारणा सर्वगामिनी[७३] ।
यशस्विनी च याम्यस्य पादाङ्गुष्ठान्तमिष्यते[७४] ।।३५।।

(वारणा (याम्यस्य) अधः च ऊर्ध्वं च सर्वगामिनी विज्ञेया, यशस्विनी च पाद-अङ्गुष्ठ-अन्तं इष्यते ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वारणा नाड़ी (शरीर में) नीचे और ऊपर तथा (दाएँ भाग में) सभी ओर फैली रहती है। यशस्विनी दाहिने भाग में पाँव के अँगूठे तक फैली हुई है।

पिङ्गला चोर्ध्वगा याम्ये नासान्तं विद्धि पुत्रक[७५] ।
याम्ये पूषा च नेत्रान्तं पिङ्गलायास्तु पृष्ठतः[७६] ।।३६।।

(पुत्रक! याम्ये नासान्तं ऊर्ध्वगा च पिङ्गला विद्धि। याम्ये च पिङ्गलायाः पृष्ठतः नेत्रान्तं तु पूषा ।)

हे पुत्र, दाहिने भाग में ऊपर की ओर नासिका तक जाने वाली जो नाड़ी है उसे पिङ्गला कहते हैं और उसी दाएँ भाग में पिङ्गला के पीछे की ओर से नेत्र तक जानेवाली नाड़ी को पूषा कहते हैं ।

पयस्विनी च विप्रेन्द्र याम्ये कर्णान्तमिष्यते[७७] ।
सरस्वती तथा चोर्ध्वमाजिह्वायाः प्रतिष्ठिता[७८] ।।३७।।

(विप्रेन्द्र! याम्ये कर्णान्तं पयस्विनी च इष्यते तथा ऊर्ध्वं आजिह्वायाः सरस्वती प्रतिष्ठिता ।)

हे विप्रश्रेष्ठ, उसी दाहिने भाग में कान तक जानेवाली जो नाड़ी है उसे पयस्विनी तथा ऊपर में जिह्वा तक जानेवाली नाड़ी को सरस्वती कहते हैं ।

आसव्यकर्णाद्विप्रर्षे शङ्खिनी चोर्ध्वमागता[७९] ।
गान्धारी सव्यनेत्रान्तमिडायाः पृष्ठतः स्थिता[८०] ।।३८।।

(विप्रर्षे! ऊर्ध्वं आसव्यकर्णात् आगता च शङ्खिनी, सव्यनेत्रान्तं इडायाः पृष्ठतः गान्धारी स्थिता ।)

हे विप्रश्रेष्ठ, ऊपर की ओर बाएँ कान तक आने वाली नाड़ी शङ्खिनी तथा इड़ा के पीछे से जाने वाली नाड़ी गान्धारी है, जो बाएँ आँख तक जाती है ।

इडा तु सव्यनासान्तं पिङ्गला दक्षिणे मता[८१] ।
सव्यभागे जया ज्ञेया पूषा चापि व्यवस्थिता[८२] ।
हस्तिजिह्वा तथा सव्यपादाङ्गुष्ठान्तमिष्यते[८३] ।।३९।।

(सव्यनासान्तं तु इडा, दक्षिणे पिङ्गला मता, सव्यभागे जया पूषा च अपि व्यवस्थिता इति ज्ञेया, तथा सव्य-पाद-अङ्गुष्ठान्तं हस्तिजिह्वा इष्यते ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बाँयी नासिका तक इडा और दाएँ भाग तक पिङ्गला कही गई है। बाएँ भाग में जया और पूषा दोनों स्थित हैं ऐसा जानना चाहिए और बाएँ भाग में ही बाएँ पाँव के अंगूठे के अंत तक जानेवाली नाड़ी को हस्तिजिह्वा कहते हैं।

विश्वोदरा तु या नाडी सव्ये सर्वगता स्मृता[८४] ।
अलम्बुषा वामभागे पायुमूलादधोगता[८५] ।।४०।।

(सव्ये सर्वगता या नाडी तु विश्वोदरा स्मृता, पायुमूलात् अधोगता वामभागे अलम्बुषा।)

बाएँ भाग में फैली हुई नाड़ी विश्वोदरा कही गई है, गुदा मूल से नीचे तक बाएँ भाग में अलम्बुषा है।

एतास्वन्याः समुत्पन्ना नाड्योऽन्याश्च तास्वपि[८६] ।
यथाऽश्वत्थदले तद्वद्विज्ञेयाः सर्वनाडिषु[८७] ।।४१।।

(एतासु अन्याः समुत्पन्नाः, तासु अपि अन्याः च, यथा अश्वत्थदले, तद्वत् सर्वनाडिषु विज्ञेयाः।)

इनसे अन्य नाड़ियों की उत्पत्ति होती है तथा उनमें से और भी बहुतसी नाडियाँ निकलती है। जिस प्रकार पीपल के पत्ते में (शिरायें एवं उपशिराएँ) होती हैं उसी प्रकार सभी नाडियों के विषय में समझना चाहिए ।

टिप्पणी - इस श्लोक में अश्वत्थदल इस उपमा का व्यवहार किया गया है। हमारे विचार से दल के स्थान पर मूल शब्द का प्रयोग अधिक उचित और सार्थक होता, क्योंकि कन्दमूल से ही सभी नाडियाँ निकलकर पूरे शरीर में उसी प्रकार फैली हुई रहती है जैसे कि अश्वत्थ का मूल फैल कर बहुत बड़े क्षेत्र को घेर लेता है ।

प्राणो ऽपानः समानश्च उदानो व्यान एव च[८८] ।
नागः कूर्मः कृकरको देवदत्तो धनंजयः[८९] ।।४२।।

(प्राणः अपानः समानः च उदानः व्यानः एव च नागः कूर्मः कृकरकः देवदत्तः धनंजयः।)

प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकरक, देवदत्त और धनंजय -

एते नाडिषु सर्वासु चरन्ति दश वायवः[९०] ।
एतेषु वायवः पञ्च मुख्याः प्राणादयः स्मृताः[९१] ।।४३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(एते दश वायवः सर्वासु नाडिषु चरन्ति एतेषु प्राणादयः पञ्च वायवः मुख्याः स्मृताः।)

ये दस वायु सभी नाड़ियों में संचरण करते रहते हैं। इनमें प्राण आदि पाँच वायु मुख्य कहे गए हैं ।

तेषु मुख्यतमः प्राणः कन्दस्याधः प्रतिष्ठितः[९२] ।
चरत्यास्ये नासिकयोर्हृदये नाभिमण्डले[९३] ।
पादाङ्गुष्ठेऽपि स प्राण एतेष्वपि च तिष्ठति[९४] ।।४४।।

(तेषु मुख्यतमः प्राणः कन्दस्य अधः प्रतिष्ठितः, आस्ये नासिकयोः हृदये नाभिमण्डले चरति, एतेषु पादाङ्गुष्ठे अपि च स प्राणः तिष्ठति ।)

उनमें भी कन्द के नीचे भाग में विद्यमान रहते हुए मुख्यतम प्राण, मुख, नासिका, हृदय और नाभिमंडल तक संचरण करता रहता है । वह प्राण उपर्युक्त सभी स्थानों में और पाँव के अंगूठे तक भी रहता है ।

अपानो मेढ्रपायोश्च ऊरुवृषणजानुषु[९५] ।
जङ्घोदरे च कट्यां च नाभिमूले च तिष्ठति[९६] ।।४५।।

(अपानः मेढ्र-पायोः, ऊरू-वृषण-जानुषु, जङ्घा-उदरे च कट्यां च नाभिमूले च तिष्ठति ।)

अपानवायु लिङ्ग, गुदा, ऊरू, अंडकोष, जानु, जंघा, पेट, कटि और नाभिमूल में रहता है ।

व्यानः श्रोत्राक्षिमध्ये तु कृकाट्यां गुल्फयोरपि[९७] ।
घ्राणे गलेऽक्षिदेशे च स्थानेष्वेतेषु तिष्ठति[९८] ।।४६।।

(व्यानः श्रोत्र-अक्षिमध्ये कृकाटयां तु गुल्फयोः अपि घ्राणे, गले अक्षिदेशे च एतेषु स्थानेषु तिष्ठति ।)

व्यानवायु कान और आंख के मध्य में, ग्रीवास्थि में, दोनों टखनों में, नाक में, गर्दन में तथा आँख में, इतने स्थानों पर रहता है।

उदानः सर्वसंधिस्थः पादयोर्हस्तयोरपि[९९] ।।४७।।

(उदानः सर्वसन्धिस्थः पादयोः हस्तयोः अपि (तिष्ठति) ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उदानवायु सभी सन्धिस्थानों (जोड़ों) में पांवों में और हाथों में भी रहता है ।

समानः सर्वदा देहे सर्वं व्याप्य व्यवस्थितः[१००] ।
भुक्तं सर्वरसं गात्रे व्यापयेद्वह्निना सह[१०१] ।।४८।।

(समानः देहे सर्वदा सर्वं व्याप्त व्यवस्थितः (तथा च) वह्निना सह भुक्तं सर्वरसं गात्रे व्यापयेत् ।)

समानवायु सदा देह में व्यवस्थित रूप से व्याप्त रहा करता है और जठराग्नि के साथ खाए गए सभी अन्नरस को अंगों में व्याप्त अर्थात् पहुँचाने का काम करता रहता है ।

द्विसप्ततिसहस्रेषु नाडीमार्गेषु सञ्चरन्[१०२] ।
समानवायुरेवैको देहं व्याप्य व्यवस्थितः[१०३] ।।४९।।

(द्विसप्ततिसहस्रेषु नाडीमार्गेषु एक एव समान वायुः सञ्चरन् देहं व्याप्य व्यवस्थितः)

बहत्तर हजार नाड़ी मार्गों में सञ्चरण करता हुआ यह एकमात्र समान वायु ही पूर्ण शरीर को व्याप्त करके स्थित है ।

नागादिवायवः पञ्च त्वगस्थ्यादिषु संस्थिताः[१०४] ।।५०।।

(नाग आदि पञ्च वायवः त्वक्-अस्थि-आदिषु संस्थिताः ।)

नागादि पाँच-वायु त्वचा, अस्थि आदि में रहा करते हैं ।

निःश्वासोच्छ्वासकासादि प्राणकर्म इतीष्यते[१०५] ।
अपानवायोः कर्मैतद्विण्मूत्रादिविसर्जनम्[१०६] ।
हानोपादानचेष्टादिर्व्यानकर्मेति कीर्त्यते[१०७] ।।५१।।

(निःश्वास-उच्छ्वास-कास आदि प्राणकर्म इति इष्यते । अपान वायोः विट्-मूत्र आदि विसर्जनं एतत् कर्म हान उपादान चेष्टा आदि व्यान कर्म इति कीर्त्यते ।)

श्वास-प्रश्वास कास (खाँसना) आदि प्राण की क्रिया कही जाती है । अपान वायु की क्रिया मलमूत्रादि विसर्जन है, और छोड़ना, लेना चेष्टादि कर्म व्यान वायु की क्रिया कही गई है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उदानकर्म तत्प्रोक्तं देहस्योन्नयनादि यत्[१०८] ।
पोषणादि समानस्य शरीरे कर्म कीर्तितम्[१०९] ।।५२।।

(यत् देहस्य उन्नयनादि तत् उदानकर्म प्रोक्तम्, शरीरे पोषण आदि कर्म समानस्य कीर्तितम् ।)

शरीर का उत्थान आदि उदान वायु की क्रिया है और शरीर का पोषण करना समान वायु की क्रिया कही गई है ।

उद्‌गारादि गुणो यस्तु नागकर्मेति कीर्त्यते[११०] ।
निमीलनादि कूर्मस्य क्षुतं तु कृकरस्य च[१११] ।।५३।।

(यः उद्‌गार आदि गुणः नागकर्म इति कीर्त्यते निमीलन आदि कूर्मस्य, कृकरस्य तु क्षुतं च ।)

डकार आदि लेना नागवायु की क्रिया कही गई है, पलक झपकाने आदि की क्रिया कूर्मवायु की और छींकने की क्रिया कृकर वायु की है ।

देवदत्तस्य विप्रेन्द्र तन्द्रीकर्मेति कीर्त्यते[११२] ।
धनञ्जयस्य शोषादि सर्वकर्म प्रकीर्तितम्[११३] ।।५४।।

(विप्रेन्द्र, देवदत्तस्य तन्द्री कर्म इति कीर्त्यते, धनञ्जयस्य शोष आदि (एवं) सर्वकर्म प्रकीर्तितम् ।)

हे विप्रश्रेष्ठ, देवदत्त वायु की क्रिया तन्द्रा (जम्हाई लेना) है, तथा धनञ्जय वायु की शुष्कता आदि, इस प्रकार सभी (वायुओं) की क्रियाएँ कही गई हैं ।

ज्ञात्वैवं नाडिसंस्थानं वायुस्थानं प्रयत्नतः[११४] ।
नाडीसंशोधनं कुर्याद्यथाविधिपुरस्सरम्[११५] ।।५५।।

(एवं प्रयत्नतः नाडिसंस्थानं वायुस्थानं च ज्ञात्वा, यथाविधि पुरस्सरं नाडीसंशोधनं कुर्यात् ।)

इस प्रकार यत्नपूर्वक नाड़ियों के स्थानों तथा वायुओं के स्थानों को समझकर विधिपूर्वक नाडियों का शोधन करना चाहिए ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विध्युक्तकर्मसंयुक्तः सर्वकामविवर्जितः[११६] ।
यमादिगुणसंयुक्तः सर्वसङ्गविवर्जितः[११७] ।।५६।।

(विधि-उक्त-कर्म-संयुक्तः सर्वकामविवर्जितः यमादि गुण संयुक्तः सर्वसङ्गविवर्जितः (सन्) ।)

इस प्रकार शास्त्रोक्त (नित्य) कर्म करते हुए, सभी कामनाओं से रहित होकर, यम-नियम आदि गुणों से पूर्ण होकर, सभी प्रकार से संगों को छोड़कर -

तपोवनं ततो गत्वा फलमूलोदकान्वितम्[११८] ।
तत्र रम्ये शुचौ देशे नद्यां देवालयेऽपि वा[११९] ।।५७।।

(ततः फल-मूल-उदक-अन्वितं तपोवनं गत्वा तत्र रम्ये शुचौ देशे नद्यां देवालये अपि वा -)

तब फल, मूल, जल आदि से भरे तपोवन में जाकर वहाँ मनोरम तथा पवित्र स्थान में, नदी किनारे अथवा देवालय में -

सुशोभनं मठं कृत्वा सर्वरक्षासमन्वितम्[१२०] ।
त्रिकालस्नानसंयुक्तः शुचिर्भूत्वा समाहितः[१२१] ।।५८।।

(सर्वरक्षासमन्वितं सुशोभनं मठं कृत्वा त्रिकालस्नान-संयुक्तः शुचिः भूत्वा समाहितः (सन्))-

सभी प्रकार से सुरक्षित सुन्दर मठ बनाकर, त्रिकाल स्नान करते हुए पवित्र होकर, स्थिर चित्त हो -

मन्त्रन्यस्ततनुर्धीरः सितभस्मधरः सदा[१२२] ।
मृद्वासनोपरि कुशान् समास्तीर्याथवाजिनम्[१२३] ।।५९।।

(मन्त्रन्यस्त-तनुः धीरः सदा सितभस्मधरः मृदु-आसन-उपरि कुशान् अजिनं वा समास्तीर्य-)

मंत्रों की न्यास विधि से शरीर को स्थिर कर, सदैव शुभ्र भस्म लगाकर, कोमल आसन पर कुशों को अथवा मृगचर्म को बिछाकर -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विनायकं सुसंपूज्य फलमूलोदकादिभिः[१२४] ।
इष्टदेवं गुरुं नत्वा तत्र प्रारभ्य चासनम्[१२५] ।।६०।।

(फल-मूल-उदक-आदिभिः विनायकं सुसम्पूज्य, इष्टदेवं गुरुं (च) नत्वा तत्र आसनं च प्रारभ्य ।)

फल, मूल, जल आदि से विघ्ननिवारक गणपति की अच्छी प्रकार पूजा कर, इष्टदेव और गुरु को प्रणाम कर, वहाँ आसन प्रारम्भ करना चाहिए ।

प्राङ्मुखोदङ्मुखो वा स्यात् पद्मासनगतः स्वयम्[१२६] ।
समग्रीवशिरःकायः संवृतास्यः सुनिश्चलः[१२७] ।।६१।।

(स्वयं प्राङ्मुखः उदङ्मुखः वा पद्मासनगतः समग्रीवशिरः कायः संवृत-आस्यः सुनिश्चलः स्यात् ।)

स्वयं पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख हो पद्मासन लगाकर गर्दन, सिर और पूरे शरीर को समान अवस्था में रखकर मुख बंद कर सुस्थिर होकर बैठें ।

नासायां तु सदा सम्यक् न्यस्य सव्येतरं करम्[१२८] ।
नासाग्रे शशभृद्बिम्बं ज्योत्स्नाजालवितानितम्[१२९] ।।६२।।

(सव्य-इतरं करं तु सदा नासायां सम्यक् न्यस्य, नासाग्रे ज्योत्स्ना-जाल-वितानितं शशभृत् बिम्बम् -)

दाहिने हाथ को सदैव नासापुट में लगाकर नासाग्र भाग पर ज्योत्स्ना-जाल से भरे चन्द्रबिम्ब की कल्पना कर -

सप्तमस्य तु वर्गस्य चतुर्थं बिन्दुसंयुतम्[१३०] ।
बिन्दुमध्यस्थमालोक्य नेत्राभ्यां मनसा सह[१३१] ।।६३।।

(सप्तमस्य तु वर्गस्य चतुर्थं तु बिन्दु संयुतं (कृत्वा) मनसा सह नेत्राभ्यां बिन्दुमध्यस्थं आलोक्य -)

सप्तम (य,र,ल,व) वर्ग के चौथे व को अनुस्वारयुक्त (वं) कर, मनोयुक्त (आन्तरिक) नेत्रों से बिन्दु के बीच में देखते हुए -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इडया पूरयेद्वायुं बाह्याद् द्वादशमात्रकैः[१३२] ।
ततोऽग्निं पूर्ववद्ध्यायेत् स्फुरज्ज्वालावलीयुतम्[१३३] ।।६४।।

(इडया बाह्याद् वायुं द्वादशमात्रकैः पूरयेत् ततः स्फुरत् ज्वालावलीयुतं अग्निं पूर्ववत् (मनसा सह) ध्यायेत्।)

इडा (बायीं) नाड़ी के द्वारा बाहरी वायु का बारह मात्राओं से पूरण करना चाहिए, उसके बाद ज्वालाओं से युक्त अग्नि का ध्यान पूर्ववत् ही करना चाहिए।

रेफं च बिन्दुसंयुक्तमग्निमण्डलसंस्थितम्[१३४] ।
ध्यायन् विरेचयेत् पश्चान्मन्दं पिङ्गलया पुनः[१३५] ।।६५।।

(रेफं बिन्दुसंयुक्तं च अग्निमण्डलसंस्थितं पुनः ध्यायन् पश्चात् पिङ्गलया मन्दं विरेचयेत् ।)

र को बिन्दु से युक्त कर (रं) अग्निमण्डल के बीच में चिंतन करते-करते फिर पिङ्गला के द्वारा धीरे-धीरे रेचक करना चाहिए ।

पुनः पिङ्गलयापूर्य प्राणं दक्षिणतः सुधीः[१३६] ।
ततो विरेचयेद्धीमानिडया तु शनैः शनैः[१३७] ।।६६।।

(पुनः दक्षिणतः पिङ्गलया प्राणं आपूर्य सुधीः ततः शनैः शनैः धीमान् तु इडया विरेचयेत् ।)

फिर दाहिनी नाड़ी पिङ्गला के द्वारा प्राण का पूरण करके बुद्धिमान योगियों को तब इड़ा नाड़ी के द्वारा धीरे-धीरे रेचन करना चाहिए ।

त्रिचतुर्वत्सरं चाथ त्रिचतुर्मासमेव वा[१३८] ।
षट्त्रिंशदाचरेदेवं त्रिषु कालेषु यत्नतः[१३९] ।।६७।।

(त्रिचतुः वत्सरं अथ च त्रिचतुः मासम् एव वा त्रिषु कालेषु षट्त्रिंशद् यत्नतः एवं आचरेत् ।)

तीन चार वर्ष अथवा तीन चार महीने तक इस प्रकार प्रति दिन त्रिकाल छतीस बार यत्नपूर्वक अभ्यास करना चाहिए ।

नाडीशुद्धिमवाप्नोति पृथक् चिह्नोपलक्षिताम्[१४०] ।
शरीरलघुता दीप्तिर्जठराग्निविवर्धनम्[१४१] ।।६८।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नादाभिव्यक्तिरित्येतच्चिह्नं तच्छुद्धिसूचकम्[१४२] ।
यावदेतानि सम्पश्येत्तावदेवं समाचरेत्[१४३] ।।६९।।

(पृथक् चिह्न उपलक्षितां नाडीशुद्धिम् अवाप्नोति (यथा)-शरीर-लघुता, दीप्तिः, जठराग्निविवर्धनं, नाद-अभिव्यक्तिः इति एतत् चिह्नं तत् शुद्धिसूचकम् यावत् एतानि सम्पश्येत् तावत् एवं समाचरेत् ।)

इससे नाड़ीशुद्धि सूचक पृथक्-पृथक् चिह्न प्राप्त होते हैं, जैसे शरीर का हल्कापन, कान्ति, जठराग्नि का बढ़ना और नाद का आविर्भाव, ये सभी चिन्ह नाड़ीशुद्धि के सूचक हैं। ये सभी चिन्ह दिखाई देने तक इस प्रकार अभ्यास करते रहना चाहिए ।

✱ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे द्वितीयोऽध्यायः ।।

इस प्रकार वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड का
द्वितीय अध्याय समाप्त हुआ ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीयोऽध्यायः

वसिष्ठ उवाच[१] **-**

प्राणायाममथेदानीं वक्ष्यामि प्रणवात्मकम्[२]**।**
समाहितमना भूत्वा शृणु पुत्रक सुव्रत[३] **।।१।।**

(अथ इदानीं प्रणवात्मकं प्राणायामं वक्ष्यामि, सुव्रत पुत्रक समाहितमना भूत्वा शृणु ।)

वसिष्ठ बोले, अब मैं ओंकारयुक्त प्राणायाम का वर्णन करता हूँ । हे निष्ठावान् पुत्र, एकाग्रचित्त होकर सुनो ।

प्राणापानसमायोगः प्राणायामः प्रकीर्तितः[४]**।**
प्राणायामस्त्रिभिः प्रोक्तो रेचपूरककुम्भकैः[५]**।।२।।**

(प्राण अपान समायोगः प्राणायामः प्रकीर्तितः रेच-पूरक-कुम्भकैः त्रिभिः प्राणायामः प्रोक्तः ।)

प्राण और अपान का उचित संयोग प्राणायाम कहा जाता है । रेचक -पूरक-कुम्भक इन तीनों से प्राणायाम बनता है ।

वर्णत्रयात्मका ह्येते रेचपूरककुम्भकाः[६] **।**
स एष प्रणवः प्रोक्तः प्राणायामश्च तन्मयः[७] **।।३।।**

(एते रेचक-पूरक-कुम्भकाः हि वर्णत्रयात्मकाः स एष प्रणवः प्रोक्तः प्राणायामः च तन्मयः ।)

ये रेचक, पूरक और कुम्भक क्रमशः तीन अक्षरों से युक्त होते हैं। वही तीन अक्षर ओंकार कहा जाता है और प्राणायाम उस से अभिन्न है ।

(टिप्पणी - अ, उ, म ये वर्णत्रय के नाम से जाने जाते हैं । ये ही तीन वर्ण सम्पूर्ण देवनागरी लिपि के प्रतिनिधि हैं। अ इस लिपि का पहला वर्ण है जबकि म उस लिपिसमूह का अन्तिम । उ देवनागरी लिपि में पहले विकार का सूचक है ।)

यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्तेषु प्रतिष्ठितः[८] **।**
सृष्टिस्थित्यात्मकावेतौ मकारोन्त्योन्तकः स्मृतः[९] **।।४।।**

(यः वेद आदौ स्वरः प्रोक्तः वेदान्तेषु प्रतिष्ठितः एतौ (अ, उ) स्थिति आत्मकौ, अन्त्यः मकारः अन्तकः स्मृतः ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जिसको वेदादि में स्वर कहा गया है, उपनिषदों में जो आधारभूत है वही अ और उ क्रमशः सर्जन और धारण करने वाला तथा अन्तिम मकार उपसंहार (लय) करने वाला कहा गया है ।

(**टिप्पणी -** यहाँ अ और उ क्रमशः पूरक एवं कुम्भक तथा म रेचक के लिए प्रयुक्त हुआ है।)

अकारमूर्तिरेतेषां रक्ताङ्गी हंसवाहिनी[१०] ।
दण्डहस्ता सती बाला गायत्रीत्यभिधीयते[११] ।।५।।

(एतेषां अकारमूर्तिः रक्ताङ्गी हंसवाहिनी दण्डहस्ता सती बाला गायत्री इति अभिधीयते ।)

इनमें अकार स्वरूप वाली लालवर्ण वाली, हंसवाहिनी गायत्री नाम से कही जाती है जो हाथ में दण्ड धारण किए हुए, बाला (सोलह वर्ष) की सती है ।

उकारमूर्तिस्त्वत्रस्था युवती शुक्लविग्रहा[१२] ।
गरुत्मद्वाहिनी चापि देवताचक्रधारिणी[१३] ।।६।।

(अत्रस्था तु उकारमूर्तिः शुक्लविग्रहा च गरुत्मद्वाहिनी अपि युवती चक्रधारिणी देवता ।)

और इनमें उकार स्वरूप वाली शुक्लवर्णांगी, गरुड़वाहिनी युवती (तीस वर्षीया) चक्रधारिणी देवता है ।

मकारमूर्तिः शुक्लाङ्गी सावित्री च त्रिलोचना ।
सरस्वती शूलहस्ता वृद्धा वृषभवाहिनी[१४] ।
माहेश्वरी तु सा प्रोक्ता पश्चिमा च प्रकीर्तिता[१५] ।।७।।

(मकारमूर्तिः त्रिलोचना शुक्लाङ्गी शूलहस्ता वृषभवाहिनी वृद्धा च सावित्री प्रोक्ता । सा तु सरस्वती माहेश्वरी पश्चिमा च प्रकीर्तिता ।)

मकार स्वरूप वाली, त्रिलोचना, शुक्लाङ्गी, शूलहस्ता, वृषभवाहिनी, वृद्धा (पचास से ऊपर की) सावित्री देवी कही गईं हैं । और ये सरस्वती, माहेश्वरी, पश्चिमा नाम से भी जानी जाती हैं ।

अक्षरत्रयमेतद्धि कारणत्रयमिष्यते[१६] ।
त्रयाणां कारणं ब्रह्म भारूपं सर्वकारणम्[१७] ।।८।।

(एतत् अक्षरत्रयं हि कारणत्रयं इष्यते । त्रयाणां कारणं (हि) भारूपं ब्रह्मं सर्वकारणम् ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ये तीनों अक्षर ही तीन कारण कहे गए हैं और इन तीनों के मूल कारण आभास्वरूप ब्रह्म हैं जो सभी के कारण हैं ।

एकाक्षरं परं ज्योतिस्तदाहुः प्रणवं बुधाः[१८] ।
एवं ज्ञात्वा विधानेन प्रणवेन समन्वितम्[१९] ।
प्राणायामं त्रिभिः कुर्याद्रेचपूरककुम्भकैः[२०] ।।९।।

(बुधाः तत् प्रणवं एकाक्षरं परं ज्योतिः आहुः एवं ज्ञात्वा प्रणवेन समन्वितं प्राणायामं विधानेन रेच-पूरक-कुम्भकैः त्रिभिः कुर्यात् ।)

विद्वान् लोग उस प्रणव (ओंकार) को एकाक्षर प्रणव ज्योति कहते हैं । ऐसा समझकर ओंकारयुक्त रेचक, पूरक, कुम्भक इन तीनों से विधिपूर्वक प्राणायाम करना चाहिए ।

आकृष्य श्वसनं बाह्यात्पूरयेदिडयोदरम्[२१] ।
शनैः षोडशभिर्मात्रैरकारं संस्मरन् बुधः[२२] ।।१०।।

(षोडशभिः मात्रैः शनैः इडया अकारं संस्मरन् बाह्यात् श्वसनम् आकृष्य बुधैः उदरं पूरयेत् ।)

सोलह मात्राओं तक धीरे-धीरे इड़ा नाड़ी द्वारा अकार का स्मरण करते हुए बाहर से वायु को खींचकर विद्वान लोग उदर को पूरित करें ।

धारयेत् पूरितं पश्चात् चतुःषष्ठ्या तु मात्रया[२३] ।
उकारमूर्तिमत्रापि संस्मरन् प्रणवं जपेत्[२४] ।
यावद्वा शक्यते तावद्धारणं जपसंयुतम्[२५] ।।११।।

(पश्चात् चतुःषष्ठ्या मात्रया तु पूरितं धारयेत् अत्र अपि उकारमूर्ति संस्मरन् प्रणवं जपेत् वा यावत् शक्यते तावत् जपसंयुतं धारणं (कुर्यात्) ।)

बाद में चौंसठ मात्रा से पूरित वायु का धारण (कुम्भक) करना चाहिए और वहाँ पर भी उकार स्वरूप का स्मरण करते हुए ओंकार का जप करना चाहिए अथवा इस प्रकार जब तक धारण (कुम्भक) कर सकें तब तक जपयुक्त धारण करना चाहिए ।

पूरितं रेचयेत् पश्चात् प्राणं बाह्यानिलान्वितम्[२६] ।
शनैः पिङ्गलया पुत्र द्वात्रिंशन्मात्रया पुनः[२७] ।।१२।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(पश्चात् पुत्र बाह्य अनिल-अन्वितं पूरितं प्राणं पुनः द्वात्रिंशत् मात्रया शनैः पिङ्गलया रेचयेत् ।)

बाद में हे पुत्र बाहरी वायुरूप पूरित प्राण को पुनः बत्तीस मात्रा से धीरे-धीरे पिङ्गला के द्वारा छोड़ना चाहिए ।

ध्यायन्नन्त्याक्षरं तत्र प्रणवस्य समाहितः[२८] ।
प्राणायामो भवेदेष पुनश्चैव समभ्यसेत्[२९] ।।१३।।

(तत्र समाहितः (सन्) प्रणवस्य अन्त्य अक्षरं ध्यायन्, एष प्राणायामः भवेत्, पुनः च एव समभ्यसेत्-)

वहाँ एकाग्रचित्त से ओंकार के अन्तिम अक्षर (म) का ध्यान करना चाहिए। यही प्राणायाम होता है। इसका पुनः-पुनः अभ्यास करें ।

ततः पिङ्गलयाऽऽपूर्य मात्रैः षोडशभिस्तथा[३०] ।
अकारमूर्तिमत्रापि संस्मरन् सुसमाहितः[३१] ।।१४।।

(ततः षोडशभिः मात्रैः पिङ्गला आपूर्य तथा अत्र अपि अकारमूर्तिं सुसमाहितः संस्मरन्-)

(तब सोलह मात्रा से पिङ्गला के द्वारा पूरित कर और यहा भी अकार स्वरूप का एकाग्रचित्त से स्मरण करते हुए -

पूरितं धारयेत् प्राणं पुनर्द्वात्रिंशतिद्वयम्[३२] ।
जपेत्तत्रस्मरेन्मूर्तिं उकाराख्यं समाहितः[३३] ।।१५।।

(पुनः द्वात्रिंशतिद्वयं पूरितं प्राणं धारयेत् । तत्र उकाराख्यं मूर्तिं स्मरन् समाहितः जपेत् ।)

पुनः चौंसठ मात्रा तक पूरित प्राण को धारण करना चाहिए । वहाँ उकार मूर्ति का स्मरण करते हुए एकाग्रचित्त से जप करना चाहिए ।

धारितं रेचयेत् पश्चात् प्राणं बाह्यानिलान्वितम्[३४] ।
यावद्वाशक्यते पश्चाद्रेचयेदिडयाऽऽनिलम्[३५] ।
मकारमूर्तिमत्रापि संस्मरन् पूर्ववद्बुधः[३६] ।।१६।।

(धारितं बाह्य-अनिल-अन्वितं प्राणं पश्चात् रेचयेत् यावत् वा शक्यते (धारयेत्) पश्चात् पूर्ववत् मकार-मूर्ति अत्र अपि संस्मरन् बुधः इडया अनिलं रेचयेत् ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बाद में धारण किए हुए बाहरी वायु रूप प्राण को (इस प्रकार) छोडे, जब तक हो सके धारण करने के बाद पूर्ववत् मकार मूर्ति का यहाँ भी स्मरण करते हुए विद्वान साधक इड़ा के द्वारा वायु को छोड़े ।

तथैव च पुनः कुर्यादिडया पूर्वपूर्ववत्[३७] ।
नित्यमेवं प्रकुर्वीत प्राणायामांस्तु षोडश[३८] ।।१७।।

(तथैव पूर्व पूर्ववत् इडया पुनः च कुर्यात् । एवं तु नित्यं षोडश प्राणायामान् प्रकुर्वीत ।)

इस प्रकार पुनः पुनः इड़ा के द्वारा पूर्वोक्त रीति से प्रतिदिन सोलह प्राणायाम करना चाहिए ।

अपि भ्रूणहनं मासात् पुनन्त्यहरहः कृताः[३९] ।
प्राणायामपराः सर्वे प्राणायामपरायणाः ।।१८।।

(प्राणायामपरायणाः सर्वे प्राणायामपराः अहः अहः कृताः (साधकाः) मासात् भ्रूणहनं अपि पुनन्ति ।)

प्राणायाम को ही सर्वस्व समझकर प्राणायाम का अभ्यास प्रतिदिन करने वाले सभी साधक एक मास में भ्रूणहत्या जैसे पाप से मुक्त हो जाते हैं ।

प्राणायामैर्विशुद्धा ये ते यान्ति परमां गतिम्।
प्राणायामादृते नान्यत्तारणं नरकादपि[४०] ।।१९।।

(ये प्राणायामैः विशुद्धा ते परमां गतिं यान्ति, नरकात्अपि तारणं प्राणायामात् ऋृते अन्यत् न ।)

जो प्राणायाम से पवित्र हो जाते हैं वे परमगति को प्राप्त होते हैं। नरक से भी मुक्त करनेवाला प्राणायाम के सिवा दूसरा कुछ भी नहीं है ।

संसारार्णवमग्नानां तारकः प्राणसंयमः।।२०।।

(संसार अर्णव मग्नानां प्राणसंयमः तारकः ।)
संसारसमुद्र में डूबे हुए के लिए प्राणायाम ही तारक है ।

बाह्यादापूरणं वायोरुदरे पूरकः स्मृतः[४१] ।
सम्पूर्णकुम्भवद्वायोर्धारणं कुम्भको भवेत्[४२] ।
बहिर्यद्रेचनं वायोरुदराद्रेचको हि सः[४३] ।।२१।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(उदरे बाह्यात् वायोः आपूरणं पूरकः स्मृतः सम्पूर्ण कुम्भवत् वायोः धारणं कुम्भकः भवेत्, वायोः उदरात् बहिः रेचनं सः हि रेचकः ।)

पेट को बाहर की वायु से पूरित करना पूरक कहा जाता है। भरे हुए कुम्भ के समान (पेट में) वायु को धारण करना कुम्भक होता है । पेट से वायु को बाहर निकालना ही रेचक है ।

प्रस्वेदजनको यस्तु प्राणायामेषु सोऽधमः[४४] ।
मध्यमः कम्पनात् प्रोक्त उत्थानं चोत्तमाद्भवेत्[४५] ।।२२।।

(प्राणायामेषु यः प्रस्वेदजनकः सः तु अधमः, कम्पनात् मध्यमः प्रोक्तः, उत्थानं च उत्तमात् भवेत् ।)

प्राणायाम में जो पसीना निकालने वाला होता है वह कनिष्ठ प्राणायाम, कम्प उत्पन्न करने वाला मध्यम प्राणायाम तथा शरीर को ऊपर उठने जैसा अनुभव दिलाने वाला उत्तम प्राणायाम होता है ।

(**टिप्पणी -** यहाँ अधम, मध्यम और उत्तम शब्द क्रमशः पहली, दूसरी एवं अंतिम अवस्था द्योतक है-जिसका क्रमिक अनुभव साधक को प्राणायाम के अभ्यास के समय होता है। जो प्राणायाम का अभ्यास करते हैं, उन्हें उपरोक्त सभी चिन्ह क्रमशः प्राप्त होते हैं । अतः इन्हें अधम (कनिष्ठ), मध्यम और उत्तम कहा गया है । यही बात आगे के श्लोक में अधिक स्पष्ट की गई है ।

पूर्वं पूर्वं प्रकुर्वीत यावदुत्तमसम्भवः[४६] ।
सम्भवत्युत्तमे पुत्र प्राणायामे सुखी भवेत्[४७] ।।२३।।

(यावत् उत्तम-संभव (तावत्) पूर्वं-पूर्वं प्रकुर्वीत। पुत्र, उत्तमे प्राणायामे संभवति (सति) सुखी भवेत् ।)

जब तक उत्तम प्राणायाम सिद्ध न हो तब तक कनिष्ठ और मध्यम का अभ्यास करते रहना चाहिए। हे पुत्र, उत्तम प्राणायाम सिद्ध हो जाने से योगी सुख प्राप्त करता है ।

प्राणो लयति तेनैव देहस्यान्तस्ततोऽधिकः[४८] ।
देहश्चोत्तिष्ठते तेन कृतासनपरिग्रहः[४९] ।।२४।।

(तेन एव देहस्य अन्तः प्राणः लयति । ततः अधिकः तेन कृत आसन परिग्रहः (सन् अपि) देहः उत्तिष्ठते ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ऐसा अभ्यास होने से देह के अन्दर प्राण का लय हो जाता है । उससे भी अधिक आसन बांध कर बैठने पर भी देह के उठने जैसा अनुभव होता है ।

निःश्वासोच्छ्वासकौ तस्य न विद्येते कथञ्चन।
देहे यद्यपि तौ स्यातां स्वाभाविकगुणावुभौ।।२५।।

तथापि नश्यतस्तेन प्राणायामोत्तमेन हि[५०] ।
तयोर्नाशे समर्थःस्यात् कर्तुं केवलकुम्भकम्[५१] ।।२६।।

(तस्य निःश्वास-उच्छ्वासकौ कथञ्चन न विद्येते यदि अपि देहे स्वभाविक गुणौ तौ उभौ स्याताम् तथा अपि उत्तमेन प्राणायामः हि तेन नश्यतः तयोः नाशे (साधकः) केवलकुम्भकं कर्त्तुं समर्थः स्यात् ।)

ऐसे साधक के श्वास-प्रश्वास कुछ भी नहीं रहते । यद्यपि शरीर में स्वाभाविक रूप से दोनों रहा करते हैं, परन्तु उत्तम प्राणायाम के कारण दोनों शान्त हो जाते हैं । उन दोनों के शान्त हो जाने से साधक केवल-कुम्भक करने में समर्थ होता है ।

रेचनं पूरणं मुक्त्वा सुखं यद्वायुधारणम्[५२] ।
प्राणायामोऽयमित्युक्तः स वै केवलकुम्भकः[५३] ।।२७।।

(रेचनं पूरणं मुक्त्वा सुखं यत् वायुधारणं स प्राणायामः केवलकुम्भकः इति उक्तः ।)

रेचन और पूरण के बिना सुखपूर्वक जो वायु का धारण होता है, वही प्राणायाम - केवलकुम्भक प्राणायाम कहा जाता है ।

विरेच्यापूर्य यं कुर्यात् स वै सहितकुम्भकः[५४] ।
सहितं केवलं चाथ कुम्भकं नित्यमभ्यसेत्[५५] ।।२८।।

(विरेच्य आपूर्य यं कुर्यात् स वै सहितकुम्भकः अथ सहितं केवलं च कुम्भकं नित्यम् अभ्यसेत् ।)

रेचक और फिर पूरक जो (कुम्भक) किया जाता है वही सहितकुम्भक है, अतः सहित और केवलकुम्भक का नित्य अभ्यास करना चाहिए ।

यावत् केवलसिद्धिः स्यात् तावत् सहितमभ्यसेत्[५६] ।।२९।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(यावत् केवलसिद्धिः स्यात् तावत् सहितं अभ्यसेत् ।)

जबतक केवलकुम्भक की प्राप्ति हो तब तक सहित का अभ्यास करना चाहिए ।

केवले कुम्भके सिद्धे रेचपूरणवर्जिते[५७] ।
न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु चात्मज[५८] ।
मनोजवत्वं लभते पलितादि विनश्यति[५९] ।।३०।।

(रेच-पूरण वर्जिते केवले कुम्भके सिद्धे (सति) आत्मज तस्य त्रिषु लोकेषु किञ्चित् दुर्लभं न । मनोजवत्वं लभते पलितादि विनश्यति ।)

रेचक पूरक के बिना जब केवलकुम्भक की प्राप्ति हो जाए, तब हे पुत्र, उसे तीनों लोकों में कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता है । उसे मन की इच्छित तीव्रता मिलती है तथा बुढ़ापे के चिन्ह नष्ट हो जाते हैं ।

प्रोक्तस्तेयं महामार्गो मकाराख्योऽन्तकान्तकः[६०] ।
नादं चोत्पादयत्येष कुम्भकः प्राणसंयमः[६१] ।।३१।।

(ते अयं मकाराख्यः महामार्गः अन्तकान्तकः उक्तः एष प्राणसंयमः कुम्भकः नादं च उत्पादयति ।)

तुम्हें यह मकार नाम से, मृत्यु को दूर करने वाला, महामार्ग मैंने कहा। इस कुम्भक-प्राणायाम से नाद की उत्पत्ति होती है ।

प्राणसंयमनं नाम देहे प्राणादिधारणम्[६२] ।
एष प्राणजयोपायः सर्वमृत्यूपघातकः[६३] ।।३२।।

(देहे प्राण-आदि धारणं प्राणसंयमनं नाम । सर्व एष प्राण जय उपायः मृत्यु-उपघातकः ।)

शरीर में प्राण आदि का धारण करना प्राणनिरोध (प्राणायाम) कहलाता है। मृत्यु को सर्वथा दूर करने वाला यह प्राण को जय करने का उपाय है।

किञ्च प्राणजयोपायं तव वक्ष्यामि तत्त्वतः[६४] ।।३३।।

(किञ्च प्राण-जय-उपायं तत्त्वतः तव वक्ष्यामि ।)

इसके अतिरिक्त प्राण को वश में करने का और भी वास्तविक उपाय तुम्हें कहता हूँ ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बाह्यात् प्राणं समाकृष्य पूरयित्वोदरस्थितम्[६५] ।
अङ्गुष्ठे नाभिनासाग्रे धारणाद्विजयिष्यते[६६] ।।३४।।

(बाह्यात् प्राणं समाकृष्य पूरयित्वा उदर स्थितं (च) अङ्गुष्ठे नाभि नासाग्रे धारणात् विजय-इष्यते ।)

बाहर से वायु को खींचते हुए पूरक-कर उदरस्थ (प्राणको) पांव के अंगूठे, नाभि और नासाग्र में उसका धारण करने से उसे वश में किया जा सकता है ।

एवं वायुजयोपायः शक्यमासनमास्थितः[६७] ।।३५।।

(आसनम् आस्थितः (एव) एवं वायुजय उपायः शक्यम् ।)

आसन लगाकर ही इस प्रकार से वायु को वश में करना सम्भव हो पाता है ।

करणानि वशीकृत्य विषयेभ्यो बलात् सुधीः[६८] ।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य वायुमायुर्विघातकम्[६९] ।
वह्निस्थाने निरुध्येत वायुं तत्रैव धारयेत्[७०] ।।३६।।

(सुधीः करणानि विषयेभ्यो बलात् वशीकृत्य आयुः विघातकं अपानं वायुं ऊर्ध्वं आकृष्य वह्निस्थाने निरुध्येत (तथा च) तत्र एव वायुं धारयेत् ।)

योगी इन्द्रियों को विषयों से यत्नपूर्वक नियन्त्रित कर आयु के विघातक अपानवायु को, ऊपर की ओर खींचकर वह्निमण्डल में रोके और वहीं पर वायु को धारण करे ।

हस्ताभ्यां बन्धयेत् सम्यक्कर्णादिकरणानि च[७१] ।
अङ्गुष्ठाभ्यामुभे श्रोत्रे तर्जनीभ्यां च चक्षुषी[७२] ।।३७।।
नासापुटौ मध्यमाभ्यां यावच्छक्ति निरोधयेत्[७३] ।
अनेनोत्पद्यते नादः शुद्धस्फटिक सन्निभः[७४] ।।३८।।

(हस्ताभ्यां कर्णादि करणानि सम्यक् बन्धयेत् अङ्गुष्ठाभ्यां च उभे श्रोत्रे तर्जनीभ्यां च चक्षुषी मध्यमाभ्यां नासापुटौ च यावत् शक्तिः निरोधयेत् । अनेन स्फटिकसन्निभः शुद्धः नादः उत्पद्यते ।)

दोनों हाथों से कान आदि इन्द्रियों को बंद करें । दोनों अंगूठों से दोनों कान, दोनों तर्जनी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

से दोनों आँखें और दोनों मध्यमा से दोनों नासापुट को यथाशक्ति बंद करके रखें, इससे स्फटिक मणि के समान स्वच्छ नाद का आविर्भाव होता है ।

ब्रह्मरन्ध्रे सुषुम्णाया मृणालान्तरसूत्रवत्[७५] ।
आमूर्धो वर्तते नादो वीणादण्डवदुत्थितः[७६] ।।३९।।

(सुषुम्णायाः ब्रह्मरन्ध्रे मृणाल-अन्तर-सूत्रवत् वीणा दण्डवत् आमूर्धो उत्थितः नादः वर्तते ।)

सुषुम्ना के ब्रह्मद्वार में कमलनाल के मध्यतन्तु के सदृश वीणादण्ड के समान मस्तक तक उठा हुआ नाद है।

शङ्खध्वनिनिभश्चादौ मध्ये मेघध्वनिर्यथा[७७] ।
व्योमरंध्रगते वायौ मनसा च सहेन्द्रियैः[७८] ।
ब्रह्मरन्ध्रगते नादो गिरिप्रस्रवणस्तथा[७९] ।।४०।।

(आदौ शङ्खध्वनिनिभः मध्ये मेघध्वनिः च यथा इन्द्रियैः सह मनसा च वायौ व्योमरन्ध्रगते तथा ब्रह्मरन्ध्रगतः गिरिप्रस्रवण (वत्) नादः ।)

प्रारम्भ में शङ्खध्वनि के समान, मध्य में मेघध्वनि के समान, फिर इन्द्रियों के साथ मनोयुक्त वायु जब सुषुम्ना में प्रविष्ट होता है, तब ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचकर पहाड़ से गिरते हुए झरने के समान वह नाद उत्पन्न होता है।

तदानन्दी भवेद्देही वायुस्तेन जितो भवेत्[८०] ।
योगिनस्त्वपरेह्यत्र वदन्ति समबुद्धयः[८१] ।।४१।।

(तदा तेन वायुः जितः भवेत् देही आनन्दी भवेत् अपरे समबुद्धयः योगिनः तु अत्र हि वदन्ति ।)

तब उससे वायु वश में आ जाता है और योगी आनन्द को प्राप्त करता है । कुछ दूसरे समबुद्धि योगी यहाँ ऐसा कहते हैं ।

प्राणायामपराः पूता रेचपूरकवर्जिताः[८२] ।
दक्षिणेतरगुल्फेन सीवनीं पिडयेच्छिराम्[८३] ।।४२।।

अधस्तादण्डयोः सूक्ष्मां सव्योपरि च दक्षिणम्[८४] ।
जङ्घोर्वोरन्तरे तत्र निश्छिद्रं बन्धयेद्दृढम्[८५] ।।४३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(रेचपूरकवर्जिताः प्राणायामपराः पूताः दक्षिण-इतरगुल्फेन अण्डयोः अधस्तात् सीवनीं सूक्ष्मां शिरां पीडयेत् च सव्य उपरि दक्षिणं तत्र (स्थाप्य) जङ्घा-ऊरु अन्तरे दृढं निश्छिद्रं बन्धयेत् ।)

रेचक-पूरक के बिना प्राणायाम के अभ्यास से पवित्र होकर बाएँ टखने से अण्डकोश के नीचे सीवनी के सूक्ष्म नस को दबाकर रखें । अब बाएँ टखने के ऊपर दाहिने टखने को रखकर जांघ और उरु के बीच को दृढ़ता से सटाकर छिद्ररहित आसन बांधें।

(**टिप्पणी-** यहाँ पर वसिष्ठ ने आसन करने की विधिमात्र बताई है, परन्तु उसका कोई विशेष नामोल्लेख यहाँ पर नहीं किया है । इसी पुस्तक के प्रथम अध्याय के ६६ वें और ६७ वें श्लोक से पता चलता है कि यह स्वस्तिक आसन से भिन्न नहीं है ।)

समग्रीवशिरः स्कन्धः समपृष्ठः समोदरः[८६] **।**
नेत्राभ्यां दक्षिणं गुल्फं लोकयेदुपरिस्थितम्[८७] **।।४४।।**

(सम-ग्रीवः-शिरः-स्कन्धः समपृष्ठः सम-उदरः नेत्राभ्यां उपरि स्थितं दक्षिणं गुल्फं लोकयेत् ।)

गर्दन, मस्तक, स्कन्ध, पीठ और पेट को सीधी अवस्था में रखें और दोनों आँखों से ऊपर में रखे हुए दाहिने टखने को देखें।

भावयन् मनसा सार्धं व्याहरन् प्रणवाक्षरम्[८८] **।**
आसनेऽनन्यधीरास्ते रहस्ये विजितेन्द्रियः[८९] **।।४५।।**

(रहस्ये, आसने (स्थितः) विजित-इन्द्रियः ते अनन्यधीराः मनसा सार्धं भावयन् प्रणव अक्षरं व्याहरन् ।)

एकान्त में आसन पर बैठकर जितेन्द्रिय योगी अत्यन्त धीरता से मन ही मन में ओंकार का उच्चारण करे ।

आयुर्विघातकृत् प्राणस्त्वनेनाग्निकुलं गतः[९०] **।**
वायुस्तिष्ठति तत्रैव वह्निना सह निश्चलः[९१] **।।४६।।**

(अनेन आयुः विघातकृत् प्राणः तु अग्निकुलं गतः तत्र एव वायुः वह्निना सह निश्चलः तिष्ठति ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इससे आयु का विघातक प्राण (अपान) वायु अग्निमण्डल में पहुँचकर वहीं अग्नि के साथ स्थिर हो जाता है।

धूमध्वजजयं यावन्नान्यधीरेवमभ्यसेत्[९२] ।
स्वाहाप्रियालयात् प्राणं शनैरारोपयेत्ततः[९३] ।।४७।।

(यावत् धूम-ध्वज-जयं न (तावत्) अन्यधीः एवं अभ्यसेत्, ततः स्वाहाप्रियालयात् शनैः प्राणं आरोपयेत् ।)

जबतक अग्नि वश में न हो तब तक अस्थिर चित्त वाले इस प्रकार से अभ्यास करें। तब उस प्राण को धीरे-धीरे वह्निमण्डल से ऊपर ले जाएँ ।

नेत्राभ्यां लोकयन्नाभिं मनसा प्रणवं जपेत्[९४] ।
तिष्ठत्यस्मिन् जगत्प्राणः कन्दनाभेरधस्तथा[९५] ।।४८।।

(तथा नेत्राभ्यां नाभिं लोकयन् मनसा प्रणवं जपेत्, (यतः) अस्मिन् कन्दनाभेः अधः जगत्प्राणः तिष्ठति ।)

और दोनों आँखों से नाभि को देखते हुए मन में ओंकार का जप करें । क्योंकि इस कन्दनाभि के नीचे जागतिक प्राण निवास करता है ।

यावन्मनोलयस्तस्मिंस्तावदेवं समभ्यसेत्[९६] ।
एतेन नाभिमध्यस्थो धारणेनैव मारुतः[९७] ।।४९।।

कुण्डलीं याति वह्निश्च दहत्यत्र न संशयः[९८] ।
ततः स वह्निना नागः प्रबोधं याति वायुना[९९] ।।५०।।

(यावत् तस्मिन् मनोलयः तावत् एवं समभ्यसेत्, एतेन नाभिमध्यस्थः धारणेन एव मारुतः कुण्डलीं याति, वह्निः च दहति, ततः स नागः वायुना वह्निना प्रबोधं याति, अत्र न संशयः ।)

जबतक उसमें मनोलय हो तबतक इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए। इस प्रकार नाभि के मध्य में धारण से ही वायु कुण्डली की ओर जाती है और अग्नि भी वहाँ प्रज्वलित होती है, तब वह नाग (कुण्डलिनी) वायुयुक्त वह्नि से जागृत होता है, इसमें सन्देह नहीं ।

प्रबोधे संस्फुरत्यस्मिन् वायुमारोपयेत्ततः[१००] ।
ब्रह्मरन्ध्रे सुषुम्णायां ध्यायन्नोङ्कारमक्षयम्[१०१] ।।५१।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(प्रबोधे संस्फुरति (सति) सुषुम्णायां ब्रह्मरन्ध्रे अक्षयं ओंकारं ध्यायन् अस्मिन् वायुं आरोपयेत् ।)

उस नाग के जगने और चलायमान होने पर सुषुम्ना के अन्दर ब्रह्मरन्ध्र में अक्षय ओंकार का ध्यान करते हुए, उसमें वायु को चढ़ाना चाहिए ।

शनैरारोपयेन्मूर्ध्नि साग्निं वायुमनन्यधीः[१०२] ।
धारयेद्व्योम्नि विप्रेन्द्र साग्निं प्राणं समाहितः[१०३] ।।५२।।

(समाहितः स अग्निं प्राणं व्योम्नि धारयेत्। विप्रेन्द्र, स अनन्यधीः (सन्) अग्निं वायु मूर्ध्नि शनैः आरोपयेत्।)

एकाग्रता से उस ज्योतिर्मय वायु को मस्तक में चढ़ाना चाहिए। हे विप्रेन्द्र, उस ज्योतिर्मय प्राण को सावधानी से ही मस्तकान्तर्गत आकाश में स्थिर करना चाहिए।

तेनैव पूरिते व्योम्नि साङ्गोपाङ्गकलेवरः[१०४] ।
सदाऽऽत्मा राजते तत्र यथा व्योम्नि दिवाकरः[१०५] ।।५३।।

(तेन एव पूरिते व्योम्नि साङ्ग-उपाङ्ग-कलेवर आत्मा सदा तत्र राजते यथा व्योम्नि दिवाकरः ।)

उस प्राण से ही परिपूर्ण मस्तकाकाश में सर्वाङ्गपूर्ण आत्मा सदा प्रकाशमान रहता है, जैसे आकाश में सूर्य ।

शरीरं विसिसृक्षुश्चेदेवं सम्यक् समाचरन्[१०६] ।
एकाक्षरपरं ब्रह्म ध्यायन् प्रणवमीश्वरम्[१०७] ।।५४।।

सम्भिद्य मनसा मूर्ध्नि ब्रह्मरन्ध्रं सवायुना[१०८] ।
प्राणमुन्मोचयेत् पश्चान्महाप्राणे खमध्यमे[१०९] ।।५५।।

(एवं सम्यक् समाचरन्, शरीरं चेत् विसिसृक्षुः, ईश्वरं एकाक्षरपरं प्रणवं ब्रह्म ध्यायन्, मनसा मूर्ध्नि ब्रह्मरन्ध्रं सवायुना सम्भिद्य, पश्चात्-ख-मध्यमे महाप्राणे प्राणम् उन्मोचयेत् ।)

इस प्रकार अच्छी तरह अभ्यास करते हुए यदि शरीर छोड़ने की इच्छा हो तो ईश्वररूप एकाक्षर ओंकार का ध्यान करते हुए, चित्त के द्वारा मस्तकाकाश में ब्रह्मरन्ध्र को वायु के साथ बेधकर सर्वत्र भरे हुए आकाशान्तर्गत महाप्राण में प्राण को छोड़ देना चाहिए ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

देहातीते जगत्प्राणे शून्ये नित्ये ध्रुवे पदे[११०]।
आकाशे परमानन्दे स्वात्मानं योजयेद्धिया[१११]।
ब्रह्मैवासौ भवेत् पुत्र न पुनर्जन्मभाग् भवेत्[११२]।।५६।।

(देह-अतीते, जगत्-प्राणे, शून्ये, नित्ये, ध्रुवे पदे, आकाशे, परम-आनन्दे, स्व-आत्मानं धिया योजयेत् । पुत्र, असौ ब्रह्म एव भवेत्, पुनः जन्मभाग् (च) न भवेत् ।

देह से अतिरिक्त विश्वरूपप्राण जो निरालम्ब, नित्य, ध्रुव, परमपद आकाश, परमानन्द स्वरूप है, उसमें अपनी आत्मा को बुद्धिपूर्वक लीन कर देना चाहिए। हे पुत्र, इससे वह ब्रह्मस्वरूप ही हो जाता है और पुनः जन्म ग्रहण नहीं करता है ।

उक्तान्येतानि चत्वारि योगाङ्गानि तपोधन[११३]।
प्रत्याहारादि चत्वारि शृणुष्वाभ्यन्तराणि च[११४]।।५७।।

(तपोधन! एतानि चत्वारि योगाङ्गानि उक्तानि, प्रत्याहारादि चत्वारि आभ्यन्तराणि च शृणुष्व ।)

हे तपोधन, इन चार योगाङ्गों का निरूपण किया गया। अब प्रत्याहार आदि चार आन्तरिक योगाङ्गों को सुनो ।

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु स्वभावतः[११५]।
बलादाहरणं तेषां प्रत्याहारः स उच्यते[११६]।।५८।।

(विषयेषु स्वभावतः विचरतां इन्द्रियाणां तेषां बलात् आहरणं, स प्रत्याहारः उच्यते।)

विषयों में स्वाभाविक रूप से विचरने वाले इन्द्रियों को उनसे बलपूर्वक पीछे लौटाना ही प्रत्याहार कहा गया है।

यद्यत् पश्यति तत् सर्वं पश्येदात्मवदात्मनि[११७]।
प्रत्याहारः स च प्रोक्तो योगविद्भिर्महात्मभिः[११८]।।५९।।

(यत् यत् पश्यति तत् सर्वम् आत्मवत् आत्मनि पश्येत्। स च महात्मभिः योगविद्भिः प्रत्याहारः प्रोक्तः।)

जो कुछ भी दिखाई देता है, उन सभी को आत्मा के समान आत्मा में ही देखे इसे महात्मा योगियों ने प्रत्याहार कहा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कर्माणि यानि नित्यानि विहितानि शरीरिणाम्[११९] ।
तेषामात्मन्यनुष्ठानं मनसा यद्बहिर्विना[१२०] ।
प्रत्याहारो भवेत् सोऽपि योगसाधनमुत्तमम्[१२१] ।।६०।।

(शरीरिणां यानि नित्यानि विहितानि कर्माणि तेषां बहिः बिना मनसा आत्मनि यत् अनुष्ठानं सः अपि योग-साधनम् उत्तमं प्रत्याहारः भवेत्।)

शरीरधारियों के लिए जो नित्य विहित कर्म है, उनका बाह्य (साधनों) के बिना मन से ही आत्मा में अनुष्ठान करना, वह योग का उत्तम साधन भी प्रत्याहार होता है ।

प्रत्याहारं प्रशंसन्ति संयुता योगिनः सदा[१२२] ।
अष्टादशसु यद्वायोर्मर्मस्थानेषु धारणम्[१२३] ।
स्थानात् स्थानात् समाकृष्य प्रत्याहारः स चोत्तमः[१२४] ।।६१।।

(संयुता योगिनः सदा प्रत्याहारं प्रशंसन्ति, (सः) अष्टादशसु मर्मस्थानेषु यत् वायोः धारणं (पुनः) स्थानात् स्थानात् समाकृष्य स च उत्तमः प्रत्याहारः ।)

अभ्यास में लगे हुए योगी सदा उस प्रत्याहार की प्रशंसा किया करते हैं, जिसमें अठारहों मर्मस्थानों में वायु को स्थिर करना, फिर एक-एक स्थान से उचित रीति से वायु को खींचना होता है, वही उत्तम प्रत्याहार है ।

(**टिप्पणी** - अगले तेरह श्लोकों के द्वारा वसिष्ठ ने १८ मर्मस्थानों तथा उनकी स्थिती का वर्णन अलग-अलग किया है ।)

पादाङ्गुष्ठौ च गुल्फौ च जङ्घामध्यौ तथैव च[१२५] ।
चित्योर्मूले च जानू च मध्ये चोरुद्वयस्य च[१२६] ।।६२।।

(पाद-अङ्गुष्ठौ च गुल्फौ च जङ्घामध्यौ तथा एव चित्योः मूले च जानू च उरुद्वयस्य मध्ये च ।)

पाँव के अँगूठे, दोनों टखने, जङ्घाओं के मध्य, दोनों चिति (घुटने का नीचे का भाग) के मूल, दोनों घुटने और ऊरुओं के मध्य -

पायुमूलं ततः पश्चान्मध्यदेहं च मेढ्रकम्[१२७] ।
नाभिं च हृदयं तस्य कण्ठकूपस्तथैव च[१२८] ।।६३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(वत्स, ततः पश्चात् पायुमूलं मध्यदेहं च मेढ्रकं च नाभि हृदयं च, तथा एव कण्ठकूपः च -)

हे पुत्र उस के बाद गुदा का मूल, देह मध्य, लिङ्ग, नाभि हृदय तथा कण्ठ कूप -

तालुमूलं च नासायाः मूलं चाक्ष्णोश्च मध्यमम्[१२९]।
भ्रुवोर्मध्यं ललाटं च मूर्धा च मुनिसत्तम[१३०]।
मर्मस्थानानि चैतानि मानं तेषां पृथक् शृणु[१३१]।।६४।।

(तालुमूलं च नासायाः मूलं च अक्ष्णोः मध्यमः च भ्रुवोः मध्यमं च ललाटं च मूर्धा च, एतानि मर्मस्थानानि, मुनिसत्तम, तेषां मानं च पृथक् शृणु ।)

तालुमूल, नासामूल, दोनों आँखों के मध्यबिन्दु, दोनों भौहों के मध्य, मस्तक और मूर्धा - पुत्र,ये मर्मस्थान कहलाते हैं । हे मुनिश्रेष्ठ अब उनका पृथक्-पृथक् प्रमाण सुनो ।

पादाङ्गुष्ठात्तु पादस्य पृथक् स्थानं न विद्यते[१३२]।
पादान्मानं तु गुल्फस्य सार्धाङ्गुलचतुष्टयम्[१३३]।।६५।।

(पादःअङ्गुष्ठात् तु पादस्य पृथक् स्थानं न विद्यते, पादात् गुल्फस्य मानं तु सार्ध-अङ्गुल-चतुष्टयम् (विद्यते)।)

पांव का अँगूठा और पांव इसके स्थान में कोई भेद नहीं है। पाँव (तलवा) से टखने का माप साढ़े चार अङ्गुल है।

गुल्फाज्जङ्घस्य मध्यं विज्ञेयं तु दशाङ्गुलम्[१३४]।
जङ्घामध्याच्चितेर्मूलं यत्तदेकादशाङ्गुलम्[१३५]।।६६।।

(गुल्फात् जङ्घस्य मध्यं तु दश अङ्गुलं विज्ञेयं, जङ्घा मध्यात् यत् चितेः मूलं तत् एकादश अङ्गुलम्।)

टखने से जँघा का मध्य दस अँगुल जानो जंघामध्य से चितिमूल तक ग्यारह अंगुल है।

चितिमूलान्मुनिश्रेष्ठ जानुं सार्धाङ्गुलद्वयम्[१३६]।
जानोर्नवाङ्गुलं प्राहुस्तूरुमध्यं मुनीश्वर[१३७]।।६७।।

(मुनिश्रेष्ठ, चितिमूलात् जानुं सार्ध-अङ्गुलद्वयम् । मुनीश्वरः जानोः नव अङ्गुलं तु उरुमध्यं प्राहुः ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हे मुनिश्रेष्ठ ! चितिमूल से जानु (घुटना) ढाई अंगुल और हे मुनीश्वर । जानु से ऊरुमध्य नौ अंगुल है ।

उरुमध्यात्तथा वत्स पायुमूलं नवाङ्गुलम्[१३८] ।
देहमध्यं तथा पायोर्मूलात् सार्धाङ्गुलद्वयम्[१३९] ।।६८।।

(तथा वत्स, उरुमध्यात् पायुमूलं नव-अङ्गुलम् तथा पायोः मूलात् देहमध्यं सार्ध-अङ्गुलद्वयम् ।)

हे वत्स, उरुमध्य से गुदामूल नौ अंगुल है और गुदामूल से देहमध्य ढाई अंगुल है।

देहमध्यात् पुनर्मेढ्रं तद्वत् सार्धाङ्गुलद्वयम्[१४०] ।
मेढ्रान्नाभिश्च विज्ञेया तथा सार्धदशाङ्गुलम्[१४१] ।।६९।।

(तत्-वत् पुनः देहमध्यात् मेढ्रं सार्ध-अङ्गुलद्व. तथा च मेढ्रात् नाभिः सार्ध दश-अङ्गुलं विज्ञेया।)

उसी प्रकार देहमध्य से लिंग ढाई अंगुल है और लिंग से नाभि साढे दस अंगुल जानो।

चतुर्दशाङ्गुलं नाभेर्हृन्मध्यं च द्विजोत्तम[१४२] ।
षडङ्गुलस्तु हृन्मध्यात् कण्ठकूपस्तथैव च[१४३] ।।७०।।

(द्विजोत्तम, नाभेः चतुर्दश-अङ्गुलं च हृत्-मध्यं, तथा एव च हृत्-मध्यात् कण्ठकूपः, तु षट्-अङ्गुलः ।)

हे द्विजोत्तम, नाभि से चौदह अंगुल हृदयमध्य है और उसी प्रकार हृदयमध्य से कण्ठकूप छः अंगुल है ।

कण्ठकूपात्तु जिह्वाया मूलं स्याच्चतुरङ्गुलम्[१४४] ।
नासामूलं तु जिह्वाया मुलात्तु चतुरङ्गुलम्[१४५] ।।७१।।

(कण्ठकूपात् जिह्वायाः मूलं तु चतुः-अङ्गुलं स्यात्, तु जिह्वाया मूलात् नासामूलं तु चतुः अङ्गुलम् ।)

कण्ठकूप से जिह्वा का मूल चार अंगुल है और जिह्वामूल से नासामूल चार अंगुल है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नेत्रस्थानं तु तन्मूलादर्धाङ्गुलमितीष्यते[१४६]।
तस्मादर्धाङ्गुलं विद्धि भ्रुवोरन्तरमात्मनः[१४७]।।७२।।

(तत् मूलात् नेत्रस्थानं तु अर्ध-अङ्गुलं इति इष्यते, तस्मात् आत्मनः भ्रुवोः अन्तरः अर्ध-अङ्गुलं विद्धि ।)

नासामूल से नेत्रस्थान आधा अंगुल है और नेत्रस्थान से अपनी भौंहो का मध्य आधा अंगुल जानो ।

ललाटं तु भ्रुवोर्मध्यादूर्ध्वं स्यादङ्गुलत्रयम्[१४८]।
ललाटाद्व्योमसंज्ञं तदङ्गुलत्रयमेव हि[१४९]।।७३।।

(भ्रूवोः मध्यात् तु ललाटं अङ्गुल-त्रयं ऊर्ध्वं स्यात्, ललाटात् हि व्योमसंज्ञं तत् अङ्गुलत्रयं एव ।)

भौंहों के मध्य से ऊपर ललाट तीन अङ्गुल है और ललाट से व्योम नामक स्थान (अर्थात् मस्तक) भी तीन ही अंगुल है ।

स्थानेष्वेतेषु मनसा वायुमारोप्य धारयेत्[१५०]।
स्थानात् स्थानात् समाकृष्य प्रत्याहारोत्तमो मतः[१५१]।।७४।।

(एतेषु स्थानेषु मनसा वायुम् आरोप्य स्थानात् स्थानात् समाकृष्य धारयेत्, (इति) उत्तमः प्रत्याहारः मतः ।)

इन स्थानों में मन से वायु को उठाकर, एक-एक स्थान से क्रमशः दूसरे स्थान में खींचकर स्थिर करते जाना उत्तम प्रत्याहार माना गया है ।

य एवं कुरुते विद्वान् योगमेति यथाविधि[१५२]।
स याति ब्रह्मसदनं पुनर्नावर्तते ततः[१५३]।।७५।।

(यथाविधिः यः विद्वान् एवं कुरुते सः योगं एति, ब्रह्म-सदनं याति, ततः पुनः न आवर्तते ।)

विधिपूर्वक जो विद्वान् इस प्रकार करता है, वह योग को प्राप्त करता है और वही ब्रह्मपद को जाताहै, तथा वहाँ से फिर नहीं लौटता है ।

✳ (इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे तृतीयोऽध्यायः)

इस प्रकार वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड का तृतीय अध्याय समाप्त हुआ।

CC-0 Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चतुर्थोऽध्यायः

वसिष्ठ उवाच[१] -

अथेदानीं प्रवक्ष्यामि धारणाः पञ्च तत्त्वतः[२]।
समाहितामना भूत्वा शृणु पुत्रक सुव्रत[३]।।१।।

(अथ इदानीं पञ्च धारणाः तत्त्वतः प्रवक्ष्यामि, सुव्रत पुत्रक, समाहितमना भूत्वा शृणु ।)

अब वसिष्ठजी बोले - मैं पांच धारणाओं का यथार्थ निरूपण करता हूँ। हे निष्ठावान पुत्र, एकाग्रचित्त होकर सुनो ।

यमादिगुणसंयुक्ते मनसः स्थितिरात्मनि[४]।
धारणा प्रोच्यते सद्भिर्योगशास्त्रार्थवेदिभिः[५]।।२।।

(योगशास्त्रार्थ वेदिभिः सद्भिः यम आदि गुण संयुक्ते मनसः आत्मनि स्थितिः धारणा प्रोच्यते।)

योगशास्त्र के ज्ञाता योगी लोग यम आदि गुणों से युक्त - अपने में मन की स्थिरता को धारणा कहते हैं।

हृदयेऽथान्तराकाशे यद्बाह्याकाशधारणम्[६]।
एषा च धारणा प्रोक्ता तथैवाकाशगो भवेत्[७]।।३।।

(हृदये अथ-अन्तर-आकाशे यत् बाह्य-आकाश-धारणं, एषा च धारणा प्रोक्ता, तथा एव आकाशगः भवेत्।)

हृदय में अन्तराकाश के साथ बाह्याकाश का चिन्तन करना, इसे ही धारणा कहा गया है और उससे योगी (आन्तरिक) आकाशविहारी बन सकता है।

भूमिरापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च[८]।
एतेषु पञ्च वर्णानां धारणं धारणा स्मृता[९]।।४।।

(भूमिः आपः तेजः तथा वायुः आकाशं एव च, तेषु पञ्च वर्णानां धारणं धारणा स्मृता।)

पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इनमें पाँच बीज वर्णों (ल,व,र,य,ह) का चिंतन करना धारणा कही गई है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तेष्वेव पञ्चदेवानां धारणं चापि धारणा[१०] ।।५।।

(तेषु एव पञ्चदेवानां धारणं च अपि धारणा।)

उनमें ही पांच देवताओं का चिन्तन करना भी धारणा कही गई है।

पादादि जानुपर्यन्तं पृथिवीस्थानमुच्यते[११]।
आजानोः पायुपर्यन्तमपां स्थानं प्रकीर्तितम्[१२]।
आपायोर्हृदयान्तं यद्वह्निस्थानं तदुच्यते[१३] ।।६।।

(पाद-आदि जानु-पर्यन्तं पृथिवी-स्थानं उच्यते। आजानोः पायु-पर्यन्तम् अपां स्थानं प्रकीर्तितम्। आपायोः यत् हृदय-अन्तं तत् वह्निस्थानम् उच्यते।)

पांव से जानु तक पृथ्वी का स्थान कहा गया है। जानु से गुदा तक जल का स्थान कहा गया है और गुदा से हृदय तक के स्थान को तेज-स्थान कहते हैं।

आहृन्मध्याद् भ्रुवोर्मध्यं यावद्वायुस्थलं स्मृतम्[१४]।
आभ्रूमध्यात्तु मूर्धान्तमाकाशमिति चोच्यते[१५] ।।७।।

(आहृत्-मध्यात् भ्रूवोः मध्यं यावत् वायुस्थलं स्मृतम्। आभ्रू-मध्यात् तु मूर्धा-अन्तम् आकाशम् इति च उच्यते।)

हृदय-मध्य से भौहों के मध्य तक वायु का स्थान कहा गया है, और भौहों के मध्य से कपालान्त तक आकाश का स्थान कहा गया है।

एतेषां पृथिवीस्थाने लकारं धारयेद् बुधः[१६]।
वकारं धारयेदप्सु रेफं वह्नौ च धारयेत्[१७]।
यकारं धारयेद्वायौ हकारं व्योम्नि धारयेत्[१८] ।।८।।

(बुधः एतेषां पृथिवीस्थाने लकारं धारयेत्, अप्सु वकारं धारयेत्, वह्नौ रेफं धारयेत्, वायौ यकारं धारयेत्, व्योम्नि च हकारं धारयेत्।)

इनमें से योगी पृथिवी स्थान पर 'लकार' की धारणा करे, जल के स्थान पर 'वकार' की धारणा करे, तथा तेज के स्थान पर 'रकार' की धारणा करे। वायु के स्थान में 'यकार' की धारणा करे और आकाश के स्थान में 'हकार' की धारणा करे।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पृथिव्यां धारयेद्विद्वान् ब्रह्माणं परमेष्ठिनम्[१९]।
विष्णुमप्स्वनले रुद्रं महत्तत्त्वं तु मारुते[२०]।
आकाशे धारयेद्देवमव्यक्तं जगदीश्वरम्[२१]।।९।।

(विद्वान (योगी) पृथिव्यां परमेष्ठिनं ब्रह्माणं धारयेत्, अप्सु विष्णुं, अनले रुद्रं, मारुते महत् तत्वं, एवं तु आकाशे अव्यक्तं जगदीश्वरं धारयेत् ।)

विद्वान् योगी पृथिवी के स्थान में पितामह ब्रह्मदेवता की धारणा करे। जल के स्थान में विष्णु देवता की, अग्नि स्थान में रुद्र की, वायु के स्थान में महत्तत्त्व की तथा आकाश के स्थान में अव्यक्त परमात्मा की धारणा करे ।

नीत्वा वायुं पृथिव्यां तु वर्णदेवसमन्वितम्[२२]।
धारयेत् पञ्च घटिकाः पृथिवीजयमाप्नुयात्[२३]।।१०।।

(वर्णदेवसमन्वितं वायुं तु पृथिव्यां नीत्वा पञ्च घटिका धारयेत्, (एवं) पृथिवी-जयम् आप्नुयात् ।)

लकार और ब्रह्मदेवता के साथ प्राणवायु को पृथिवी स्थान में ले जाकर पंच घटिका (दो घण्टे) तक धारण करे । इससे पृथ्वीतत्त्व पर विजय प्राप्त होती है ।

यथोक्तवर्णदेवेन संयुक्तं वायुमप्सु च[२४]।
धारयेत् पञ्चघटिकाः सर्वरोगैः प्रमुच्यते[२५]।।११।।

(यथा-उक्त-वर्ण-देवेन संयुक्तं वायुम् अप्सु च पञ्चघटिकाः धारयेत्, सर्वरोगैः प्रमुच्यते।)

(यदि) उपर्युक्त कहे गए वर्णों और देवताओं के क्रम के साथ वायु का जल तत्त्व में पंच घटिका (दो घण्टे) तक धारणा करे तो इससे सभी रोगों से छुटकारा होता है ।

पूर्ववद्धारणाद्वह्नौ वह्निनाऽसौ न दह्यते[२६]।।१२।।

(पूर्ववत् वह्नौ धारणात् असौ वह्निना न दह्यते ।)

पूर्ववत् तेज की धारणा करने से अग्नि से नहीं जलता है ।

मरुतां मरुतां स्थाने वर्णदेवसमन्वितम्[२७]।
धारयेत् पञ्चघटिका वायुवद्व्योमगो भवेत्[२८]।।१३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(मरुतां वर्णदेवसमन्वितं मरुतां स्थाने पञ्चघटिका धारयेत्, वायुवत् व्योमगः भवेत् ।)

वायु को वर्ण और देवताओं के साथ वायुस्थान में पंच घटिका तक धारण करने से वायु के समान (आन्तरिक) आकाशविहारी होता है ।

आकाशे वायुमारोप्य वर्णदेवसमन्वितम्[२९]।
धारयेत् पञ्टघटिका जीवन्मुक्तो भविष्यति[३०]।
अल्पमूत्रपुरीषः स्यादर्वागेव च वत्सरात्[३१]।।१४।।

(वर्णदेवसमन्वितं वायुम् आरोप्य आकाशे पञ्चघटिका धारयेत्, जीवन्मुक्तः भविष्यति, वत्सरात् अर्वाक् एव अल्पमूत्र-पुरीषः च स्यात् ।)

वर्ण और देवता के साथ वायु को आकाश-स्थान में आरोपित कर पंच घटिका तक धारणा करने से योगी जीवन्मुक्त होगा और इससे एक वर्ष के अन्दर ही मल-मूत्र की अल्पता होती है ।

पञ्चमी धारणेयं स्यात् सर्वदुःखविनाशिनी।।१५।।

(इयं पञ्चमी धारणा सर्वदुःखविनाशिनी स्यात्।)

यह पाँचवी धारणा सभी दुःखों को दूर करनेवाली है।

आसनाद्वाहनादन्यैर्न भेत्तुं शक्य एव सः[३२]।
धारणं यदिदं वायोः स्थानेष्वेतेषु पञ्चसु[३३]।।१६।।

(एतेषु पञ्चसु स्थानेषु यत् वायोः धारणं, एव इदं सः आसनात् वाहनात् अन्यैः भेत्तुं न शक्यः।)

इन पाँच स्थानों में प्राणवायु का धारण करने से योगी अपने आसन, वाहन आदि से किसी के द्वारा चालित नहीं किया जा सकता।

ध्यानं सम्प्रति वक्ष्यामि श्रृणु शक्ते समाहितः[३४]।
ध्यानमेव हि जन्तूनां कारणं बन्धमोक्षयोः[३५]।।१७।।

(सम्प्रति ध्यानं वक्ष्यामि, शक्ते, समाहितः श्रृणु, ध्यानम् एव हि जन्तूनां बन्धमोक्षयोः कारणम्।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अब ध्यान के विषय में कहता हूँ। हे शक्ते, एकाग्रचित्त होकर सुनो। ध्यान (चिन्तन) ही प्राणियों के बन्धन और मोक्ष का कारण हैं।

मर्मस्थानानि नाडीनां संस्थानं च पृथक् पृथक्[३६]।
वायूनां स्थानकर्माणि विदित्वा ध्यानमाचरेत्[३७]।।१८।।

(मर्मस्थानानि नाडीनां संस्थानं वायूनां स्थानकर्माणि च पृथक् पृथक् विदित्वा ध्यानम् आचरेत्।)

मर्मस्थानों, नाडियों के संस्थानों (विस्तारों) तथा वायु के स्थानों और कार्यो को पृथक् पृथक् जानकर ध्यान का अभ्यास करना चाहिए।

ध्यानमात्मस्वरूपस्य वेदनं मनसा भवेत्[३८]।
तदेव द्विविधं प्रोक्तं सगुणं निर्गुणं तथा[३९]।।१९।।

(आत्मस्वरूपस्य मनसा वेदनं एव ध्यानं भवेत्। तत् द्विविधं प्रोक्तं सगुणं तथा निर्गुणम्।)

निज-स्वरूप को तत्त्वतः मन से चिन्तन करना ही ध्यान होता है। वह ध्यान दो प्रकार का कहा गया है - सगुण तथा निर्गुण।

सगुणं पञ्चधा प्रोक्तमेकमेव हि निर्गुणम्[४०]।।२०।।

(सगुणं पञ्चधा प्रोक्तं निर्गुणं हि एकम् एव।)

सगुण पांच प्रकार का कहा गया है और निर्गुण एक ही प्रकार का।

एकं ज्योतिर्मयं शुद्धं सर्वगं व्योमवद् दृढम्[४१]।
अत्यच्छममलं नित्यमादिमध्यान्तवर्जितम्[४२]।।२१।।

(एकं ज्योतिर्मयं शुद्धं व्योमवत्, सर्वगं, दृढं, अति-अच्छं, अमलं, नित्यं आदि-मध्य-अन्त वर्जितम्-)

एकतत्त्व, ज्योतिर्मय, शुद्ध, आकाश के समान सर्वगामी, स्थिर, अत्यन्त स्वच्छ निर्मल, नित्य, आदि-मध्य और अन्त से रहित -

स्थूलं सूक्ष्ममनाकाशमसंस्पृष्टमचाक्षुषम्[४३]।
न रसं न च गन्धाख्यमप्रमेयमनौपमम्[४४]।।२२।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(स्थूलं सूक्ष्मम् अनाकाशम् असंस्पृष्टम् अचाक्षुषं न रसं न गन्धाख्यं च अप्रमेयम् अनौपमम् ।)

विराट, सूक्ष्म, आकाश (शब्द) स्पर्श, रूप, रस, गन्ध से परे, ज्ञान एवं उपमा से विलक्षण -

आनन्दमजरं नित्यं सदसत् सर्वकारणम्[४५]।
सर्वाधारं जगद्रूपममूर्तमजमव्ययम्[४६]।।२३।।

(आनन्दम्, अजरं, नित्यं, सत्-असत् सर्वकारणं, सर्व-आधारं, जगत् रूपम्, अमूर्त्तम्, अजम्, अव्ययम्।)

आनन्द, अजर, नित्य, सत् एवं असत् आदि सभी का मूलकारण, सभी का मूल आधार जगत्स्वरूप, अमूर्त, अज, अव्यय -

अदृश्यं दृश्यमध्यस्थं बहिःस्थं सर्वतोमुखम्[४७]।
सर्वदृक् सर्वतः पादं सर्वस्पृक् सर्वतः शिरः[४८]।।२४।।

(अदृश्यं दृश्यमध्यस्थं-बहिःस्थं, सर्वतोमुखं सर्वतः सर्वदृक्, पादं, सर्वतः शिरः, सर्व-स्पृक्।)

अदृश्य, प्रत्येक के भीतर-बाहर रहनेवाला, सभी जगह उपस्थित रहनेवाला, सर्वसाक्षी, अनन्त पांवोंवाला, अनन्त शिरवाला, अनन्त स्पर्शवाला -

ब्रह्म ब्रह्ममयोऽहं स्यामितियद्वेदनं भवेत्[४९]।
तदेव निर्गुणं ध्यानं सगुणं च ब्रवीमि ते[५०]।।२५।।

(ब्रह्म, ब्रह्ममय - अहं स्याम, इति यत् वेदनं भवेत् तत् एव निर्गुणं ध्यानं. सगुणं च ते ब्रवीमि।)

ऐसा ब्रह्म के समान मैं ब्रह्म बनूं। ऐसी संवेदना होना ही निर्गुण ध्यान है। अब मैं सगुण ध्यान का वर्णन करता हूँ।

हृत्पद्मेष्टदलोपेते कन्दमध्यात् समुत्थिते[५१]।
द्वादशाङ्गुलनालेऽस्मिंश्चतुरङ्गुलवन्मुखे[५२]।
CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection
प्राणायामैर्विकसिते केसरान्वितकर्णिके[५३]।।२६।।

(कन्दमध्यात् समुत्थिते प्राणायामैः विकसिते द्वादश अङ्गुल नाले चतुरंगुलवत् अष्टदलोपेते केसरान्वितकर्णिके हृत्पद्मे अस्मिन् मुखे -)

कन्द के मध्य से उठा हुआ, प्राणायाम से विकसित जो बारह अंगुल नालवाला, चार अंगुल विस्तारवाला, अष्टदलयुक्त तथा केसरयुक्त कर्णिकावाला हृदयकमल है, उसमें -

वासुदेवं जगन्नाथं नारायणमनामयम्[५४]।
चतुर्भुजमुदाराङ्गं शङ्खचक्रगदाधरम्[५५]।।२७।।

(वासुदेवं, जगन्नाथं, नारायणम्, अनामयं, चतुर्भुजम्, उदार-अङ्गं, शङ्खचक्र-गदाधरम्।)

वासुदेव, जगन्नाथ, नारायण, विशुद्ध, चतुर्भुज, प्रशस्तअङ्गवाला, शङ्ख-चक्र-गदाधारी-

किरीटकेयूरधरं पद्मपत्रनिभेक्षणम्[५६]।
श्रीवत्सवक्षसं विष्णुं पूर्णचन्द्रनिभाननम्[५७]।।२८।।

(किरीट-केयूरं-धरं, पद्मपत्रनिभ-इक्षणं, श्रीवत्सवक्षसं; पूर्णचन्द्र-निभ आननं, विष्णुम्-)

किरीट तथा केयूरधारी, कमल के पत्ते के समान नेत्रवाले, श्रीवत्स से चिह्नित वक्षवाले, पूर्णचन्द्र के समान मुखवाले, विष्णु -

पद्मोदरदलाभौष्ठं सुप्रसन्नं शुचिस्मितम्[५८]।
शुद्धस्फटिकसंकाशं पीतवाससमच्युतम्[५९]।।२९।।

(पद्म-उदर-दल-आभा-ओष्ठं, सुप्रसन्नं, शुद्धस्फटिकसंकाशं, शुचि-स्मितं, पीतवाससम्, अच्युतम्-)

कमलदल के समान अरुण ओष्ठवाला, अत्यन्त प्रसन्न, निर्मल स्फटिक के समान कान्तिमान्, पवित्र मुस्कुराहट वाले, पीतवस्त्रधारी, अच्युत -

पद्मच्छविपदद्वन्द्वं परमात्मानमीश्वरम्[६०]।।
प्रभाभिर्भासयद्रूपं परितः पुरुषोत्तमम्[६१]।।३०।।

(पद्मच्छवि-पद-द्वन्द्वं परमात्मानं परितः प्रभाभिः भासयत् रूपं ईश्वरं पुरुषोत्तमम्-)

कमल की कान्ति के सदृश चरणवाले, परमात्मा, चारों तरफ कान्ति से भासमान रूपवाला ईश्वर, महापुरुष -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मनसाऽऽलोक्य देवेशं सर्वभूतहृदिस्थितम्[६२]।
सोऽहमात्मनि विज्ञानं ध्यानं तत् सगुणं स्मृतम्[६३]।।३१।।

(मनसा आलोक्य सर्वभूत-हृदिस्थितं देवेशं स अहं (इति) आत्मनि विज्ञानं, तत् सगुणं ध्यानं स्मृतम्।)

ऐसा मन में चिन्तन कर, सब प्राणियों के हृदय में स्थित वह देवेश मैं ही हूँ, ऐसे विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने को सगुण ध्यान कहते हैं ।

हृत्सरोरुहमध्येऽस्मिन् प्रकृत्यात्मककर्णिके[६४]।
अष्टैश्वर्यदलोपेते विद्याकेसरसंयुते[६५]।।३२।।

(प्रकृति-आत्मक-कर्णिके, अष्ट-ऐश्वर्य-दलोपेते, विद्याकेसर-संयुते, अस्मिन् हृत्सरोरुहमध्ये-)

मूलप्रकृतिरूपी कर्णिकावाले, आठ ऐश्वर्यरूपी दलवाले, अध्यात्म-विद्यारूपी केसरवाले, हृदयकमल के मध्य में -

ज्ञाननाले महत्कन्दे प्राणायामप्रबोधिते[६६]।
विश्वार्चिषं महावह्निं ज्वलन्तं विश्वतोमुखम्[६७]।।३३।।

(ज्ञाननाले, महत्कन्दे, प्राणायाम प्रबोधिते विश्वार्चिषं, महावह्निं विश्वतोमुखं ज्वलन्तम्-)

ज्ञानरूपी नालवाले, महत्तत्त्वरूपी कन्दवाले, प्राणायाम के अभ्यास से प्रबोधित अखिल ज्योतिःस्वरूप, महातेजस्वी, सर्वत्र प्रकाशमान् -

वैश्वानरं जगद्योनिं शिखातन्विनमीश्वरम्[६८]।
तापयन्तं स्वकं देहमापादतलमस्तकम्[६९]।।३४।।

(वैश्वानरं जगत्-योनिं शिखातन्विनम् आपादतलमस्तकं स्वकं देहं तापयन्तम् ईश्वरं -)

आन्तरिक अग्निस्वरूप जगत् का कारण, ज्योतिशिखारूप पांव से मस्तक तक अपने शरीर को देदीप्यमान करने वाले ईश्वर की -

निर्वातदीपवत्तस्मिन् दीपितं हव्यवाहनम्[७०]।
दृष्ट्वा तस्य शिखामध्ये परमात्मानमीश्वरम्[७१]।।३५।।

(निर्वात-दीपवत् तस्मिन् हव्यवाहनं दीपितं दृष्ट्वा तस्य शिखामध्ये परमात्मानम् ईश्वरं)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

निर्वात दीप के समान प्रकाशित अग्नि की कल्पना कर, उसकी शिखा के मध्य में परमात्मा, परमेश्वर को -

नीलतोयदमध्यस्थं विद्युल्लेखेव भास्वरम्[७२]।
नीवारशूकवद्रूपं पीताभं सर्वकारणम्[७३]।।३६।।

(नीलतोयदमध्यस्थं, विद्युत्-लेखा-इव भास्वरं, नीवारशूकवत् पीताभं रूपं, सर्वकारणम्)

नीलमेघ के अन्दर चमकती हुई बिजली के समान, नीवारतन्तु के समान पीतवर्ण, सभी के मूल -

ज्ञात्वा वैश्वानरं देवं सोऽहमेवेति या मतिः[७४]।
सगुणेषूत्तमं ह्येतत् ध्यानं योगविदो विदुः[७५]।।३७।।

(वैश्वानरं देवं ज्ञात्वा सः अहं एव इति या मतिः, एतत् हि सगुणेषु उत्तमं ध्यानं योगविदः विदुः-)

वह अग्निदेव मैं ही हूँ - ऐसी निष्ठा करने को योगी लोग सगुण ध्यानों में उत्तम ध्यान कहते हैं।

वैश्वानरत्वं सम्प्राप्य मुक्तिं तेनैव गच्छति[७६]।।३८।।

(वैश्वानरत्वं सम्प्राप्य तेन एव मुक्तिं गच्छति।)

उस अग्निदेवत्व स्वरूप को प्राप्त कर (योगी) उसी से मुक्ति मार्ग को जाता है।

भ्रुवोर्मध्ये तथाऽऽत्मानं भारूपं सर्वकारणम्[७७]।
स्थाणुवन्मूर्धपर्यन्तं मध्यदेहात् समुत्थितम्[७८]।।३९।।

(तथा भ्रुवोः मध्ये भारूपं मध्यदेहात् मूर्धपर्यन्तं स्थाणुवत् समुत्थितं सर्वकारणम् आत्मानम् -)

उसी प्रकार, भौहों के मध्य में कान्ति-स्वरूप, देहमध्य से मस्तक तक स्थाणु (स्तम्भ) के समान उठा हुआ, सभी का मूल-आत्मा को-

जगत्कारणमव्यक्तं ज्वलन्तममितौजसम्[७९]।
मनसालोक्य सोऽहं स्याममप्येतद्ध्यानमुत्तमम्[८०]।।४०।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(जगत्कारणम् अमित-ओजसं ज्वलन्तम् अव्यक्तं मनसा आलोक्य स अहं स्याम्, एतत्

अपि उत्तमं ध्यानम्।)

जगत्कारण, महाप्रतापी, देदीप्यमान, अव्यक्त, (आत्मा को) मन से कल्पना कर - मैं वही हूँ, इस प्रकार का ध्यान भी उत्तम है।

अथवाऽष्टदलोपेते कर्णिकाकेसरान्विते[८१]।
उन्निद्रहृदयाम्भोजे सोममण्डलमध्यगे[८२]।।४१।।

(अथवा सोममण्डलमध्यगे कर्णिका-केसर-अन्विते अष्टदलोपेते उन्निद्र हृदयाम्भोजे-)

अथवा, सोममण्डल के मध्य में कर्णिका तथा केसर से युक्त आठ दलवाले जाग्रत हृदयकमल में -

स्वात्मानमर्भकाकारं भोक्तृरूपिणमव्ययम्[८३]।
सुधारसं विमुञ्चद्भिः शशिरश्मिभिरावृतम्[८४]।।४२।।

(स्वात्मानम् अर्भक-आकारं अव्ययं भोक्तृरूपिणं, सुधारसं विमुञ्चद्भिः शशि-रश्मिभिः आवृतम्-)

अपने आप को बालरूप अव्यय भोक्तारूप से और अमृत की वर्षा करती हुई चन्द्रकिरणों से घिरी हुई-

षोडशच्छन्दसंयुक्तं शिरःपद्मादधोमुखात्[८५]।
निर्गतामृतधाराभिः सहस्राभिः समन्ततः[८६]।।४३।।

(षोडश-छन्द-संयुक्तं अधोमुखात् शिरः-पद्मात् समन्ततः सहस्राभिः निर्गत-अमृतधाराभिः-)

सोलह छन्दवाले अधोमुख शिरःकमल से चारों तरफ बरसती हुई हजारों अमृत की धारा से -

प्लावितं पुरुषं दृष्ट्वा चिन्तयित्वा समाहितः[८७]।
तेनामृतेन सम्पूर्णः साङ्गोपाङ्गकलेवरम्[८८]।।४४।।

(प्लावितं पुरुषं दृष्ट्वा समाहितः चिन्तयित्वा तेन अमृतेन सम्पूर्णः अङ्ग-उप-अङ्ग-कलेवरम्-)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

प्लावित पुरुष की कल्पना कर, एकाग्रचित्त से चिन्तन कर, उस अमृत से परिपूर्ण

साङ्गोपाङ्ग शरीरवाला -

अहमेव परं ब्रह्म परमात्माऽहमव्ययः[८९]।
एवं यद्वेदनं तच्च सगुणं ध्यानमुच्यते[९०]।।४५।।

(अहम् अव्ययः परमात्मा अहम् एव परंब्रह्म, एवं यत् वेदनं तत् च सगुणं ध्यानं उच्यते ।)

मैं, अव्यय परमात्मा और मैं ही परबह्म हूँ, इस प्रकार की निष्ठा को भी सगुण ध्यान कहते हैं ।

एवं ध्यानामृतं कुर्वन् षण्मासान्मृत्युजिद्‌भवेत्[९१]।
वत्सरान्मुक्त एव स्याज्जीवन्नेव न संशयः[९२]।।४६।।

(एवम् अमृतं ध्यानं कुर्वन् षट्-मासात् मृत्युजित् भवेत्। एवं वत्सरात् जीवन् एव मुक्तः स्यात् (इति) न संशयः ।)

इस प्रकार अमृतरूप ध्यान को करते हुए योगी छः मास में मृत्यु को जीतनेवाला होता है और एक वर्ष में जीवन-धारण करते हुए भी वह मुक्त है, इसमें संशय नहीं ।

जीवन्मुक्तस्य न क्वापि दुःखावाप्तिः कदाचन[९३]।
किं पुनर्नित्यमुक्तस्य तस्मान्मुक्तिर्हि दुर्लभा[९४]।।४७।।

(जीवन्-मुक्तस्य कदाचन न क्व अपि दुःख-अवाप्तिः किं पुनः नित्यमुक्तस्य, तस्मात् हि मुक्तिः दुर्लभा ।)

जीवन्मुक्त को कभी भी, कहीं से भी दुःख की प्राप्ति नहीं होती है । फिर जो नित्यमुक्त है-उसके लिए कहना ही क्या। इसीलिए मुक्ति को दुर्लभ कहा गया है ।

तस्मात्त्वमपि विप्रेन्द्र मुक्तये कुरु मद्वचः[९५]।
ज्ञानेन सह कर्माणि फलशून्यानि नित्यशः[९६]।।४८।।

(तस्मात् विप्रेन्द्र! त्वम् अपि मुक्तये मत्-वचः ज्ञानेन सह फल-शून्यानि कर्माणि नित्यशः कुरु ।)

इसलिए, हे विप्रेन्द्र, तुम भी मुक्ति के लिए मेरे कहे अनुसार ज्ञान के साथ निष्काम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कर्मानुष्ठानों को सदैव करो।

अथवा मण्डले पश्येदादित्यस्य महाद्युतेः[९७]।
आत्मानं सर्वजगतः पुरुषं हेमरूपिणम्[९८]।।४९।।

(अथवा महाद्युतेः आदित्यस्य मण्डले पश्येत्, सर्वजगतः आत्मानं हेमरूपिणं पुरुषं -)

अथवा देदीप्यमान, सूर्यमण्डल में ध्यान से देखें - सम्पूर्ण जगत् के आत्मारूप, सुवर्ण-रूप पुरुष को -

हिरण्यश्मश्रुकेशं च हिरण्मयनखं हरिम्[९९]।
कल्पान्तानलवद्वर्णं सृष्टिस्थित्यन्तकारणम्[१००]।५०।।

(हिरम्यश्मश्रुकेशं हिरण्मय-नखं च कल्पान्त-अनलवत्-वर्णं सृष्टि-स्थिति-अन्तकारणं हरिम्-)

सुवर्ण-रूप दाढ़ी और केशवाले, सुवर्ण नखवाले, कल्पान्त (दृश्य जगत् के लय का समय) के अग्नि से समान वर्णवाले, सर्जन पालन और संहरण के कारण हरि को -

पद्मासनस्थितं सौम्यं प्रबुद्धाब्जनिभाननम्[१०१]।
पद्मोदरदलाभाक्षं सर्वलोकाभयप्रदम्[१०२]।।५१।।

(पद्मासनस्थितं सौम्यं प्रबुद्ध-अब्ज-निभ-आननं पद्म-उदर-दल आभा अक्षं सर्वलोक-अभयप्रदम्-)

पद्मासन में स्थित, सौम्य, जाग्रत कमल के समान मुखवाले, कमलमध्य के आभा के समान आँखवाले, सभी प्राणियों को अभय देने वाले -

विजानन्तं सदा सर्वानुन्नयन्तं च धार्मिकान्[१०३]।
सर्वरत्नसमाकीर्णं किरीटाद्यैर्विभूषितम्।।५२।।

(सदा सर्वान् विजानन्तं धार्मिकान् उन्नयन्तं च सर्वरत्न-समाकीर्णं किरीट-आद्यैः विभूषितम् -)

सदैव सभी वस्तुओं को जानने वाले, धार्मिकों को उठाने वाले, सभी रत्नों से व्याप्त, मुकुट आदि से विभूषित-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भासयन्तं जगत् सर्वं दृष्ट्वा लोकैकसाक्षिणम्[१०४] ।
सोऽहमात्मेति या बुद्धिः सा च ध्याने प्रशस्यते[१०५] ।।५३।।

(सर्वं जगत् भासयन्तं लोकैकसाक्षिणं दृष्ट्वा सः आत्मा अहम् इति या बुद्धिः सा च ध्याने प्रशस्यते ।)

सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करनेवाले-ऐसे एकमात्र लोकसाक्षी को मन से देखकर-मैं वही हूँ ऐसी निष्ठा को ही ध्यान में प्रशस्त माना गया है ।

ध्यानमेव हि मोक्षस्य महामार्गस्तपोधन[१०६] ।।५४।।

(तपोधन, ध्यानम् एव हि मोक्षस्य महामार्गः ।)

हे तपोधन, ध्यान ही मोक्ष के लिए राजपथ है ।

ध्यानेनानेन सौरेण मुक्तिं यान्तीह सूरयः[१०७] ।
तस्मात् त्वमपि विप्रेन्द्र ध्यानमेव समाचर[१०८] ।।५५।।

(अनेन सौरेण ध्यानेन सूरयः इह मुक्तिं यान्ति । तस्मात् विप्रेन्द्र, त्वम् अपि ध्यानम् एव समाचर ।)

इसी सूर्यात्मक ध्यान से विद्वान् लोग इस संसार से मोक्षमार्ग को जाते हैं। इसीलिए हे विप्रेन्द्र, तुम भी ध्यान का ही आचरण करो ।

अन्यान्यपि बहून्याहुर्ध्यानानि मुनिसत्तम[१०९] ।
मुख्यान्येतानि चैतेभ्यो जघन्यानीतराणि च[११०] ।।५६।।

(मुनिसत्तम, अन्यानि अपि बहूनि ध्यानानि आहुः, एतेभ्यो च एतानि मुख्यानि, इतराणि च जघन्यानि ।)

हे मुनिश्रेष्ठ, और भी अनेक प्रकार के ध्यान कहे गए हैं, किन्तु उनमें ये मुख्य हैं और इनके अतिरिक्त निम्नकोटि के हैं ।

समाधिमधुना वक्ष्ये भवपाशविनाशनम्[१११] ।
भवपाशनिबद्धश्च यथावच्छ्रोतुमर्हसि[११२] ।।५७।।

(अधुना भव-पाशविनाशनं समाधिं वक्ष्ये भव-पाशनिबद्धः च (त्वं) यथावत् श्रोतुं अर्हसि ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अब भवपाश को दूर करने वाली समाधि का वर्णन कहता हूँ। भवपाश में पड़े हुए होने के कारण तुम यथावत् सुनने के योग्य हो।

यमादिगुणसम्पन्नो जितवायुर्जितेन्द्रियः[११३]।
धारणाध्यानसंयुक्तः समाधिं कुरु पुत्रक[११४]।।५८।।

(पुत्रक ! यम-आदि-गुण-सम्पन्नः जितवायुः जितेन्द्रियः धारणा ध्यानं संयुक्तः समाधिं कुरु।)

हे पुत्र, यम आदि गुणों से युक्त हो, प्राण को वश में कर, इन्द्रियों को वश में कर, धारणा और ध्यान से युक्त होकर समाधि का अभ्यास करो।

समाधिः समतावस्था जीवात्मपरमात्मनोः[११५]।
परमात्मस्थितिः प्रोक्तो समाधिः प्रत्यगात्मनः[११६]।।५९।।

(जीवात्मपरमात्मनोः समतावस्था समाधिः। प्रत्यक् आत्मनः परमात्मस्थितिः समाधिः प्रोक्तः।)

जीवात्मा और परमात्मा की एकता ही समाधि है। वैयक्तिक आत्मा का परम-आत्मा के साथ एकाकार हो जाना समाधि कही गई है।

ध्यायन् यथा यथाऽऽत्मानं तत्समाधिस्तथा तथा[११७]।
ध्यानेनात्मनि संस्थाप्य नान्यथाऽऽत्मा यतो भवेत्[११८]।।६०।।

(यथा यथा ध्यायन् तथा तथा तत् समाधिः, ध्यानेन (परम) आत्मनि आत्मानं संस्थाप्य यतः आत्मा अन्यथा न भवेत्।)

जैसे-जैसे ध्यान चलता रहेगा, वैसे वैसे ही वह समाधि आती रहेगी। ध्यान से ही आत्मा को आत्मा में लगाना चाहिए, जिससे वह पृथक् न हो।

ध्यायन्नात्मानमानन्दं सत्यज्ञानमनन्तकम्[११९]।
ब्रह्म निर्गुणमत्रैव समाधिं समवाप्नुयात्[१२०]।।६१।।

(सत्यं, ज्ञानम्, अनन्तकम्, आनन्दं निर्गुणं ब्रह्म आत्मानं ध्यायन् अत्र एव समाधि समवाप्नुयात्।)

सत्य, ज्ञान, अनन्त और आनन्द-रूप निर्गुण-ब्रह्म का आत्मा में चिन्तन करने से उस स्थिति में ही समाधि लाभ होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हृत्पद्मे परमात्मानं वासुदेवं सविग्रहम्[१२१]।
ध्यायन्नात्मानमत्रैव समाधिं समवाप्नुयात्[१२२]।।६२।।

(हृत्पद्मे आत्मानं सविग्रहं वासुदेवं परम्-आत्मानं ध्यायन् अत्र एव समाधिं समवाप्नुयात्।)

हृदयकमल के अन्दर आत्मा में शरीराकार वासुदेव परमात्मा का ध्यान करने से उस स्थिति में ही समाधि-लाभ होता है।

हृदयाम्बुजमध्यस्थं शिखातल्लीनमीश्वरम्[१२३]।
ध्यायन् वैश्वानरं तत्र समाधिं समवाप्नुयात्[१२४]।।६३।।

(हृदय-अम्बुज-मध्यस्थं शिखातल्लीनम् ईश्वरं वैश्वानरं ध्यायन् तत्र समाधिं समवाप्नुयात्।)

हृदयकमल के मध्य में स्थित शिखा-स्वरूप ज्योतिर्मय ईश्वर का ध्यान करने से वहां समाधि-लाभ होता है।

आत्मानं हृदयाब्जस्थममृताप्लुतदेहिनम्[१२५]।
ध्यायन् पुरुषमत्रैव समाधिं समवाप्नुयात्[१२६]।।६४।।

(हृदयअब्जस्थं अमृताप्लुतदेहिनम् आत्मानं पुरुषं ध्यायन् अत्र एव समाधिं समवाप्नुयात्।)

हृदयकमल में स्थित अमृत से प्लावित देह के स्वामी आत्मा का पुरुषाकार ध्यान करने से यहीं पर समाधि-लाभ होता है।

भ्रुवोर्मध्येऽप्यधीशानं स्वर्णपिङ्गलमीश्वरम्[१२७]।
ध्यायन्नात्मानमत्रैव समाधिं समवाप्नुयात्।।६५।।

(भ्रुवोः मध्ये अधीशानं स्वर्णपिङ्गलम् ईश्वरम् अपि आत्मानं ध्यायन् अत्र एव समाधिं समवाप्नुयात्।)

भौहों के मध्य में अधिष्ठित स्वर्ण के समान पीतवर्ण ईश्वर का भी आत्मा में ध्यान करने से यहीं पर समाधि लाभ होता है।

आदित्यमण्डलं देवं हिरण्मयतनुं हरिम्[१२८]।
ध्यायन्नात्मानमत्रैव समाधिं समवाप्नुयात्[१२९]।।६६।।

(आदित्यमण्डलं हिरण्मयतनुं देवं हरिम् आत्मानं ध्यायन् अत्र एव समाधिं समवाप्नुयात्।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सूर्यमण्डलस्वरूप सुवर्णमय-शरीरवाले देवता-हरि का आत्मा में ध्यान करने से यहीं पर समाधि-लाभ होता है।

अष्टाङ्गात्मकमेतद्धि पवित्रं पापनाशनम्[१३०]।
ज्ञानं गुह्यतमं पुण्यं कीर्तितं ते तपोधन[१३१]।।६७।।

(तपोधन ! एतत् हि पवित्रं पापनाशनं पुण्यं गुह्यतमम् अष्टाङ्ग-आत्मकं ज्ञानं ते कीर्तितम् ।)

हे तपोधन, यह पवित्र, पापनाशक, पुण्यकारक, गूढ़ अष्टाङ्गात्मक-ज्ञान तुम्हें कहा।

ज्ञानेनैव सहैतेन नित्यकर्माणि कुर्वतः[१३२]।
निवृत्तफलसंगस्य मुक्तिस्तस्य करे स्थिता[१३३]।।६८।।

(एतेन ज्ञानेन सह एव निवृत्त-फलसंगस्य नित्यकर्माणि कुर्वतः तस्य करे मुक्तिः स्थिता ।)

इस ज्ञान के साथ ही फलासक्ति से रहित नित्यकर्मानुष्ठान करनेवाले साधक के हाथ में मुक्ति रखी हुई है ।

य इदं पठते नित्यं पुण्याख्यानमनन्यधीः[१३४]।
सर्वपापविनिर्मुक्तः सत्यज्ञानी भविष्यति[१३५]।।६९।।

(अनन्यधीः यः इदं पुण्य-आख्यानं नित्यं पठते (सः) सर्वपाप-विनिर्मुक्तः सत्यज्ञानी भविष्यति ।)

निश्चल बुद्धि से जो इस पुण्याख्यान को नित्य अध्ययन करेगा, वह सभी पापों से मुक्त होकर सत्य को जाननेवाला बनेगा ।

यस्त्वैतत् शृणुयान्नित्यं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः[१३६]।
एकजन्मकृतं पापं दिनेनैकेन नश्यति[१३७]।।७०।।

(नित्यं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः यः तु एतत् शृणुयात् (तस्य) एक जन्मकृतं पापं एकेन दिनेन नश्यति ।)

नित्य, श्रद्धा और भक्ति के साथ जो इसे श्रवण करेगा, उसका एक जन्म का किया हुआ पाप एक दिन में ही नष्ट हो जाएगा ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शृणुयाद्यः सकृद्वापि योगाख्यानमिदं परम्[१३८] ।
सम्यक् विचारयेदेव स च सर्वज्ञतामियात्[१३९] ।।७१।।

(इदं परं योग-आख्यानं यः सकृत् वा अपि शृणुयात्, सम्यक् विचारयेत् च, एव, स सर्वज्ञतां इयात् ।)

यह परम-योगाख्यान जो एक बार भी सुनेगा, और उस पर अच्छी तरह विचार करेगा, वह सर्वज्ञता को प्राप्त करेगा ।

अनुतिष्ठन्ति ये नित्यमेतज्ज्ञानसमन्विताः[१४०] ।
नित्यकर्मान्वितान् दृष्ट्वा देवाश्च प्रणमन्ति हि[१४१] ।।७२।।

(एतत् ज्ञान समन्विताः ये नित्यं अनुतिष्ठन्ति हि (तं) नित्यकर्मान्वितान् दृष्ट्वा देवाः च प्रणमन्ति ।)

इस ज्ञान से युक्त होकर जो सदा अनुष्ठान करते हैं, निश्चय ही ऐसे नित्य कर्मानुष्ठानियों को देखते ही देवता भी प्रणाम करते हैं ।

तस्माज्ज्ञानेन देहान्तं नित्यकर्म यथाविधि[१४२] ।
कर्त्तव्यं देहिना पुत्र मुक्तये भवभीरुणा[१४३] ।।७३।।

(तस्मात् पुत्र भवभीरुणा देहिना देहान्तं ज्ञानेन यथाविधि नित्यकर्म मुक्तये कर्त्तव्यम् ।)

इसलिए हे पुत्र, भवभीरु शरीरधारी को शरीरपात तक ज्ञान के साथ विधिपूर्वक नित्य-कर्मानुष्ठान, मुक्ति के लिए करना चाहिए ।

✷ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे चतुर्थोऽध्यायः ।
इस प्रकार वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड का
चतुर्थ अध्याय समाप्त हुआ ।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पञ्चमोऽध्यायः

इत्युक्तो योगिना योगी वसिष्ठेन महात्मना[१]।
शक्तिः पुत्रो महाभागं पप्रच्छं पितरं पुनः[२]।।१।।

(महात्मना योगिना वसिष्ठेन इति उक्तः, योगी शक्तिः पुत्रः, महाभागं पितरं पुनः पप्रच्छ ।)

महात्मा योगी वसिष्ठ से ऐसा सुनकर, योगी शक्तिनामक पुत्र ने महाभाग-पिता को पुनः पूछा ।

शक्तिरुवाच[३]-

यद्यात्मा निर्गुणः शुद्धः सदानन्दोऽजरोऽमरः[४]।
संसृतिस्तात कस्य स्यात् क्षेत्रनाशे कुतः स्थितिः[५]।।२।।

शक्तिः उवाच-

(यदि आत्मा निर्गुणः शुद्धः सदा आनन्दः अजरः अमरः तदा) तात, संसृतिः कस्य, क्षेत्रनाशे कुतः स्थितिः स्यात् ।)

शक्ति ने कहा -

यदि आत्मा-निर्गुण, शुद्ध, सदा आनन्दस्वरूप, अजर, अमर है, तो हे पिता, जन्म-मरण किसका होता है । और देहान्त होने पर वह कहाँ रहता है ।

नाशकालः कथं तस्य ज्ञायते भगवन् यतः[६]।
यथावत् सर्वमेतन्मे वक्तुमर्हसि साम्प्रतम्[७]।।३।।

(यतः, तस्य नाशकालः कथं ज्ञायते सर्वं भगवन् एतत् यथावत् मे साम्प्रतं वक्तुं अर्हसि ।)

इसी प्रकार उसका अन्तकाल कैसे जाना जाता है ? हे भगवान ! यह सब यथावत् मुझे बताने में आप सक्षम हैं ।

वसिष्ठ उवाच-

तस्यैव नित्यशुद्धस्य सदानन्दमयात्मनः[९]।
अवच्छिन्नस्य जीवस्य संसृतिः कीर्त्यते बुधैः[१०]।।४।।

वसिष्ठ उवाच -

(तस्य एव नित्यशुद्धस्य सदा आनन्दमय आत्मनः अवच्छिन्नस्य जीवस्य बुधैः संसृतिः कीर्त्यते ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वसिष्ठ जी ने कहा - उसी नित्यशुद्ध आनन्दस्वरूप आत्मा को देहावच्छिन्न होने से जीव के नाम से जाना जाता है, और विद्वानों के अनुसार उसी का जन्म और मरण होता है।

एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः[११]।
एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्।।५।।

(एक एव हि भूत-आत्मा भूते-भूते व्यवस्थितः (सन्) एकधा बहुधा चैव जल-चन्द्रवत् दृश्यते ।)

एक ही जीवात्मा प्रत्येक प्राणी में स्थित होकर कभी एक प्रकार से तथा कभी अनेक प्रकार से जल में चन्द्रबिम्ब के समान दिखाई देता है ।

भ्रान्त्यारूढः स एवात्मा जीवसंज्ञस्तथा भवेत्[१२]।
यतः क्षेत्रं विजानाति तस्मात् क्षेत्रज्ञ उच्यते[१३]।।६।।

(स एव आत्मा भ्रान्ति-आरूढः (सन्) जीवसंज्ञः भवेत् तथा यतः क्षेत्रं विजानाति तस्मात् क्षेत्रज्ञ उच्यते ।)

वही आत्मा भ्रान्ति ये युक्त होने पर जीव नाम से कहा जाता है और जब इसे क्षेत्र (शरीर) समझ लेता है तब क्षेत्रज्ञ कहा जाता है ।

क्षेत्रज्ञोऽयमिति प्रोक्तो भुङ्क्ते यश्च शुभाशुभम्[१४]।
भोग्यमाभ्यन्तरं बाह्यं सुखादि च घटादि च[१५]।।
भोगायतनदेहेऽस्मिन्निन्द्रियैर्भोगसाधनैः।।७।।

(अस्मिन् भोगायतन देहे भोगसाधनैः इन्द्रियैः सुख आदि च आभ्यन्तरं घट-आदि बाह्यं भोग्यं शुभ-अशुभं यः च भुङ्क्ते अयं क्षेत्रज्ञः इति प्रोक्तः ।)

इस भोगायतन शरीर में भोगसाधन इन्द्रियों के द्वारा सुखादि-रूप आभ्यन्तर और घटादि-रूप बाह्य भोग को शुभाशुभ रूप में जो भोगता है, वह क्षेत्रज्ञ नाम से जाना जाता है ।

भोक्ता भोग्यं च भुक्तिश्च भोगायतनमिन्द्रियम्[१६]।
एतानि पञ्च वस्तूनि षष्ठं वस्तु न विद्यते।।८।।

(भोक्ता-भोग्यं च भुक्तिः भोगायतनं च इन्द्रियम् एतानि पञ्च वस्तूनि विद्यते षष्ठं वस्तु न ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भोक्ता, भोग्य, भोग, भोगायतन और इन्द्रिय ये पाँच ही वस्तु हैं, छठी चीज है ही नहीं।

तथाऽवस्थाश्चतस्रस्तु जाग्रत् स्वप्नसुषुप्तयः[१७]।
चतुर्थी तु तुरीयाऽऽख्या नास्त्यवस्था तु पञ्चमी[१८]।।९।।

(तथा अवस्थाः तु चतस्रः - जाग्रतः स्वप्न सुषुप्तयः, चतुर्थी तु तुरीया आख्या, पञ्चमी अवस्था तु न अस्ति।)

उसी प्रकार अवस्था भी चार हैं, जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति और चौथी तुरीया नाम की, पाँचवीं अवस्था है ही नहीं।

स्वप्नेऽपि बाह्यशून्यस्य भोक्तुर्भुक्तिः प्रकीर्तिता[१९]।।१०।।

(बाह्य-शून्यस्य अपि स्वप्ने भोक्तुः भुक्तिः प्रकीर्तिता।)

बाहरी वस्तु का अभाव होने पर भी स्वप्न में भोक्ता का भोग माना गया है।

सुषुप्तिः स्वात्मरूपेण निर्व्यापारेण संस्थितिः[२०]।
तुरीयाख्ये भवेदात्मा विनष्टो भवभावतः[२१]।।११।।

(स्व-आत्मरूपेण निः-व्यापारेण संस्थितिः सुषुप्तिः तुरीयाख्ये आत्मा भवभावतः विनष्टो भवेत्।)

आत्मा का निज-स्वरूप में व्यापाररहित रहना सुषुप्ति कही जाती है। तुरीय नामक अवस्था में आत्मा संसार के भाव से निर्मुक्त हो जाता है।

क्षेत्रनाशे स्थितिस्तस्य वायव्ये तैजसेऽपि वा[२२]।
सूक्ष्मे लिङ्गशरीरेऽस्मिन्नवच्छिन्नात्मनः सदा[२३]।।१२।।

(क्षेत्रनाशे सूक्ष्मे अस्मिन् लिङ्गशरीरे सदा अवच्छिन्नः तस्य आत्मनः वायव्ये तैजसे वा अपि स्थितिः।)

शरीरपात होने पर सूक्ष्म लिङ्गशरीर (कारणशरीर) में परिमित रूप से सदैव रहनेवाला आत्मा का वायुरूप अथवा तेजोरूप में वास होता है।

लिङ्गदेहेन सर्वत्र वर्तते जीवसंज्ञकः[२४]।
पुण्यपापवशाद्देहं तेनैवान्यं बिभर्ति च[२५]।।१३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(जीवसंज्ञकः (सः) सर्वत्र लिङ्गदेहेन वर्तते च पुण्यपापवशात् तेन एव अन्यं देहं बिभर्ति ।)

जीव-नाम से वही आत्मा सर्वत्र लिङ्गदेह के साथ रहता है, और पुण्य पाप के कारण वही अन्य देह को धारण करता है ।

एवमेव भ्रमेज्जीवो यावत्कर्मपरिक्षयः[२६]।
कर्मक्षयादात्मशुद्धिः शुद्धेनैवात्मवेदनम्[२७]।।१४।।

(यावत् कर्मपरिक्षयः, एवमेव जीवः भ्रमेत् कर्मक्षयात् आत्म-शुद्धिः, शुद्धेन एव आत्मवेदनम्।)

कर्म के पूर्णतः क्षय होने तक जीव इसी प्रकार (जन्म-मृत्यु के चक्कर में) घूमता रहता है । कर्म का क्षय हो जाने पर आत्मशुद्धि होती है और इस शुद्धता से ही आत्मा का ज्ञान होता है ।

ध्यानयोगबलादेव भवेन्मुक्तिर्हि नान्यथा[२८]।
क्षेत्रस्य नाशकालस्तु ज्ञायते कालसूचकैः[२९]।।१५।।

(ध्यान-योग बलात् एव हि मुक्तिः भवेत् अन्यथा न, कालसूचकैः (एतैः) क्षेत्रस्य नाशकालः तु ज्ञायते ।)

ध्यानयोग के बल से ही मुक्ति हो सकती है अन्यथा नहीं, और इससे ही मृत्युसूचक लक्षण से शरीर का अन्तकाल भी जाना जाता है ।

चिह्नैराभ्यन्तरैर्बाह्यैर्ज्ञात्वा गच्छेद्यथारुचि[३०]।
यावत् क्षेत्री भवेत् तावत् साध्यं सर्वं प्रसाधयेत्[३१]।।१६।।

(आभ्यन्तरैः बाह्यैः चिह्नैः ज्ञात्वा यथारुचि गच्छेत्। यावत् क्षेत्री भवेत् तावत् साध्यं सर्वं प्रसाधयेत् ।)

आभ्यन्तर और बाह्य चिन्हों को जानकर यथारुचि चलना चाहिए और जबतक शरीर में जीव है तब तक सभी प्रकार का यत्न करना चाहिए ।

तन्नाशे कः समर्थः स्यात् क्षेत्रयोगो हि दुर्लभः[३२]।।१७।।

(तत् नाशे कः समर्थः स्यात् हि क्षेत्रयोगः दुर्लभः ।)

देहनाश होने पर कौन (यत्न करने में) समर्थ हो सकता है. क्योंकि शरीर मिलना ही दुर्लभ है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भूतानां क्षेत्रिणः श्रेष्ठाः क्षेत्रिणां बुद्धिजीविनः[३३]।
बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः[३४]।
ब्राह्मणेषु च विद्वांसो विद्वत्सु कृतबुद्धयः[३५]।।१८।।

(भूतानां क्षेत्रिणः श्रेष्ठाः, क्षेत्रिणां बुद्धिजीविनः, बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठाः, नरेषु ब्राह्मणाःस्मृताः, ब्राह्मणेषु च विद्वांसः, विद्वत्सु कृतबुद्धयः ।)

प्राणिमात्र में देहधारी श्रेष्ठ हैं। देहधारियों में बुद्धिजीवी तथा बुद्धिमानों में मनुष्य श्रेष्ठ हैं, मनुष्यों में ब्राह्मण, ब्राह्मणों में विद्वान् तथा विद्वानों में दृढ़ बुद्धिवाले श्रेष्ठ हैं -

कृतबुद्धिषु कर्तारः कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः[३६]।
ब्रह्मवित्सु परं किञ्चित् न श्रेष्ठमिह विद्यते[३७]।।१९।।

(कृतबुद्धिषु कर्तारः, कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः (श्रेष्ठाः), ब्रह्मवित्सु परं श्रेष्ठं इह किञ्चित् न विद्यते ।)

दृढ़ बुद्धिवालों में क्रियावान्, क्रियावानों में ब्रह्मवित् श्रेष्ठ हैं और इस संसार में ब्रह्मवित् से दूसरा कोई श्रेष्ठ नहीं है ।

क्षेत्रवानेव विद्वांश्च कुर्यान्निःश्रेयसे द्विजः[३८]।
तेन कालोऽपि विज्ञेयश्चिह्नैर्बाह्यैस्तथान्तरैः[३९]।।२०।।

(क्षेत्रवान् विद्वान् द्विज एव च निःश्रेयसे कुर्यात् तेन बाह्यैः तथा अन्तरैः चिह्नैः कालः अपि विज्ञेयः ।)

शरीरधारी विद्वान् ब्राह्मण को मोक्ष के लिए यत्न करना चाहिए और उसके द्वारा बाहरी और भीतरी चिन्हों से काल (मृत्यु समय) को भी जानना चाहिए ।

मृत्युकालं च तैर्ज्ञात्वा मुक्तो गच्छेत् परां गतिम्[४०]।
तत्राभ्यन्तरचिह्नानि वायुचारवशात् शृणु[४१]।।२१।।

(तैः मृत्युकालं ज्ञात्वा च मुक्तः परां गतिं गच्छेत् तत्र वायु-चार-वशात् आभ्यन्तर चिह्नानि शृणु।)

उन चिह्नों से मृत्युकाल को जानकर और उससे छुटकारा पाकर परमगति को जाना चाहिए । अब उसमें वायुसंचार (श्वास-प्रश्वास) से उत्पन्न भीतरी चिह्नों को सुनो ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वायुश्चरति देहेस्मिंश्चन्द्रभास्करभागयोः[४२]**।**
बहिरन्तश्च सर्वेषां केषाञ्चिद्देहमध्यतः[४३]**।।२२।।**

(अस्मिन् देहे चन्द्र-भास्कर भागयोः सर्वेषां बहिः अन्तः वायुः चरति च केषाञ्चित् देहमध्यतः (चरति)।)

इस शरीर में बाहर तथा भीतर चन्द्र (बाएँ) और भास्कर (दाएँ) भाग में वायु संचरण करता रहता है, और किसी विरले का ही देह मध्य अर्थात सुषुम्णा से वायु संचरण करता है।

विषं भास्करभागे स्यात् सोमभागेऽमृतं तथा[४४] **।**
तयोः कालवशान्नित्यं चरतश्चन्द्रभास्करौ[४५]**।।२३।।**

(भास्करभागे विषं तथा सोमभागे अमृतं स्यात् कालवशात् तयोः नित्यं चन्द्रभास्करौ चरतः।)

वह वायु दाएँ भाग में विषरूप (बुरा) तथा बाएँ भाग में अमृतरूप (अच्छा) है। समय के प्रभाव से उन दोनों में नित्य शीततत्व तथा उष्णतत्व संचरण करते हैं।

सर्वे कालस्य वशगाः स्वतन्त्रः काल एव हि[४६]**।**
तस्माच्चिह्नैः सदा विन्द्याद्यथावत् कालमादितः[४७]**।।२४।।**

(सर्वे कालस्य वशगाः हि काल एव स्वतन्त्रः, तस्मात् चिह्नैः सदा आदितः कालं यथावत् विन्द्यात्।)

सभी काल के वश में हैं किन्तु एक मात्र काल ही स्वतन्त्र है। इसलिए चिह्नों के द्वारा सदा पहले से ही काल को यथावत् जानना चाहिए।

सव्ये च दक्षिणे चापि पार्श्वयोरुभयोरपि[४८]**।**
वायुः प्रवर्त्तते देहे श्वासरूपेण देहिनाम्[४९]**।।२५।।**

(देहिनां देहे सव्ये च दक्षिणे च अपि उभयोः पार्श्वयोः अपि वायुः श्वासरूपेण प्रवर्त्तते।)

शरीरधारियों के शरीर में बाएँ और दाएँ दोनों भाग से श्वास रूप से वायु चलता है।

श्वाससङ्ख्याभिरप्यत्र कालं कालविदो विदुः[५०]**।।२६।।**

(अत्र कालविदः श्वाससङ्ख्याभिः अपि कालं विदुः।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यहाँ काल को जानने वाले श्वासों की गणना के द्वारा भी मृत्यु को जान लेते हैं।

षष्टिश्वासो भवेत् प्राणः षट्प्राणा घटिका भवेत्[५१]।
घटिकाः पञ्च राशिः स्याद्राशिद्वादशकं दिनम्[५२]।
त्रिंशद्दिनानि मासः स्याद् द्वौ मासौ च ऋतुर्भवेत्[५३]।२७।।

(षष्टि श्वासःप्राणः भवेत्, षट् प्राणाः घटिका भवेत्, पञ्चघटिका राशिः स्यात्, द्वादशकं राशिः दिनं, त्रिंशत् दिनानि मासः स्यात् च द्वौ मासौ ऋतुः भवेत्।)

साठ श्वास का एक प्राण (समय की एक ईकाई) होता है। छः प्राण की घटिका (२४ मिनट) होती है। पाँच घटिका की एक राशि (दो घंटे) होती है, और १२ राशि का एक दिन होता है। तीस दिन का एक मास होता है और दो मास की एक ऋतु होती है।

ऋतुभिश्च त्रिभिर्विद्यादयने विषुवेऽपि च[५४]।
ऋतुभिः षड्भिरब्दः स्यात्तच्छतं त्वायुरुत्तमम्[५५]।।२८।।

(त्रिभिः ऋतुभिः विषुवे अपि च अयने विद्यात् षड्भि ऋतुभिः अब्दः स्यात् तत् शतं तु उत्तमं आयुः।)

तीन-तीन ऋतुओं से विषुव वृत्त के ऊपर दो अयन (उत्तरायण, दक्षिणायण) जानना चाहिए। छः ऋतु से एक वर्ष होता है तथा सौ वर्ष की आयु उत्तम मानी गई है।

ग्रहैः सार्धं प्रतिदिनं श्वासा द्वादशराशयः[५६]।
आविशन्ति तदेकस्य राशेः पञ्चैव नाडिकाः[५७]।।२९।।

(ग्रहैः सार्धं द्वादश राशयः प्रतिदिनं श्वासाः आविशन्ति। तत् एकस्य राशेः पञ्च नाडिका एव।)

ग्रहों के साथ बारह राशियों में प्रतिदिन श्वास चलता है तथा पाँच नाडियों (घटिका) की एक राशि होती है।

मेषश्च वृषभश्चैव मिथुनः कर्कटस्तथा[५८]।
सिंह कन्या तुला चैव वृश्चिकश्च धनुस्तथा[५९]।।३०।।
मकरश्चैव कुम्भश्च मीनश्चैते हि राशयः[६०]।
चरस्थिरोभयात्मानो मेषाद्या राशयः क्रमात्[६१]।।३१।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(मेषः च वृषभः च मिथुनः तथा कर्कटः एव सिंहः कन्या च तुला एव वृश्चिक तथा धनुः च मकरः च एव कुम्भकः च मीनः च हि राशयः एते मेषाद्या राशयः क्रमात् चरः स्थिरः उभयात्मनः।)

मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन इतनी राशियाँ हैं । ये मेष आदि राशियाँ क्रमशः चल, अचल तथा उभय स्वरूप वाली होती हैं ।

चरात्मकाश्च चत्वारो वामभागे वदन्ति ते[६२]**।**
स्थिरात्मकाश्च याम्येस्युरुभयत्रोभयात्मकाः[६३]**।।३२।।**

(ते चत्वारः चरात्मकाः च वामभागे वदन्ति स्थिरात्मकाः च याम्ये उभयात्मकाः उभयत्र स्युः ।)

इनमें से चार चर राशियाँ हैं और वे वाम भाग में कही जाती हैं । स्थिरात्मक (चार) राशियाँ दाहिने भाग में तथा उभयात्मक (चार) दोनों भागों में कही जाती हैं ।

भूतं भव्यं भविष्यच्च शुभाशुभफलं तथा[६४]**।**
राशिष्वेतेषु देहेऽस्मिन् विज्ञातव्यं ग्रहोदयात्[६५]**।।३३।।**

(एतेषु राशिषु ग्रह-उदयात् अस्मिन् शरीरे भूतं भव्यं भविष्यत् च तथा शुभ-अशुभ फलं ज्ञातव्यम् ।)

इन राशियों में ग्रहोदय के संयोग से इस शरीर में भूत, वर्तमान और भविष्य को तथा शुभ अशुभ फल को भी जानना चाहिए ।

(**टिप्पणी** - ऐसा माना जाता है कि मनुष्य के मन एवं शरीर की क्रियाप्रणाली इन स्वाभाविक परिवर्तनों के द्वारा प्रभावित तथा नियन्त्रित होती है ।)

एकैकस्मिन् भवन्त्यत्र राशौ भूतानि पञ्च च।
वायुर्वह्निस्तथा भूमिरापः खमिति पञ्च वै[६६]**।।३४।।**

(अस्मिन् एक-एक राशौ पञ्चभूतानि वायुः वह्निः तथा भूमिः आपः खं च इति वै पञ्च अत्र भवन्ति ।)

इनमें एक-एक राशि के अन्दर वायु, अग्नि, भूमि, जल और आकाश इन पाँच महाभूतों का वास है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सर्वेषामपि राशीनां वायव्याद्या तु नाडिका[६७]।
द्वितीया नाडिकाऽऽग्नेयी तृतीया पार्थिवी मता[६८]।
चतुर्थी वारुणी ज्ञेया व्योमाख्या पञ्चमी स्मृता[६९]।।३५।।

(सर्वेषां राशीनामपि आद्या नाडिका तु वायवी, द्वितीया नाडिका आग्नेयी तृतीया पार्थिवी मता चतुर्थी वारुणी ज्ञेया व्योम आख्या पञ्चमी स्मृता ।)

सभी राशियों में आदि नाड़िका वायुतत्त्व वाली, दूसरी नाड़िका अग्नितत्त्व वाली, तीसरी पार्थिवतत्त्व वाली, चौथी जलतत्त्व वाली और पाँचवीं आकाशतत्त्व वाली मानी गई है ।

नासापार्श्वे वहेद्वायुर्वायव्यांशेषु राशिषु[७०] ।
आग्नेयांशे चरन्नूर्ध्वं पार्थिवस्तम्भपार्श्वतः[७१]।।३६।।

(वायवी अंशेषु राशिषु नासा पार्श्वे वायुः वहेत् आग्नेय-अंशे ऊर्ध्व-पार्थिव स्तम्भ पार्श्वतः चरन् ।)

राशियों के वायुतत्त्व वाले अंश में नाक के एक तरफ में वायु चलती है। राशियों के आग्वितत्त्व वाले अंश में ऊपर की ओर से तथा राशियों के पृथ्वीतत्त्व वाले अंश में दोनों ओर से चलती है ।

नासस्याधो वहेद्वायुर्वरुणांशोदयस्तथा[७२]।
नासामध्ये वहेद्व्योम्नि व्योमांशस्तु तदा भवेत्[७३]।।३७।।

(वरुण-अंश-उदयः वायुः नासस्य अधः वहेत् ता व्योम अंशः तु भवेत् तदा व्योम्नि नासामध्ये वहेत् ।)

जलतत्त्व के उदय होने पर वह वायु नासातल से चलती है तथा आकाशतत्त्व वाली जब होती है तब वह नाक के ठीक बीच के खाली स्थान से बहती है ।

गुरुराहू च वायव्ये चरतोऽग्नौ भृगुः कुजः[७४]।
भूम्यां बुधो रविर्ज्ञेयौ जले चन्द्रशनैश्चरौ[७५]।
आकाशे विग्रहं विन्द्यात् एवं सर्वेषु राशिषु[७६]।।३८।।

(गुरुः राहुः च वायव्ये चरतः अग्नौ भृगुः कुजः भूम्यां बुधः रविः ज्ञेयः जले चन्द्रः शनैश्चरः आकाशे विग्रहम् एवं सर्वेषु राशिषु विन्द्यात् ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गुरु और राहु उस वायु (श्वास प्रश्वास) के साथ वायुतत्व में चलते हैं। शुक्र और मंगल अग्नितत्त्व में, बुध और रवि भूमितत्त्व में, चन्द्र और शनि जलतत्त्व के साथ चलते हैं, तथा आकाशतत्त्व में कोई भी ग्रह साथ नहीं रहते । इसी प्रकार सभी राशियों में जानना चाहिए ।

पूर्वोदितास्तु सर्वत्र सौम्याः पापास्त्वनन्तराः[७७] ।।३९।।

(पूर्व-उदिताः तु सर्वत्र सौम्याः अनन्तराः तु पापाः ।)

पूर्व-पूर्व क्रम से उदित ग्रह सर्वत्र सौम्य तथा पश्चात् क्रम से उदित पापग्रह होते हैं ।

राहुः कुजो रविः सौरिरेते दक्षिणतः शुभाः[७८] ।
गुरुर्बुधो भृगुश्चन्द्र सव्ये सौम्याः शुभावहाः[७९] ।।४०।।

(राहुः कुजः रविः सौरिः एते दक्षिणतःशुभाः, गुरुः बुधः भृगुः चन्द्रः सव्ये सौम्याः शुभावहाः।)

राहु, मंगल, रवि और शनि, ये ग्रह नाक के दाहिने भाग से शुभकारक तथा गुरु, बुध, शुक्र और चंद्र नाक के बाएँ भाग से चलने पर सौम्य और शुभकारक होते हैं ।

पापास्तु शुभदाः सव्ये सौम्याः पापफलास्त्विमे[८०] ।
प्रवेशे शुभदाः सर्वे निर्गमेत्वशुभावहाः[८१] ।।४१।।

(इमे सव्ये पापाः शुभदाः सौम्या तु पापफलाः प्रवेशे सर्वे शुभदाः निर्गमे तु अशुभावहाः।)

बाएँ भाग से चलने पर पापग्रह भी शुभकारक तथा सौम्य ग्रह निश्चय ही अशुभकारक होते हैं । श्वास लेते समय सभी ग्रह शुभ तथा छोड़ते समय अशुभ होते हैं ।

एवं राशिस्थभूतेषु ग्रहोदयवशाद् बुधः[८२] ।
शुभाशुभं तदा ज्ञात्वा पृष्टः सर्वं वदेत्ततः[८३] ।।४२।।

(एवं राशिस्थ-भूतेषु ग्रहोदयवशात् बुधः शुभ-अशुभं ज्ञात्वा ततः पृष्टः (सन्) सर्वं तदा वदेत् ।)

इस प्रकार राशियों में स्थित पाँच महाभूत-तत्वों को ग्रहोदय के अनुसार जानकर तथा उसके शुभाशुभ फल को समझकर, तब किसी के पूछने पर उसी प्रकार सब कहना चाहिए ।

यत्र वायुस्थितिस्तत्र प्रष्टा चेच्छुभमादिशेत्[८४] ।
यत्र भागे मरुन्नास्ति तत्रस्थश्चेद् वृथा भवेत्[८५] ।।४३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(यत्र वायुस्थितिः तत्र प्रष्टा चेत् शुभं आदिशेत्, यत्र भागे मरुत् न अस्ति तत्रस्थः चेत् वृथा भवेत्।)

नाक के जिस भाग से वायु चलती रहे, उस तरफ यदि प्रश्नकर्ता रहे तो शुभफल कहना चाहिए और जिस भाग से वायु नहीं चलती रहे, प्रश्नकर्ता के उधर रहने से व्यर्थ फल कहना चाहिए।

अग्रं दक्षिणमित्युक्तं पृष्ठं सव्यमितीरितम्[६]।।४४।।

(अग्रं दक्षिणं इति उक्तं पृष्ठं सव्यं इति ईरितम्।)

आगे को दाहिना तथा पीछे को बायाँ कहा गया है।

अग्रस्थो यदि चेत् प्रष्टा तस्य दक्षिणवत् फलम्[७]।
पृष्ठस्थितस्य तस्यापि सव्यवत् फलमुच्यते[८]।।४५।।

(प्रष्टा यदि अग्रस्थः चेत् तस्य दक्षिणवत् फलं, पृष्ठस्थितस्य तस्य अपि सव्यवत् फलं उच्यते।)

पूछने वाला यदि सामने से पूछे तो दाहिने के अनुसार फल कहना तथा पीछे की ओर से पूछने पर बाएँ के अनुसार फल कहना चाहिए।

भोजनं मैथुनं युद्धं धनसंग्रहणं तथा[९]।
कुर्यादेतानि कर्माणि वायौ दक्षिणतः स्थिते[१०]।।४६।।

(भोजनं मैथुनं युद्धं तथा धनसंग्रहणं एतानि कर्माणि वायौ दक्षिणतः स्थिते कुर्यात्।)

भोजन, मैथुन, युद्ध तथा धनसंग्रह ये सभी काम वायु के दाहिने भाग से चलते समय करना चाहिए।

यात्राविवाहकर्माणि शुभकार्याणि यानि च[११]।
तानि सर्वाणि कुर्वीत वायौ वामे व्यवस्थिते[१२]।।४७।।

(यात्रा विवाहकर्माणि च यानि शुभकार्याणि तानि सर्वाणि वायौ वामे व्यवस्थिते कुर्वीत।)

यात्रा, विवाहकर्म तथा और जितने भी शुभकर्म हैं वे सभी वायु के वाम भाग में चलते समय करने चाहिए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वामेऽपि वायावग्नौ चेन्न कुर्याद् गमनं बुधः[९३]।
गच्छेद्यदि तदा मोहाद् ब्रह्मोऽपि न निवर्तते[९४]।।४८।।

(वामे वायौ अग्नौ अपि चेत् बुधः गमनं न कुर्यात् यदि मोहात् गच्छेत् तदा ब्रह्मा अपि न निवर्तते।)

बाएँ भाग से श्वास चलते समय वायु और अग्नितत्व भी हो तो विद्वान् को यात्रा नहीं करनी चाहिए। यदि हठ से यात्रा करे तो उसे ब्रह्मा भी नहीं बचा सकता है।

पार्थिवे वारुणांशे च गमनं सुखसाधनम्[९५]।
व्योमांशेऽपि न गन्तव्यं कदाचिदपि यत्नतः[९६]।।४९।।

(पार्थिवे वारुण-अंशे च गमनं सुखसाधनम्, व्योम-अंशे अपि कदाचित् यत्नतः अपि न गन्तव्यम्।)

पृथ्वी और जलतत्व के रहने पर गमन सुखकारक होता है और आकाशतत्व होने पर कभी भी यत्नपूर्वक गमन नहीं करना चाहिए।

दिवसस्याद्यराशौ च वायूदयविपर्यये[९७]।
चित्तक्षोभो भवेत्तेन कार्याभावश्च जायते[९८]।।५०।।

(दिवसस्य आद्य-राशौ च वायु-उदय-विपर्यये चित्तक्षोभः भवेत् तेन कार्य-अभावः च जायते।)

दिन के आदि राशि में वायु के उल्टा (अनियमित) चलने पर चित्तविक्षेप होगा और उससे उद्देश्य में सफलता नहीं मिलेगी।

द्वितीये चैव राशौ तु विपरीतोदयो यदि[९९]।
धनहानिश्च दुःखं च सद्य एव भविष्यति[१००]।।५१।।

(द्वितीये राशौ च एव यदि विपरीत उदयः तु सद्य एव धनहानिः च दुखं च भविष्यति।)

और दिन के द्वितीय राशि में भी श्वास यदि अनियमित चलती रहे तो तत्काल ही धन की हानि और दुःख प्राप्त होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीये चैव राशौ तु यात्रादुःखं भविष्यति[१०१]।
चतुर्थे धननाशः स्यात् पञ्चमे देशविभ्रमः[१०२]।।५२।।

(तृतीये राशौ च एव यात्रदुःखं भविष्यति, चतुर्थे धननाशः पञ्चमे देशविभ्रमः स्यात्।)

दिन की तीसरी राशि में श्वास अनियमित चले तो यात्रा दुःखदायक, चौथे में धन का नाश तथा पाँचवें में रास्ता भूलकर भटक जाना होता है।

षष्ठे च प्रत्यवायः स्यात् सप्तमे रोगसंभवः[१०३]।
अष्टमे मरणं विन्द्यान्नवमे बुद्धिनाशनम्[१०४]।।५३।।

(षष्ठे च प्रत्यवायः स्यात् सप्तमे रोगसंभवः अष्टमे मरणं नवमे बुद्धिनाशनं विन्द्यात्।)

छठे में कठिनाई, सातवें में रोग, आठवें में मृत्यु तथा नौवें में बुद्धि का नाश होता है, ऐसा जानो।

दशमे देहसंतापोऽपरस्मिन् मित्रनाशनम्[१०५]।
दिवसस्यान्त्यराशौ तु सर्वदुश्चरितं भवेत्[१०६]।।५४।।

(दशमे देहसंतापः अपरस्मिन् मित्रनाशनं दिवसस्य अन्त्यराशौ तु सर्व-दुश्चरितं भवेत्।)

दसवें में शारीरिक कष्ट, ग्यारहवें में मित्रनाश तथा दिन के अंतिम (बारहवीं) राशि में सब काम बिगड़ जाता है।

राशिष्वेतेषु भूतानां स्थानेष्वपि विपर्यये[१०७]।
सर्वभूतभयं विन्द्याद्राज्ञश्च दुरितं भवेत्[१०८]।।५५।।

(एतेषु राशिषु भूतानां स्थानेषु विपर्यये अपि सर्वभूतभयं विन्द्यात् राज्ञश्च दुरितं भवेत्।)

इन राशियों में पंचमहाभूतों के स्थानों और वायुसंचारों में विपरीतता होने पर सभी प्राणियों को भय तथा राजा को भी संताप होगा, ऐसा समझना चाहिए।

✵ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे पञ्चमोऽध्यायः।

इस प्रकार वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड का
पाँचवा अध्याय समाप्त हुआ।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

षष्ठोऽध्यायः

शक्तिरुवाच[१]-

केनोपायेन भगवन् कालं तरति कालवित्[२]।
तदहं श्रोतुमिच्छामि यथावद् ब्रूहि मे प्रभो[३]।।१।।

(भगवन्! कालवित् केन उपायेन कालं तरति ? तत् अहं श्रोतुं इच्छामि। प्रभो ! यथावत् मे ब्रूहि ।)

शक्ति ने कहा -

हे भगवन्, मृत्यु को जाननेवाला योगी किस उपाय से मृत्यु से छुटकारा पा सकता है। वह मैं सुनना चाहता हूँ । हे प्रभो, यथावत् मुझे वताईये ।

एवं पृष्टः स भगवान् शक्तिना वेदवादिना[४]।
आत्मजं कृपयालोक्य विजयोपायमब्रवीत्[५]।।२।।

(वेदवादिना शक्तिना एवं पृष्टः स भगवान् आत्मजं कृपया आलोक्य विजय-उपायं अब्रवीत् ।)

वेदमार्ग अनुयायी शक्ति के द्वारा ऐसा पूछने पर भगवान् वसिष्ठ ने, अपने पुत्र (शक्ति) को कृपादृष्टि से देखकर विजय के उपाय को बताया ।

वसिष्ठ उवाच[६] -

विनिश्चित्यात्मनः कालं बाह्याभ्यन्तरलक्षणैः[७]।
निर्भयस्तु प्रसन्नात्मा निर्द्वन्द्वो विजितेन्द्रियः[८]।।३।।

(बाह्य-आभ्यन्तर-लक्षणैः आत्मनः कालं विनिश्चित्य तु निर्भयः प्रसन्न-आत्मा निर्द्वन्द्वः विजित-इन्द्रियः-)

वसिष्ठ जी ने कहा -

बाहरी और भीतरी लक्षणों से अपने मृत्यु काल को निश्चित रूप से जानकर उसे निर्भय, प्रसन्न, निर्द्वन्द्व हो और इन्द्रियों को वश में कर -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कुर्वन् विध्युक्तकर्माणि नित्यनैमित्तिकानि च[९]।
योगेन परमात्मानं गुहायां प्राप्य चेतसा[१०]।।४।।

(विधि-उक्त कर्माणि नित्यनैमित्तिकानि च कुर्वन् योगेन चेतसा गुहायां प्राप्य परमात्मानं (चिन्तयन्)-)

शास्त्रोक्त नित्यनैमित्तिक कर्मानुष्ठान करते हुए, योग के द्वारा चित्तवृत्ति से अन्तराकाश में पहुँचकर परमात्म चिन्तन करते हुए -

तारकेण जपेन्नित्यं जितासुः कामवर्जितः[११]।
जपेद्वा तारकं ब्रह्म निष्कामश्चाच्युतः पथात्[१२]।।५।।

(जितासुः कामवर्जितः नित्यं तारकेण जपेत् वा निष्कामः च पथात् अच्युतः तारकं ब्रह्म जपेत् ।)

प्राण को जीतकर कामनाओं से रहित हो, नित्य ओंकार का जप करना चाहिए, अथवा कामनाओं से रहित हो अपने मार्ग पर दृढ रहकर तारक ब्रह्म का जप करना चाहिए ।

स कालं तमतिक्रम्य दीर्घायुर्ब्रह्मविद्भवेत्[१३]।
इति ब्रह्मा मम प्राह संक्षेपात् प्रणवं पुरा[१४]।।६।।

(स तं कालं अतिक्रम्य दीर्घायुः ब्रह्मवित् भवेत् इति ब्रह्मा पुरा मम संक्षेपात् प्रणवं प्राह ।)

ऐसा योगी मृत्यु को पार कर दीर्घायु तथा ब्रह्मविद् होता है। ऐसा ब्रह्मा ने प्राचीन समय में मुझ से संक्षेप में ओंकार के विषय में कहा था ।

तदहं ते प्रवक्ष्यामि शृण पुत्र महामते[१५]।।७।।

(तत् ते अहं प्रवक्ष्यामि महामते पुत्र! शृणु।)

उसी ओंकार को मैं तुमसे कहता हूँ, हे बुद्धिमान पुत्र, सुनो ।

इदमग्रे सदेवासीत् सौम्य जन्मादिकारणम्[१६]।।८।।

(सौम्य! अग्रे इदं सत् एव जन्म-आदि-कारणम् आसीत् ।)

हे सौम्य, पहले पहल एकमात्र सत् ही था और वही जन्म आदि का कारण था ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कारणादभवद्बीजं चतुर्वर्णात्मकाक्षरम्[१७]।
तदेतदोमिति ब्रह्म ब्रह्मज्ञानैकसाधनम्[१८]।।९।।

(कारणात् चतुः-वर्णात्मक-अक्षरं बीजम् अभवत् । तत् एतत् ओम् ब्रह्म इति ब्रह्मज्ञान-एकसाधनम् ।)

उसी कारण से चार वर्णवाला अक्षरस्वरूप बीज का निर्माण हुआ। वही ओम् ब्रह्म है और ब्रह्मज्ञान का एक मात्र साधन है ।

येन पश्यन्ति विद्वांसः सर्वज्ञं परमामृतम्[१९]।
तदेतद् ब्रह्मभुवनं प्रणवे यत्र सूरयः[२०]।
प्रपश्यन्ति धिया नित्यं तत्ते वक्ष्यामि संश्रृणु[२१]।।१०।।

(येन विद्वांसः सर्वज्ञं परम-अमृतं पश्यन्ति । तत् एतत् ब्रह्मभुवनं सूरयः यत्र धिया नित्यं प्रणवे प्रपश्यन्ति तत् ते वक्ष्यामि संश्रृणु ।)

जिससे विद्वान् लोग सर्वज्ञ परम अमृततत्व को पहचानते हैं, वही यह ब्रह्म का स्थान है। उस स्थान को विद्वान लोग बुद्धि के द्वारा नित्य प्रणव में देखते हैं, वही मैं तुम्हें कहता हूँ, एकाग्रचित्त होकर सुनो ।

संहारसंज्ञकं चापि व्यञ्जनं चार्धमात्रिकम्[२२]।
बालसूर्यप्रतीकाशं सबिन्दुं च तदक्षरम्[२३]।।११।।

तदप्योङ्कारनिर्दिष्टं जितासुर्युक्तचेतसा[२४]।
हृज्ज्योतीयमकारान्ते बिन्दुरूपा प्रदृश्यते[२५]।।१२।।

(संहारसंज्ञकं च अपि अर्धमात्रिकं व्यञ्जनं च बालसूर्य प्रतीकाशं सबिन्दुं तत् अक्षरं च तत् अपि ओंकार-निर्दिष्टं, इयं हृत् ज्योतिः जितासुः युक्तचेतसा अकारान्ते बिन्दुरूपा प्रदृश्यते ।)

संहार नाम से भी आधी मात्रावाला व्यञ्जन (म्) बालसूर्य के कान्ति जैसा बिन्दुयुक्त वह अक्षर भी ओंकार कहा गया है । यह हृदयस्थित ज्योति प्राणजयी एवं युक्तचित्त वालों को अकारान्त में बिन्दुरूप से दिखाई देता है ।

बिन्दोरुपरि नादश्च शुद्धस्फटिकसन्निभः[२६]।
विशुद्धचेतसः शक्ते प्रकाशयति चेतसि[२७]।।१३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(शक्ते! बिन्दोः उपरि शुद्ध-स्फटिक-सन्निभः नादः च विशुद्ध चेतसः चेतसि प्रकाशयति।)

हे शक्ते, बिन्दु के ऊपर शुद्ध स्फटिक के समान वह नाद निर्मलचित्त वाले के हृदय में भासमान होता है।

तस्मिन् विश्वाधिको रुद्रो महर्षिः कृष्णपिङ्गलः[२८]।
ऊर्ध्वरेता विरूपाक्षस्तिष्ठतीत्याहुरागमाः[२९]।
आगमान्तैकसम्बोध्यो रुद्र एव न चापरः[३०]।।१४।।

(तस्मिन् विश्व-अधिकः कृष्णपिङ्गलः ऊर्ध्वरेता विरूपाक्षः महर्षिः रुद्रः तिष्ठति इति आगमाः आहुः आगम-अन्त-एक संबोध्यः रुद्र एव न च अपरः।)

उसमें संसार से निर्मुक्त पीतावृत, नीलकान्तिवाला, ऊर्ध्वरेता विरूपाक्ष (विशिष्ट दृष्टि वाले) महर्षि रुद्र रहते हैं - ऐसा आगमों में कहा गया है। उपनिषदों का एक मात्र ज्ञेय वह रुद्र ही है, दूसरा कोई नहीं।

(**टिप्पणी** - ऊर्ध्वरेता से तात्पर्य है कि जिसने अपने वासनात्मक, विचारों पर नियन्त्रण कर अन्तःशक्ति को जाग्रत कर लिया है।

तमागमान्तसंबद्धममृतं कृष्णपिङ्गलम्[३१]।
तद्द्रष्टुमिच्छतः शक्ते दृष्टिरोंकार एव च[३२]।।१५।।

(आगमान्त-संबद्धं तम् कृष्णपिङ्गलम् अमृतं द्रष्टुं इच्छतः, हे शक्ते!, तत् दृष्टिः ओंकार एव च।)

उपनिषदों से ज्ञेय पीतावृत नील अमृततत्व को देखने की इच्छा वाले के लिए हे शक्ते! वह ओंकार ही एकमात्र साधन है।

ओङ्कारो वाचकस्तस्य वाच्यो रुद्रोऽमृताक्षरः[३३]।
इति वेदावसानज्ञः स्वयम्भूः प्राह धर्मदृक्[३४]।।१६।।

(तस्य वाचकः ओंकारः अमृतः अक्षरः रुद्रः वाच्यः इति वेद-अवसानज्ञः धर्मदृक् स्वयंभूः प्राह।)

उसका वाचक ओंकार है तथा मर्त्य तथा क्षरस्वरूप से परे रहनेवाला रुद्र वाच्य है - ऐसा वेदान्तज्ञ धर्मद्रष्टा ब्रह्मदेव ने कहा था।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

साङ्ख्यादयोऽपि विद्वांसः सदा प्रणवसंस्थिताः[३५]।
नादोपरि महादेवं पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषा[३६]।।१७।।

(साङ्ख्यादयः विद्वांसः अपि सदा प्रणव-संस्थिताः नाद-उपरि महादेवं ज्ञानचक्षुषा पश्यन्ति।)

सांख्य आदि के विद्वान लोग भी सदैव ओंकार में स्थित होकर नाद के ऊपर उस महादेव को ज्ञानदृष्टि से देखते हैं।

श्लाघ्या व्यासादयोप्येतैर्विशुद्धाः प्रणवाक्षरैः[३७]।
चेतसा संप्रपश्यन्ति नादान्ते वृषभध्वजम्।।१८।।

(श्लाघ्याः व्यासादयः अपि एतैः विशुद्धाः प्रणव-अक्षरैः चेतसा नादान्ते वृषभध्वजं संप्रपश्यन्ति।)

प्रशंसनीय व्यास आदि भी इस पवित्र ओंकार के द्वारा बुद्धि से नाद के अन्त में रुद्र को देखते हैं।

संसारपाशबद्धानां योगिनामप्ययोगिनाम्[३८]।
नान्यत् पश्यामि भैषज्यं मृत्योस्त्रैयंबकादृते[३९]।।१९।।

(संसार-पाश-बद्धानां योगिनाम् अयोगिनाम् अपि त्रैयम्बकात् ऋते मृत्योः भैषज्यं न अन्यत् पश्यामि ।)

गृहस्थों, योगियों तथा अयोगियों के लिए भी इस रुद्र के सिवा मृत्यु से छूटने के लिए दूसरा कोई उपाय नहीं देखता हूँ ।

तामागमान्तात् संसिद्धममृतं कृष्णपिङ्गलम्[४०]।
ओङ्कारं मूर्ध्नि निक्षिप्तं ध्यायन् यः प्रणवं जपेत्[४१]।।२०।।

(आगमान्तात् संसिद्धं मूर्ध्नि निक्षिप्तं कृष्ण-पिङ्गलं तम् अमृतम् ओंकारं ध्यायन् यः प्रणवं जपेत् ।)

उपनिषदों से प्रशंसित, मस्तक में स्थित, उस पीतावृत, नील अमृततत्व ओंकार का ध्यान करते हुए जो प्रणव का जप करता है -

तस्यात्मनि महादेवः प्रकाशयति सन्ततम्[४२]।
किं चात्मा योगिनां साक्षान्महादेवो हृदि स्थितः[४३]।।२१।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(तस्य आत्मनि महादेवः सन्ततं प्रकाशयति किम् च आत्मा योगिनां हृदि साक्षात् महादेवः स्थितः।)

उसके आत्मा में महादेव सतत् प्रकाश देते हैं, और आत्मा ही क्या बल्कि उन योगियों के हृदय में साक्षात महादेव रुद्र ही वास करते हैं ।

ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणाति विश्वभुक्[४४]।
सुप्रीतो भगवान् रुद्रो रुद्रकोटिभिरावृतः[४५]।।२२।।

(सर्वस्य जगतः ईशः प्रभुः विश्वभुक् सुप्रीतः रुद्र कोटिभिः आवृतः भगवान् रुद्रः प्रीणाति।)

सभी जगत् के स्वामी प्रभु, संसार का भोग करने वाले, सुप्रसन्न, अनेक रुद्रों से घिरे हुए भगवान् रुद्र प्रसन्न रहते हैं -

ओङ्कारस्त्वयमागत्य युक्तचित्तस्य सन्निधौ[४६]।
तिष्ठतीति यतस्तस्मिंस्त्वं चैवं पश्य मूर्धनि[४७]।।२३।।

(ओङ्कारस्तु अयं युक्तचित्तस्य संन्निधौ आगत्य तिष्ठति इति। यतः तस्मिन् त्वं च एवं मूर्धनि पश्य।)

और ओंकार के रूप में युक्तचित्त योगी के समीप आकर रहते हैं। इसलिए तुम भी मस्तक के अंदर वैसा देखो।

इति मे ब्रह्मणः कोशं कोशस्थं परमामृतम्[४८]।
विधाय विधिवन्न्यासमृषिच्छन्दश्च दैवतम्[४९]।
विनियोगं तु विश्वात्मा योगनिष्ठोऽभवत्स्वयम्[५०]।।२४।।

(इति विश्वात्मा मे ब्रह्मणः कोशं कोशस्थं परम-अमृतं विधाय न्यासं ऋषिः छन्दः दैवतं च विधिवत् विनियोगं विधाय तु स्वयं योगनिष्ठः अभवत्।)

इस प्रकार विश्वात्मा ब्रह्मदेव ने मुझसे ब्रह्म के कोश को, कोशस्थित परम अमृत तत्व को, न्यास-ऋषि-छंद और देवता को विधिवत् बताकर तथा इनके विनियोग को भी बताकर स्वयं योग में स्थित हो गए।

त्वं चोक्तेन विधानेन गायत्र्या प्रणवेन वा[५१]।
प्राणसंयमनं कृत्वा पूर्वमात्मविशुद्धये[५२]।।२५।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(त्वं च उक्तेन विधानेन गायत्र्या वा प्रणवेन पूर्वं आत्मविशुद्धये प्राणसंयमनं कृत्वा-)

तुम भी इस उक्त विधान से गायत्री या प्रणव मंत्र के द्वारा पहले आत्मविशुद्धि के लिए प्राण का संयम कर -

विशुद्धचेताश्चोङ्कारकायस्थं परमामृतम्[५३]।
विज्ञाय स्वशरीरेऽस्मिन् विन्यस्योङ्कारमक्षरम्[५४]।।२६।।

(विशुद्धचेताः कायस्थम् ओंकार परम-अमृतं च विज्ञाय अस्मिन् ओंकार-अक्षरं स्व-शरीरे विन्यस्य (तिष्ठ)।)

निर्मल चित्त हो, शरीर में स्थित ओंकार रूपी परमतत्व को जानकर, उस ओंकार अक्षर का अपने शरीर में न्यास करो।

न्यस्तमन्त्रतनुर्धीरः सितभस्मावगुण्ठनः[५५]।
जितासुरेव कार्याणि स्वे स्वे संहत्य कारणे[५६]।
विष्णोः पदे च परमे चतुर्भिश्च समन्विते[५७]।।२७।।

(न्यस्तमन्त्रतनुः सितभस्मावगुण्ठनः धीरः जितासुः एव चतुर्भिः च समन्विते विष्णोः परमे पदे कारणे च स्वे स्वे कार्याणि संहत्य (तिष्ठति) ।)

उक्त मंत्र से न्यास किए हुए, शुभ्र भस्म लगाए हुए, धीर योगी, प्राण को वश में करके ही चारों अवस्थाओं (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय) से परिपूर्ण विष्णु के परम पद रूपी कारण में अपने सभी कार्यों का उपसंहार कर देते हैं ।

चित्तं निधाय योगेन देहेऽस्मिन् ब्रह्मणः पुरे[५८]।
गुहायां तु स्थितं रुद्रं परमानन्दविग्रहम्[५९]।
गुहायां यदि निष्कामो जन्म नेच्छति चेत् पुनः[६०]।।२८।।

(अस्मिन् देहे ब्रह्मणः पुरे परमानन्द-विग्रहं गुहायां तु स्थितं रुद्रं योगेन चित्तं निधाय (तिष्ठति)। यदि जन्म न इच्छति चेत् निष्कामः (योगेन) गुहायां (चित्तं) पुनः (निधाय)।)

ब्रह्म के वास स्थानरूपी इस शरीर में परमानन्द विग्रह रूप, गुहा में स्थित, रुद्र को, योग के द्वारा चित्त में लगाना चाहिए। यदि पुनर्जन्म की इच्छा न हो तो निष्काम होकर हृदय गुहा में (पूर्वोक्त रीति से) योग के द्वारा चित्त को लगाना चाहिए ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यस्त्वेनं परमात्मानं परमानन्दविग्रहम्[६१]।
गुहाप्रविष्टममृतं तारकेण जपेत् सदा[६२]।
स कालं समतिक्रम्य दीर्घायुर्ब्रह्मविद्भवेत्[६३]।।२९।।

(यः तु एनं परनानन्द-विग्रहम् अमृतं गुहाप्रविष्टं परमात्मानं तारकेण सदा जपेत् सः कालं समतिक्रम्य दीर्घायुः ब्रह्मवित् भवेत्।)

जो इस परमानन्द विग्रह अमृतरूप हृदय में स्थित परमात्मा को ओंकार के द्वारा सदा जप करता है, वह मृत्यु को पार कर दीर्घायु तथा ब्रह्मज्ञ होता है।

प्रणवं व्याहरन् वाचा यस्त्यजेत् कायमात्मनः[६४]।
ब्रह्मैवासौ भवेत्तस्मात् कालजित् सोऽपि पुत्रक[६५]।।३०।।

(वाचा प्रणवं व्याहरन् यः आत्मनः कायं त्यजेत् असौ ब्रह्म एव भवेत्। तस्मात् पुत्रक! सः अपि कालजित् (भवति)।)

वाणी (वैखरी) से प्रणव का उच्चारण करते हुए जो अपना शरीर छोड़ता है, वह ब्रह्म ही हो जाता है। इसीलिए हे पुत्र, वह भी मृत्युजित् हो जाता है।

एवं चापि जयोपायः कालस्य मुनिसत्तम[६६]।।३१।।

(मुनिसत्तम! कालस्य जय-उपायः एवं च अपि।)

हे मुनिश्रेष्ठ, मृत्यु को जीतने का उपाय एक दूसरा ऐसा भी है।

हृत्पद्मेऽष्टदलोपेते कन्दमध्यात्समुत्थिते[६७]।
द्वादशाङ्गुलनालेऽस्मिंश्चतुरङ्गुलवन्मुखे[६८]।।३२।।

प्राणायामैर्विकसिते केसरान्वितकर्णिके[६९]।
सुधारसं विमुञ्चद्भिः शशिरश्मिभिरावृते[७०]।।३३।।

(कन्दमध्यात् समुत्थिते द्वादश-अङ्गुल-नाले-चतुरङ्गुलवत्-मुखे प्राणायामैः विकसिते केसरान्वित-कर्णिके अस्मिन् अष्टदलोपेते हृत्-पद्मे शशिरश्मिभिः आवृते सुधारसं विमुञ्चद्भिः-)

कन्दमध्य से निकला हुआ, बारह अंगुल ऊँचा नाल, चार अंगुल मुखवाला, प्राणायाम के द्वारा विकसित केसरयुक्त कर्णिकावाला, इस अष्टदलयुक्त हृदयकमल में, चन्द्रकिरणावृत अमृतरस को छोड़ता हुआ -

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ऋतं सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्[७१]।
ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपं सदाशिवम्[७२]।।३४।।

(पुरुषं परं ब्रह्म ऋतं सत्यं कृष्ण-पिङ्गलं ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपं सदाशिवम् -)

उस पुरुषाकार परमब्रह्म को - जो भीतर बाहर दोनों में यथार्थ रूप है, पीतावृत नील कांतिमान्, ऊर्ध्वरेता, त्रिनेत्रधारी, सबमें व्याप्त, सदाशिव -

पञ्चवक्त्रं महादेवं दशबाहुं त्रिलोचनम्।
शुद्धस्फटिकसंकाशं सर्वभूतहृदिस्थितम्[७३]।।३५।।

(पञ्चवक्त्रं महादेवं दशबाहुं त्रिलोचनं शुद्धस्फटिकसंकाशं सर्वभूतहृदि स्थितम् -)

पंचमुख, महादेव, दशबाहु, तीन रश्मिवाला, शुद्ध स्फटिक के समान कांतिमान् सभी जीवों के हृदय में स्थित -

षोडशच्छदसंयुक्तं शिरःपद्मादधोमुखात्[७४]।
निर्गतामृतधाराभिः सहस्राभिः समन्ततः।
प्लावितं पुरुषं तत्र चिन्तयेत् सुसमाहितः[७५]।।३६।।

(शिरःपद्मात् अधोमुखात् षोडश-छद-संयुक्तं निर्गतामृत-सहस्राभिः धाराभिः समन्ततः तत्र पुरुषं प्लावितं सुसमाहितः·चिन्तयेत्।)

शिरपद्म से नीचे सोलहदलवाला, अनेक स्थानों से निर्मल हजारों अमृतधारा से जो प्लावित है, उस पुरुषाकार के रूप में एकाग्रचित्त से चिंतन करना चाहिए।

त्र्यम्बकेति निष्कामो ज़पेदप्रच्युतः पथात्[७६]।
एवं वा हृदयाम्भोजे केसरान्वितकर्णिके[७७]।।३७।।

(एवं अप्रच्युतः पथात् निष्कामः त्र्यम्बक इति जपेत् वा केसरान्वित कर्णिके हृदयाम्भोजे -)

इस प्रकार अपने मार्ग में डटे हुए निष्काम भाव से त्र्यंबक मंत्र का जप करना चाहिए, अथवा केसर कर्णिकायुक्त हृदयकमल में -

वह्न्यादित्यशशाङ्कानां मण्डलैश्च समन्विते[७८]।
सुधारसं विमुञ्चद्भिः शशिरश्मिभिरावृते[७९]।।३८।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(वह्नि-आदित्य-शशांकानां मण्डलैः च समन्विते शशि-रश्मिभिः आवृते सुधारसं विमुञ्चद्भिः)

अग्नि, सूर्य और चन्द्रमणडल से जुड़े हुए, चन्द्रकिरणों से आवृत्त, अमृतरस को छोड़ते हुए -

उमाऽर्द्धदेहं वरदं कारणत्रयमीश्वरम्[८०]।
त्र्यम्बकमुदाराङ्गं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम्[८१]।।३९।।

(उमा अर्द्धदेहं वरदं कारणत्रयम् ईश्वरं त्र्यंबकम् उदार अङ्गं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम्-)

अर्द्धनारीश्वर, अभयदाता, स्थूल, सूक्ष्म और अव्यक्तकारणरूप, ईश्वर, त्र्यंबक, विशाल अंगवाला, चतुर्बाहु, तीन रश्मिवाला-

शुद्धस्फटिकसंकाशं सर्वलोकाभयप्रदम्।
अमृतेनाभिषिक्ताङ्गं परमानन्दविग्रहम्[८२]।।४०।।

(शुद्ध-स्फटिकसंकाशं सर्वलोक-अभयप्रदं अमृतेन अभिषिक्त-अंङ्गं परमानन्द-विग्रहं-)

शुद्ध स्फटिक के समान, कान्तिमान सभी जीवों को अभय देनेवाला, अमृत से पूर्ण अंगवाला, परमानन्द मूर्तिस्वरूप को -

त्र्यम्बकेन विधानेन यजेदात्मनि चेतसा[८३]।
जपेद्वा नित्यकर्माणि कुर्वन्नैमित्तिकानि च[८४]।।४१।।

(त्र्यंबकेन विधानेन आत्मनि चेतसा यजेत् वा नित्यनैमित्तिकानि च कर्माणि कुर्वन् (जपेत्)।)

त्र्यंबक मंत्र के विधान से अपने हृदय में जप करें, अथवा नित्यनैमित्तिक कर्मानुष्ठानों का आचरण करते हुए भी जप करें।

मृतसंजीवनीं तात रुद्रमेवात्मनि स्मरेत्[८५] ।।४२।।

(तात! (इदं) मृतसंजीवनीम् एवं रुद्रम् आत्मनि स्मरेत्।)

हे पुत्र! यह विधि मृतसंजीवनी है, अतः रुद्र को अपने में स्मरण करना चाहिए।

यस्तु विश्वात्मकं रुद्रं परमानन्दविग्रहम्[८६] ।
त्र्यम्बकेत्यृचा चान्यैर्यजेत् स्वात्मनि संस्थितम्[८७] ।
आत्मयाजी भवेत् सोऽपि सम्यग्विद्वद्भिरीरितम्[८८] ।।४३।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(यः तु त्र्यम्बक इति ऋचा अन्यैः च स्वात्मनि संस्थितं विश्वात्मकं परमानन्द-विग्रहं रुद्रं यजेत् सः अपि आत्मयाजी भवेत् इति सम्यक् विद्वद्भिः ईरितम् ।)

जो त्र्यंबक ऋचा से या अन्य ऋचाओं से अपनी आत्मा में स्थित विश्वात्मक मूर्तिमान परमानन्दरूप रुद्र का यजन करता है वह भी आत्मा का उपासक होता है । ऐसा यथार्थ वेदवेत्ताओं ने कहा है ।

सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि[९] ।
संपश्यन्नात्मयाजी स्यादिति स्वायंभुवोऽब्रवीत्[१०] ।।४४।।

(सर्वभूतेषु च आत्मानम् आत्मनि च सर्वभूतानि सम्पश्यन् आत्मयाजी स्यात् इति स्वायम्भुवः अब्रवीत् ।)

जीवमात्र में अपने को, और अपने में जीवमात्र को जो देखता है, वह आत्मा का उपासक होता है, ऐसा ब्रह्मदेव ने कहा था ।

आत्मस्थं परमात्मानं परमानन्दविग्रहम् ।
विशुद्धचेतसा नित्यं यः पश्यति स पश्यति[११] ।।४५।।

(आत्मस्थं परमानन्द-विग्रहं परमात्मानं विशुद्धचेतसा यः नित्यं पश्यति स पश्यति ।)

अपने में स्थित मूर्तिमान परमानन्दस्वरूप परमात्मा को निर्मल चित्त से जो नित्य देखता है, वही वास्तविक द्रष्टा है ।

सर्वभूतस्थमात्मानं परमानन्दविग्रहम्[१२] ।
स्वात्मन्यवस्थितं वापि यः पश्यति स पश्यति[१३] ।।४६।।

(वा सर्वभूतस्थं परमानन्द-विग्रहम् आत्मानं स्वात्मनि अवस्थितम् अपि यः पश्यति स पश्यति ।)

अथवा सभी जीवों में स्थित मूर्तिमान परमानन्दस्वरूप आत्मा को अपने आत्मा में स्थित जो देखता है, वही वास्तविक द्रष्टा है ।

आत्मदेहस्थमुत्सृज्य बहिःस्थं यजते यदा[१४] ।
हस्तस्थं रत्नमुत्सृज्य सोऽन्यदर्जितुमिच्छति[१५] ।।४७।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(आत्मदेहस्थम उत्सृज्य (यः) बहिःस्थं यदा यजते सः हस्तस्थं रत्नम् उत्सृज्य अन्यत् अर्जितुम इच्छति ।)

अपने शरीर में स्थित को छोड़कर जो बाहरी की उपासना करता है, वह हाथ में रखे हुए रत्न को छोड़कर दूसरे को पाने की इच्छा करता है ।

तस्मात् स्वात्मानमद्वैतं परमानन्दविग्रहम्[९६]।
सोऽहमोमितिमन्त्रेण यजन्मृत्युञ्जयो भवेत्[९७]।।४८।।

(तस्मात् परमानन्दविग्रहं स्वात्मानं अद्वैतं सोऽहमोम् इति मन्त्रेण यजन् मृत्युञ्जयः भवेत्।)

इसलिए परमानन्दस्वरूप एकमेव अपने आत्मा का, 'सोऽहमोम्' इस मंत्र से जो उपासना करता है वह मृत्युंजय होता है।

यस्तु स्वात्मन्यशक्तश्चेद्यजेद्बाह्येषु सर्वदा[९८]।
स्वयमुत्पन्नलिङ्गेऽपि स्थापिते वा विशेषतः[९९]।।४९।।

(यः तु स्वात्मनि अशक्तः चेत् सर्वदा बाह्येषु विशेषतः स्वयम् उत्पन्न-लिङ्गे वा स्थापिते अपि यजेत् ।)

जो अपने हृदय में ऐसी उपासना करने में असमर्थ हों तो सदा बाहरी उपासना विशेषतः स्वयंभू लिंग में अथवा स्थापित लिङ्ग में नित्य करें ।

त्र्यम्बकेत्यृचा वाऽन्यैर्यजेद्यस्तु सदाशिवम्[१००]।
तस्य विश्वाधिको रुद्रो महर्षिः कृष्णपिङ्गलः[१०१]।
ऊर्ध्वरेता विरूपाक्षः प्रकाशयति चेतसि[१०२]।।५०।।

(त्र्यम्बक इति ऋचा वा अन्यैः यः तु सदाशिवं यजेत् तस्य चेतसि विश्वाधिकः कृष्णपिङ्गलः ऊर्ध्वरेता, विरूपाक्षः महर्षिः रुद्रः प्रकाशयति ।)

त्र्यंबक इस ऋचा से अथवा अन्य ऋचा से जो सदाशिव की उपासना करता है, उसके हृदय में विश्व से परे पीतावृत नीलकांतिवाले ऊर्ध्वरेता त्रिनेत्र महर्षि रुद्र प्रकाशित होते हैं ।

मृत्युभीतस्त्वशुद्धोऽपि सर्वावस्थासु सर्वदा[१०३]।
सर्वावस्थस्तु सर्वत्र मृतसंजीवनीं जपेत्[१०४]।।५१।।

(मृत्युभीतः तु अशुद्धः अपि सर्वावस्थासु सर्वदा सर्वत्र सर्वावस्थः तु मृतसंजीविनीं जपेत् ।)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मृत्यु से भयभीत सामान्य व्यक्ति भी सभी अवस्थाओं में सदा, किसी भी स्थिति में, सर्वत्र, मृतसंजीविनी (त्र्यंबक) मंत्र का जप करे ।

संसारपाशबद्धानां नराणां मोक्षकाङ्क्षिणाम्[१०५] ।
नान्यत् पश्यामि भैषज्यं मृत्योस्त्रैयम्बकादृते[१०६] ।।५२।।

(संसारपाशबद्धानां मोक्षकाङ्क्षिणां नराणां त्रैयम्बकात् ऋते मृत्योः भैषज्यं अन्यत् न पश्यामि।)

संसारपाश में जकड़े हुए किंतु मोक्ष की इच्छा रखनेवाले मनुष्यों के लिए त्र्यंबक के सिवाय मृत्यु से छूटने का दूसरा कोई उपाय नहीं दिखाई देता।

एवं वा विजयोपायः कालस्य मुनिसत्तम[१०७] ।।५३।।

(मुनिसत्तम! एवं वा कालस्य विजयोपायः।)

हे मुनिश्रेष्ठ! और ऐसा ही दूसरा उपाय मृत्यु को जीतने का है।

नारायणं जगन्नाथं वासुदेवमजं हरिम्[१०८] ।
चतुर्भुजमुदाराङ्गं शङ्खचक्रगदाधरम्[१०९] ।।५४।।

(नारायणं जगन्नाथं, वासुदेवम् अजं चतुर्भुजम् उदार-अङ्गं शङ्ख-चक्र-गदाधरं हरिम् -)

नारायण, जगन्नाथ, वासुदेव, अज, चतुर्भुज, विशाल अंगवाले, शंखचक्रगदाधारी हरि -

किरीटकेयूरधरं पद्मपत्रनिभेक्षणम्[११०] ।
पद्मोदरदलाभोष्ठं सर्वलोकाभयप्रदम्[१११] ।।५५।।

(किरीटकेयूरधरं पद्मपत्रनिभेक्षणं पद्मोदरदलाभोष्ठं सर्वलोक-अभयप्रदं (हरिं) -)

मुकुटकेयूरधारी पद्मपत्र के समान आँखवाले, कमलमध्य की कांति के समान ओंठवाले, सभी लोगों को अभयदेने वाले हरि का -

स्मरन् ब्रह्मपुरे त्वस्मिन् हृत्सरोरुहमध्यगे[११२] ।
स्मरन् नारायणं देवं तद्गतेनान्तरात्मना[११३] ।।५६।।

(हृत्सरोरुहमध्यगे अस्मिन् ब्रह्मपुरे स्मरन् तद्गतेन अन्तर्-आत्मना देवं नारायणं स्मरन्।)

हृदयकमल के अन्तर्गत इस ब्रह्मपुरी में ध्यान करते हुए स्वयं उसमें तल्लीन होकर नारायणदेव का चिंतन करना चाहिए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिनोक्तेन मार्गेण कालजित् सोऽपि पुत्रक[११४] ।।५७।।

((हे) पुत्रक! विधिनोक्तेन मार्गेण सः अपि कालजित् (भवति)।)

हे पुत्र! शास्त्रोक्त मार्ग से ऐसा करनेवाला भी कालजित् होता है ।

यद्वा समाधिमभ्यस्य वञ्चयेत् कालमागतम्[११५] ।।५८।।

(यत् वा समाधिं अभ्यस्य आगतं कालं वञ्चयेत्।)

अथवा समाधिक्रम का अभ्यास कर आगत मृत्यु को टाल देना चाहिए ।

समाधिः शून्यता प्रोक्ता सर्वारम्भविवर्जिता[११६] ।
समाधिः समतावस्था जीवात्मपरमात्मनोः[११७] ।।५९।।

(सर्वारम्भविवर्जिता शून्यता समाधिः प्रोक्ता, जीवात्म-परमात्मनोः समता अवस्था समाधिः (प्रोक्ता)।)

सभी संकल्पों से रहित शून्यवस्था को समाधि कहते हैं। जीवात्मा और परमात्मा की एकरूपता की अवस्था समाधि है।

शून्यता सा तु विज्ञेया ध्यानादिभिरसंयुता[११८] ।
शून्यतामभ्यसेन्नित्यं सर्वारम्भविवर्जिताम्[११९] ।।६०।।

(ध्यानादिभिः असंयुता सा तु शून्यता विज्ञेया सर्वारम्भ-विवर्जितां शून्यतां नित्यमभ्यसेत्।)

ध्यानादिक्रम से रहित जो अवस्था है उसे शून्यता कहते हैं। सभी संकल्पों से रहित ऐसी शून्यावस्था का नित्य अभ्यास करना चाहिए।

भावाभावविनिर्मुक्तं भावयेद्यः समाधिना[१२०] ।
सोऽपि पुत्र विशेषेण मृत्युजिद्योगविद्भवेत्[१२१] ।।६१।।

(यः समाधिना भावाभावविनिर्मुक्तं भावयेत् पुत्र! सः अपि विशेषेण मृत्युजित् योगवित् भवेत्।)

जो योगी समाधिक्रम के द्वारा भावाभावविरहित तत्त्व का चिंतन करते हैं, हे पुत्र! वे ही विशेष रूप से मृत्यु को जीतने वाले तथा योगवेत्ता होते हैं ।

✻ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे षष्ठोऽध्यायः ।

इस प्रकार वसिष्ठसंहिता योगकाण्ड का छठा अध्याय समाप्त हुआ ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट -१

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - १

संकेत-सूची

अ. - अध्याय

कुमार. - कुमारसम्भवः

ख्रि. - ख्रिस्ताब्धः

दउ. - दर्शनोपनिषद्

नागोजी. - नागोजीभट्टकृता पातञ्जलसूत्रवृत्तिः

नित्याप्र. - नित्याचारप्रदीपः (नरसिंहवाजपेयिकृतः)

बृया. - बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृतिः (कैवल्यधामप्रकाशनम्)

ब्रविज्ञा. - ब्रह्मसूत्रव्याख्यानं विज्ञानभिक्षुकृतम्

ब्रास. - बाह्मणसर्वस्वं हलायुधकृतम् (कलकत्ता १९६०)

भावागणेश. - भावागणेशकृता पातञ्जलवृत्तिः

मनु. - मनुस्मृतिः

मल्ली. - मल्लीनाथः

मेधा. - मेधातिथिः

य. - वसिष्ठसंहिता योगकाण्डमातृका
(भण्डारकर प्राच्य विद्या शोध संस्थान सं. २९७। १८९२ - ९५)

याज्ञ. - याज्ञवल्क्यस्मृतिः

योगवा. - योगवार्तिकं विज्ञानभिक्षुविरचितम्

योया. - योगयाज्ञवल्क्य (श्रीदिवाणजू संपादितः)

योसिचं. - योगसिद्धान्तचन्द्रिका नारायणतीर्थविरचिता (चौखंवा १९११)

र. - वसिष्ठसंहितामातृका (भ. प्रा. शो. सं. - २१९। १८८४-८६)

रघु. - रघुवंशः

राघव. - राघवभट्टकृता श्री श्रीशारदातिलकतन्त्रटीका (कलकत्ता १९३३)

ल. - वसिष्ठसंहितामातृका (प्राज्ञ पाठशाला, वाई)

व. - वसिष्ठसंहितामातृका (इन्डिया आफिस लायब्रेरी, कीथ)

वसं. - वसिष्ठसंहिता योगकाण्डम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

श. - वसिष्ठसंहितामातृका (इन्डिया आफिस लायब्रेरी, एगेलिंग)

श्लो. - श्लोक :

ष. - वसिष्ठसंहितामातृका (बोडलियन लायब्रेरी)

सूज्ञा. - सूतसंहिता ज्ञानयोगखण्डः

हठप्र. - हठप्रदीपिका

हठप्रटी. - हठप्रदीपिकाटीका ब्रह्मानंदकृता

ग्रन्थ के आधारभूत हस्तलेखों की सूची

वसिष्ठ संहिता योगकाण्ड के आधारभूत ६ हस्तलेख निम्नलिखित रहे हैं -

य - भण्डारकर प्राच्यविद्या शोधसंस्थान सं २९७।१८९२ - ९५ लिपि देवनागरी.

र - भ. प्रा. शो. सं. - २१९।१८८४ - ८६ लिपि देवनागरी-
यह सर्वाधिक प्राचीन हस्तलेख है जिसे सम्पादकों ने पाठ-निर्धारण के लिए अन्य हस्तलेखों की तुलना में अधिक प्रामाणिक माना.

ल - प्राज्ञ पाठशाला, वाई ३७२/३९७० लिपि देवनागरी.

व - इन्डिया आफिस लायब्रेरी, लन्दन, कीथ ५९९५ लिपि बंगाली.

श - इन्डिया आफिस लायब्रेरी, लन्दन, एगेलिंग २४३२ संवत् १७०१

ष - बोडलियन लायब्रेरी आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय विल्सन ४८३ बंगाली लिपि में भोजपत्र पर लिखा गया.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - २

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - २

हस्तलिखितग्रन्थान्तरेषु पाठभेदाः

प्रथमोऽध्यायः

* (इतः प्रभृति ८० तम श्लोकपर्यन्तं **य** मातृकामनुसृत्य प्रायशः पाठो मूले दर्शितः। तदनन्तर **र** मातृकामवलम्ब्यैव प्रायशः पाठः मूले प्रदर्शित इत्यवधेयम्। ओं नमः सिद्धं।। अथ वसिष्ठसंहिता लिख्यते।। ओं वशिष्ठं इत्यादि **य**. आद्या ८० श्लोका न सन्ति र मातृकायाम्

आद्या १० श्लोका न सन्ति **ल** मातृकायाम्

ओं नमो गणेशाय इत्यारम्भेऽधिकम् **ब** मातृकायाम्.

ओं नमः शिवाय।। इत्यारम्भेऽधिकम् **श** मातृकायाम्.

आद्याः ६ श्लोका न सन्ति **ष** मातृकायाम्)

१ याज्ञवल्क्यं मुनिश्रेष्ठं सर्वज्ञं ज्ञाननिर्मलम् **योया**. १.१

२ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं सदा ध्यानपरायणम् **योया**. १.१

३ सर्वभूतसमं शान्तं..**श**.

४ **योया**. १.४-५; अयं श्लोकः तृतीय श्लोक पूर्वार्धोत्तरम् **व**
कुलज्ञं सर्वं..परमार्थ प्रयोजनम् **व**.
अयं श्लोकः चतुर्थ श्लोक पूर्वार्धोत्तरम् **श**.

५ जितक्रोधं जिताहारं जितामयम् **योया**. १.२

६ सौम्यं संध्योपासनतत्परम् **योया**. १.३

७ ब्राह्मणैश्च समावृतम्। **योया**. १.४, ब्राह्मणैश्च सुशोभितम् **व**.

८ नित्यकर्मरतं नित्यं **व**, **श**; पौर्वाहिक **श**, धर्मतरं **य**.

९ महाकारुणिको मुनिः **व**; दुभमौ गार्ग्येतद्वाक्यमब्रवीत्। **योया**. १.७

१० शुद्धयान्वितः **य**; (मुद्रितः पाठः **व श** मातृकयोर्दृश्यते.)

११ **व श** मातृकयोरेवेदं वाक्यं समुपलभ्यते।

१२ **योया**. १.८, **श**; हितेरतः **य**. **व**.

१३ दुःखसमाश्रयात् **श**.

१४ इदमर्धं नास्ति **व**; जरान्वितात् **श**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१५ सर्वज्ञानमयादस्मान्मुक्तोऽहं स्यां सदा सुखी **श.**
(इतः प्रभृति ष मातृकारम्भः, "श्रीदुर्गा। सर्वज्ञानमयो यस्मान्मुक्तोऽहं स्यां सदा सुखी। पुत्रेणैवं.." इत्यादि रूपः।)

१६ एवं पृष्टः स भगवान् सभामध्ये स्त्रिया तया **योया १.९**; शक्तिना ब्रह्मवादिना **व.**

१७ ऋषीनालोक्य नेत्राभ्यां वाक्यमतदभाषत **योया** १.९ **य**

१८ याज्ञवल्क्य उवाच **योया**. १.१०

१९ ..ते गार्गि ब्रह्मविदां वरे **योया**. १.१०, शक्तिर्बुद्धि..**ष.**

२० वक्ष्यामि योगसर्वस्वं ब्रह्मणा कीर्तितं पुरा **योया.** १.१०..मुपायं भयनाशनं **श.** वक्ष्यामि सर्वसुखदमुपायं भवनाशनं **ष.**

२१ इत्युक्त्वा ब्रह्मविच्छ्रेष्ठो याज्ञवल्वयस्तपोनिधिः **योया**. १.११; ब्रह्मवित्तमः **श, ष.**

२२ नारायणं जगन्नाथं सर्वभूतहृदिस्थितम् **योया**. १.१२; ध्यायन्नारा ..**श.**

२३ (इतः प्रभृत्येव **ल** मातृका) वासुदेवं जगद्योनिं **व, श, ल** वासुदेवं जगन्नाथं ध्यानध्येयं निरञ्जनं **ष**; वासुदेवं जगद्योनिं योगिध्येयं निरञ्जनम् **योया**. १.१२.

२४ नित्यं जगत्कर्तारमीश्वरम् **ल**; परमात्मानमीश्वरम् **व** आत्मानं परमं नित्यं परमात्मानमीश्वरं **ष**. आनन्दममृतं नित्यं परमात्मानमीश्वरम् **योया**. १.१३.

२५ च समाहितः **श.**, ध्यायन् हृदि हृषीकेशं मनसा सुसमाहितः। **योया**. १.१३

२६ नेत्राभ्यां तां समालोक्य कृपया वाक्यमब्रवीत् **योया**. १.१४ कृपया इदमब्रवीत् **व.**, **ष.**; शक्तिं चालोक्य कृपया वाक्यमेतदभाषत **श.**

२७ एह्येहि गार्गि सर्वज्ञे सर्वशास्त्रविशारदे **योया**. १.१४, पितृभक्त जितेंद्रिय **श.**

२८ योगं वक्ष्यामि विधिवद्धात्रोक्तं परमेष्ठिना **योया**. १.१५; प्रोक्तं यत् पूर्वं मम मुक्तिदं **ल.**; ब्रह्मणा पूर्वं प्रोक्तं मम मुक्तिदम् **ष.**

२९ पद्मासने समासीनं **योया**. १.१६; पद्मासीनं सुखासीनं **व.**; नास्तीदमर्धं **ल.** मातृकायाम्।

३० ब्रह्माणं परमेष्ठिनम् **योया**. १.१६, **श, ष.**, नास्तीदमर्धं **ल.** मातृकायाम्।

३१ **योया**. १.१७; स्तोत्रं प्रणम्य च **ष.**

३२ **व.**, **श.**, यन्मां त्वं परिपृच्छसि **योया.** १.१७, **श.**;
नास्तीदमर्धं **ल.** मातृकायाम्; निदमेवार्थ **य.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३३ चतुर्मुख पितामह **योया** १.१८; सुप्रसन्नवरानन **ष.**

३४ अनेकशास्त्रसिद्धान्तं भ्रान्तचित्तो भ्रमातुरः **व.**; अनेकमतसिद्धान्त भ्रान्तचित्तो भ्रमाम्यहम् **श**; पारंगं योगसिद्धान्त वेदागमपरायण **ष.**, इदमर्धनोपलभ्यते **ल.** पुस्तके

३५ तन्नित्यं परमं **व.**, तत्त्वं नित्यं परं पदं **श.**, तत्त्वं नित्यं परात्परं **ष.**, इदमर्धं नास्ति **ल.** मातृकायाम्।

३६ आनन्दमक्षर **ल.**, मक्षयं गुह्यम् **व.**, **श.**, मव्ययं गुह्यम् **ष.**

३७ मयैवमुक्तो द्रुहिणः स्वयं ...**योया**. १.१९, नास्तीदमर्ध **ल.** मातृकायाम्

३८ मामालोक्य प्रसन्नात्मा ज्ञानकर्माण्यभाषत **योया**. १.२०; ..मां स प्रसन्नास्यो मम तत्रैवमब्रवीत् **ल.**, ..न्नात्मा मम तत्वेदमब्रवीत् **व.**, .. न्नाङ्गो मम तत्रैवमब्रवीत् **श.**; ..न्नात्मा मम तत्रेदमब्रवीत् **ष.**

३९ ज्ञानस्य द्विविधौ .. **योया**. १.२०; ज्ञानस्य द्विविधावेतौ ..वेद-बोधितौ **ल.**, वेदबोधितौ **श.**, द्विविधो ज्ञेयो पन्थानो वेददर्शिनः **ष.**

४० अनुष्ठितौ तौ विद्वद्भिः प्रवर्तक.. **योया**. १.२१.

४१ वर्णाश्रममोक्तं कर्मैव विधिवत् कामपूर्वकम् **योया**. १.२५,
(प्रथमपादस्याष्टाक्षरमितं स्थलं रिक्तम् **ल.** मातृकायाम्);
वर्णाश्रमोक्तं कर्मैव कायसंकल्प ..**व.**, वर्णाश्रमोक्तकर्मैव **ष.**

४२ ..भवेदेतत् पुनरावृत्तिहेतुकम् **योया**. १.२२, संसारपरिवर्तनात् **ल.**, जन्ममृत्युप्रवर्तनात् **श.**

४३ (संयुक्तमित्यक्षरत्रयस्थाने रिक्तं स्थलं दृश्यते **ल.**); सर्वसंकल्पवर्जितम् **श.**, कामसंकल्पवर्जितम् **ष**

४४ निवर्तकं भवत्येतज्जन्मनस्तु **ल.**, ..न्ममृत्युनिवर्तनात् **श.**, **ष**

४५ निवर्तकं भवेदेतत्द्विविधं मुनयो विदुः **व.**, **श.**, **ष.**

४६ **ब्रविज्ञा**. ८,..चैव प्रत्येकं **ष**, द्विविधंमुक्ति **ब्रविज्ञा** ८, ५४६, क्रियैवैत द्यत्तद्विहितसाधनैः **श.**

४७ ..बहिः क्रियाभिश्च यत्तद्विहितसाधनैः **ब्रविज्ञा** ८, ५४६, क्रियैवैत द्यत्तद्विहितसाधनैः **श.**

४८ आभ्यंतरं तु मनसा विध्यनुष्ठानमात्मनि। **ब्रविज्ञा**. ८, आभ्यन्तरं च मनसाविध्यनुष्ठानमात्मनि **ब्रविज्ञा** ५४६; बुद्ध्यैव बुद्ध्यानुष्ठान र, तु विध्येवं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विध्यनुष्ठानमात्मनि **श.**; आभ्यन्तरं च बुद्ध्यैव बुध्वानुष्ठानमात्मवत् **ष.**, निष्ठानमा ..**य.**

४९ तयोरन्यतरत् कुर्यान्नित्यं कर्म यथाविधि **ब्रविज्ञा.** ८, योगवार्तिक २.३१, तयोरन्यतमंकु **ब्रविज्ञा.** ५४६, नित्यकर्म **ल.**, तयोरन्यतरं कुर्यान्नित्यं कर्म यथाविधि **व.**, तयोरन्यतमत् कुर्यान्नित्यं **श.**

५० सदानन्दं समाप्नुयात् **व.**

५१ ज्ञानिना ज्ञानिना वापि..हस्य धारणम् **ब्रविज्ञा.** १०, ५४६ यावद्देहस्य धारणं **ल.**, **श.** **ष.**

५२ **ब्रविज्ञा.** १०, ५४६, **श.** र्णाश्रमं प्रोक्तं **य.**

५३ इति मे कर्मसर्वस्वं योगरूपंच **योया.** १.४० इत्येतत्. इत्येतत् **ल.**, कर्मसर्वज्ञः कर्मकाण्डहिते रतः **व**, इत्येतते ज्ञानसर्वस्वं **श.**, इत्येतज्ज्ञानसंपत्तिः कर्म **ष.**

५४ उपदिश्य ततो ब्रह्मा **योया.** १.४०, **ष.**, उपदिश्य तदा ब्रह्मन् **य.**, **र.**

५५ **ल.**, **श.**, ज्ञानेन सह कुर्वतः **य.**, विप्रेन्द्र विधिवत् कुरु धर्मतत् **व.**, मति विप्रेन्द्र मुक्तये कुरुकर्मतत् **ष.**

(एतच्चिह्नाङ्कितं पङ्क्तिचतुष्टयं **'य'** मातृकायां नास्ति।

'ल'. पुस्तकस्थं तदत्रविनिवेशितं वेदितव्यम्।)

५६ श्रुत्वैतद्याज्ञवल्क्योक्तं वाक्यं गार्गी मुदान्विता। **योया.** १.४१,एतत् श्रुत्वा वशिष्ठोक्तं **व.**, शक्तिमतां वरः **ष.**

५७ पुनः प्राह मुनिश्रेष्ठमृषिमध्ये वरानना **योया.** १.४१, मुनिश्रेष्ठः **य.**, प्रन्वितः श्रद्धयाचितः **ष.**

५८ (नास्तीदं वाक्यं **व.** पुस्तके), गार्ग्युवाच। **योया.** १.४२

५९ ज्ञानेन सह योगीन्द्र विध्युक्तं कर्म कुर्वतः। **योया.** १.४२

६० त्वयोक्तं मुक्तिरस्तीति तयोर्ज्ञानं वद प्रभो। **योया.** १.४२, मुक्तिरुक्ता हि तद्द्वाभ्यां **ल.**, **व.**, तयोर्ज्ञानं च मे वद **श.**, ... रुक्ता हि ने पूर्वं **ष.**

६१ भार्यया त्वेवमुक्तस्तु याज्ञवल्क्यस्तपोनिधिः। योया. १.४३, वशिष्ठः प्रीतिमानसः **व.**, मुक्तस्य वशिष्ठं प्रीतिमानसः **ष.**

६२ तां समालोक्य कृपया ज्ञानरूपमाषत। **योया.** १.४३, ..लोक्य कृपया **ल**, **श.**, कृपया पत्रमालोक्य ज्ञानरूपभराभवत् **ष.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

६३ **श.** मातृकायामेवेदं वाक्यं दृश्यते।

६४ योगश्चाष्टाङ्गसंयुतः। **योया**. १.४४, ...त्मनि संस्थितः **ल**, **व**, **श**, ..त्मनि संस्थितिः **ष.**

६५ संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनोः। **योया**. १४४, **मल्लीरघु**. ८.२४, सर्व कर्मण उच्यते **व.**

६६ सर्वाण्यङ्गानि वक्ष्यामि **ल.**, तज्ज्ञानं सम्य..**ष.**

६७ समाहितमना भूत्वा **ल.**, **व.**, **श.**, **ष**

६८ तथा चासनमिष्यते **ब्रविज्ञा**. ५७२, आसनं च तथैव च **योया**. १.४६, यमश्च नियमश्चैव तथैवासनमेव च। **सूज्ञा**. १३.१, **दउ**. १.४

६९ गार्गि प्रत्या ...**योया**. १.४६, विप्र प्रत्याहारस्तथापरः **सूज्ञा**. १.३२ स्तथाब्रह्मन् प्रत्याहारस्ततः परम् **दउ**. १.५

७० **ब्रविज्ञा**. ५७२, तपोनिधे **श.**, योगाङ्गानि वरानने **योया**. १.४७, धारणा च तथा ध्यानं समाधिश्चाष्टमो मुने **सूज्ञा** १३.२, ध्यानं समाधिश्चाष्टमं मुने **दउ**. १.५

७१ तदन्यान्यान्तराणि च **ल.**, तदन्यान्यन्तराणि च **ब्रविज्ञा**. ५७२

✷ अष्टात्मकमिदं विद्धि पवित्रं पापनाशनं।
ज्ञानं गुह्यतमं प्रोक्तं कीर्तितं ते तपोधन। इत्याधिकः श्लोकः **ब्रविज्ञा.** ५७२

७२ यमाश्च दशधाः प्रोक्ता **व.**

✷ आसनानि च तावन्ति यावत्यो जीवयोनयः इत्यधिकम् **श.**

७३ आसनान्युत्तमान्यष्टौ त्रयं तेषूत्तमोत्तमम् **योया** १.४८

७४ सुखरूपाणिपुत्रक **ल. व.**, मुख्यरूपाणि पु ..**श.**, चत्वारि सूक्ष्मरूपाणि यानि च **ष.**

७५ **ल.**, **व.**, **श.**, प्राणायामस्तथा शक्ते **य.**, द्विधाप्रोक्तः **ष.**, ..हारश्च पञ्चधा **योया.** १.४८

७६ पञ्चधा प्रोक्ता ध्यानं षोढा प्रकीर्तितम् **ल.**, **व.**, **श.**, **ष.**, **योया**. १.४९

७७ समाधिस्तावति प्रोक्ता यावत् ध्यानं **ल.**, तावदेनं पृथक् श्रृणु **व.**, समाधिस्तावति प्रोक्ता यावत् ध्यानं **ल.**, तावदेनं पृथक् श्रृणु **व.**, समाधिस्तावदेवोक्तो यावद्ध्यानं पृथक् श्रृणु **श.**, समाधिस्तावता प्रोक्तो ध्यानं च द्विविधः पृथक् **ष.**

✷ लयमेकं समुद्दिष्टं श्रृणु पुत्र वचो मम इत्यधिकम् **ष.**

७८ ..चर्य दयार्जवम् **योया**. १.५०, **सूज्ञा** १.३३, **दउ** १.६,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

..चर्यंक्षमाधृतीः **ल.**, क्षमा धृतिः **व.**, **श.**, **ष.**

७९ क्षमाधृतिर्मिताहारः शौचं त्वेते यमा दश। **योया.** १.१५१, क्षमा धृतिर्मिताहारः शौचं चेति यमा दश। **सूज्ञा** १.३३, **दउ** १.६, चेति यमा दश **ष.**

८० **योया**. १.५१

८१ महिंसा सर्वयोगिभिः ल., महिंसात्वेन योगिभिः श., **योया**. १.५२, अहिंसा चैव योगिभिः **ष.**

८२ क्लेशजन्मैव जन्तुषु **योया**. १.५२, विध्युक्ता चैव हिंसा स्यात् क्लेशदानैव जंतुषु **ल.**, क्लेशजं नैव जंतुषु **व.**, विध्युक्तके त्वहिंसा स्यात् क्लेशजान्येव जंतुषु **श.**

८३ वेदेनोक्ते ..**योया**. १.५३, दभिचारो हि कर्म तत् **व.**, दिकर्मवत् **श.**, दिकर्मकृत् **ष.**

८४ **ल.**, प्रोक्तं निषिद्धं नाति भाषितम् **य.**, न यथार्थाभिभाषणम् **योया**. १.५३ **श.**, नियमार्थाभिभाषणम् **व.**

८५ हितमेतत् ब्रवीमि ते **श.**

८६ निःस्पृहः **ल.**, परद्रव्येषु निः स्पृहा योया. १.५४, **व.**, **ष.**, द्रव्येसु **य.**

८७ मिति सा प्रोक्ता ऋषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः **योया**. १.५४

८८ सर्वावस्थासु सर्वदा **ल.**, **योया**. १.५५, **व.**, **श.**

८९ मैथुनत्यागो **योया**. १.५५, सर्वदा मैथुनत्यागो **व.**, **श**।

९० संगतिर्या विधानतः। **योया**. १.५७

९१ चर्यं तु तत्..। **योया**. १.५७ .

९२ ..वा गुरोर्नित्यं ब्रह्मचर्यमुदाहृतम् : **योया**. १.५९
अयं श्लोकः यमातृकायां नोपलभ्यते **ल.** पुस्तकमनुसृत्य सोऽत्र निवेशितः।

९३ वियोगेष्वपि संपदाम् **योया**. १.६५
आत्महानौ च ..गेष्वपि संपदां **श.**

९४ तयोः प्राप्तौ च सर्वत्र **योया**. १.६६

९५ **योया**. १.६४, प्रियाप्रियेषु भृत्येषु **ष.**

९६ क्षमा सैवेति विद्वद्भिर्गदिता वेदवादिभिः **योया**. १.६५, क्षमा सैवेति गदिता विद्वद्भिर्वेदबाधिभिः **व.**, क्षमा सैवेति गदिता विद्वद्भिर्ब्रह्मवादिभिः **श.**, क्षमा एवेति कथिता मुनिभिर्वेदपारगैः **ष.**

९७ आत्मजे बान्धवे वापि मित्रे वोऽपि च सर्वदा **ष.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

९८ आवर्तते कृपाबुद्धिर्दयैषा **ल.**, आर्ते तत्र कृपाबुद्धिर्दयैषा परि.. **व.**, आर्ते तथा कृपाबुद्धिर्दयैषा परि ..**श.**

आर्तस्य तु रक्षदभिर्दया सा परिकीर्तिता **ष ।**

९९ **योया**. १.६३, कायकर्मभिः **श**..चदन्येषु मनोवाक्कायकन्दरं **ष.**

१०० **योया**. १.६४. प्रवृत्तौच निवृत्तौवा **ष.**

१०१ मुनेर्भक्ष्याः **योया**. १.६६, मुनेः प्रोक्ताः **ल.**, मुनेर्भक्तं वानप्रस्थस्य षोडश वसिष्ठ **ध. सू.** ६.२०, मुनेर्भक्ष्यं ..रण्यवासिना। अपराकं १.३१

१०२ मुद्रितः पाठः **व.** पुस्तके। यथेष्टै च गृहस्थानां द्वात्रिंशद्ब्रह्मचा ..**य.** द्वात्रिंशच्च गृहस्थानां **ल.**, **योया**. १.६७, **श.**, द्वात्रिंशत्तु गृ ..**ष.**, द्वात्रिंशत्तु गृ.. अमितं ब्रह्मचारिणः अपरार्क १.३१.

द्वात्रिंशत्तु गृहस्थस्यापरिमितं ब्रह्मचारिणः। वसिष्ठ **ध. सू.** ६.२०

१०३ **ल. व.**, एषामयं मिताहारो ह्यन्येषामल्पभोजनम्। **योया**. १६७, उक्तमेतन्मिताहारमन्येषां स्वल्पभोजनम् **श.**, **ष.**, प्रोक्तमेव मिताहारस्त्वन्येषामल्पभोजनम् **य.**

१०४ शौचं तु **योया**. १६८, **ष.**

१०५ मनः शुद्धिस्तथान्तरम् **योया**. १.६८, **व.**, **श.**, **ष.**

१०६ **योया**. १.२९, मनसाध्यात्मविद्यया **श.**, इदमर्धं नास्ति **ब.**

१०७ **व.** मातृकायामेवेदमर्ध दृश्यते

१०८ **क्उ.** २.१, संतोष आस्तिक्यं **योया**. २.१, **सूज्ञा**. १४.१, देवस्य पूजनम् **ष.**

१०९ **योया**. २.१, **सूज्ञा**. १४.१, **दउ.** २.१ जपो श्रुतम् **ष.**

११० एते तु नियमाः प्रोक्तास्तांश्च सर्वान् **योया**. २.२, एते च नियमाः प्रोक्ता योगविद्भिर्महात्मभिः **सूज्ञा**. १४.२

१११ चान्द्रायणादिभिः **योया**. २.२, वेदोक्तेन प्रकारेण कृ..**सूज्ञा**. १.४३, वेदोक्तेन प्रकारेण..णादिभिः **दउ** २.२

११२ शोषणं **श.**, शोषणं प्राहुस्तापसास्तप उत्तमं **ल.**, **योया**. २.३, शोषणं यत्तत्तप इत्युच्यते बुधैः **सूज्ञा**. १४.४, **दउ** २.३

११३ यदृच्छालाभतो नित्यमलं पुंसो भवेदिति **ल.**, **योया**. २.३, ..लाभतो नित्यं प्रीतिर्या जायते नृणाम् **सूज्ञा**. १४.५, **दउ.** २.४, ..पुंसो भवे ..लाभतो नित्यं मनस्तोषो भवेद्यदि **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

११४ **योया**. २.४, तं संतोषं विदुः प्राज्ञाः परिज्ञानैकतत्पराः **सूज्ञा**. १४.६, तत्संतोषं विदुः ..तत्पराः **दउ** २.५, संतोषस्य च लक्षणम् **ष**.

११५ **योया**. २.४ यत्तदास्तिक्यमिष्यते **श**., विश्वासो यथास्ति तव पुत्रक। आस्तिक्यमेतद् विप्रेन्द्र दानं यत्श्रुणु पुत्रक **ष**., श्रौते स्मार्ते च विश्वासो यत्तदास्तिक्यमुच्यते। **सूज्ञा**. १४.७, **दउ** २.६।

११६ **योया**. २.५ मर्थिभ्यो यत् प्र ..**श**., न्यायार्जितं धनं चान्नं श्रद्धया वैदिके द्विजे। **सूज्ञा**. १४.८

११७ अर्थिभ्यः श्रद्धया युक्तं दानमेतदुदाहृतम्। **योया**. २.५, अर्थिभ्यः श्रद्धया युक्तं **ल**., **व**., श्रद्धायुक्तेन विधिवद्दानमेतन्निगद्यते **श**,. युक्तं दानमेतदुदाहृतम् **ष**.

११८ विष्णुं वाप्यन्यमेव वा। **योया**. २.६ विष्णोरन्यस्य चैव वा **ल**., **व**., रन्यस्य चैव हि **श**., यजस्व भक्तिभावेन विष्णुं वान्यमेव वा **ष**., ब्रह्माणं विष्णुमीशानं वैश्यक्षत्रियवाडवैः **सूज्ञा**. १४.१०

११९ यथाशक्त्यर्चनं भक्त्या ह्येतदीश्वरपूजनम् **योया**. २.६, इदमीश्वरपूजनम् **ल**., यथाशक्त्यर्चनं भक्त्या चैतदीश्वरपूजनं **व**., यथाशक्त्यर्चनं भक्त्या एतदीश्वर..**श**., **ष**., यथाशक्त्यर्चनं भक्त्या यत्तदीश्वरपूजनम् **सूज्ञा**. १४.१०

१२० **ल**. पुस्तकपाठोऽयम्। रागाभ्युपेतहृदया रागाद्वेष्टानृतादिना **य**., ..दपेतहृदयं रागदुष्टाहतादिना **व**., **श**., पुस्तके नास्तीदमर्धम्, रागाद्यपेतं हृदयं **योया**. २.७, **सूज्ञा**. १४.११, **दउ**. २.८

१२१ **य**., **श**., पुस्तकयोर्नास्तीदमर्धम्, **व**. पुस्तकमनुसृत्यैतदत्र निवेशितम्। हिंसादिरहितकार्यमेतदीश्वरपूजनं **व**., हिंसादिरहितः काय एतदीश्वरपूजनम् **योया**. हिंसादिरहितः काय एतदीश्वरपूजनम् **सूज्ञा**. १४.११, रहितं कर्म यत्तदीश्वर..**दउ**. २.७, हिंसाविरहितः काय एतच्चेश्वरपूजनम् **सूज्ञा**. १४.११, रहितं कर्म यत्तदीश्वर..**दउ**. २.८

१२२ नास्ति **य**. पुस्तके **ल**., पुस्तकमनुसृत्यैतदत्र निवेशितम्। प्रोक्तं वेदानां श्रवणं बुधैः **व**., श्रवणं चैव वेदान्तश्रवणं बुधैः **श**., सिद्धान्तश्रवणं प्राहुर्द्विजानां मुनिसत्तम **सूज्ञा**. १४.१३

१२३ **योया**. २.१०, **सूज्ञा**. १४.१४., **दउ**. २.१०, **य**. पुस्तके नास्ति **ल**., पुस्तकमनुसृत्य मुद्रितः पाठः। कर्म यत् कृतं **श**.

१२४ **दउ**. २.१०., ह्रीस्तु सैवेति कीर्तिता **योया**. २.११, **सूज्ञा**. १४.१५ **व**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१२५ सर्वेषु संबद्धा सा मतिर्भवेत् **ल.**, श्रद्धा या सा मतिर्भवेत् । **योया.** २.११, वैदिकेषु हि सर्वेषु श्रद्धया या मतिर्भवेत्। **सूज्ञा.** १४.१५, वैदिकेषु च सर्वेषु श्रद्धा या सा मतिर्भवेत् **दउ.** २.११

१२६ चोपदिष्टोऽपि वेदबाह्यविवर्जितः। **योया.** २.१२, ष्टोऽपि तन्त्रसंबंधवर्जितः **सूज्ञा.** १४.१६,... दिष्टोऽपि वेदवादं विवर्जयेत् **व.**, चोपदिष्टोऽपि तत्र संबन्धवर्जितः **दश.** २.११, दिष्टेऽपि वेदवाक्यविवर्जिते। विनिवृत्ता च या बुद्धिः सा मतिः परिकीर्तिता इत्यधिकम् **श.**,...ष्टेन वेदबाह्यविवर्जितः **ष.**

१२७ **ल.**, **व.**, **योया.** २.१२, वेदोक्तेनैव मार्गेण **सूज्ञा.** १४.१६, **दउ.** २.१२ मन्त्रन्यासो जपः स्मृतः **य.**

१२८ प्रोक्तो वाचिको मानसस्तथा **योया**, २.१४, **सूज्ञा**, १४.२०, जपश्च त्रिविधः प्रोक्त उच्चैरुपांशुर्मानसः **श.**, जपश्च त्रिविधः प्रोक्तः वाचिकोपांशुमानसः **ष.**, जपस्तु द्विविधः प्रोक्तो वाचिको मानसस्तथा **दउ.** २.१३

१२९ **दउ.** २.१५., .. गुण उच्यते **योया.** २.१५, **सूज्ञा.** १४.२२, **श.**, **ष.**, शतं वै फलमुच्यते **व.**

१३० सहस्रगुण उद्दिष्टस्तस्मादपि च..**ल.**, मुद्दिष्टं तस्मादपि च मानसं **व.**, गुण इत्युक्तस्तस्मादपि च **श.**, मानसस्तु तथोपांशोः सहस्रगुण उच्चते। **योया.** २.१६, **सूज्ञा.** १४.२२., मानसश्च तथोपांशोः सहस..**दउ.** २.१५

१३१ दिष्टंत्वनुज्ञया **योया.** २.१९, **सूज्ञा.** १४.२४, मुपदिष्टमनुज्ञया **ल.**, सर्वमुपदिष्टेत्यनुज्ञ. **व.**, मुपदिष्टं तदनुज्ञया **ष.**

१३२ धर्मार्थमात्मसिद्ध्यर्थ **योया.** २.१९, **व.**, ..र्थमात्मशुद्ध्यर्थ..**सूज्ञा.** १४.२५ धर्मार्थमोक्षसिद्ध्यर्थम्..**ल.ष.**

१३३ अत्र।। दश नियमाः।। इत्यधिकं **श.**

१३४ आसनान्यधुना वक्ष्ये शृणु गार्गि तपोघने। **योया.** ३.१,
आसनानि पृथक् वक्ष्ये शृणु वाचस्पतेऽधुना। **सूज्ञा.** १५.१, पुत्र समासतः **ल.**

१३५ **योया.** ३.१, **सूज्ञा.** १५.१

१३६ मयूरं...भद्रं कूर्मासनं तथा **ल.**, **व.**, **श.**, **ष.**

१३७ **ल.**, **व.**, **श.**, **य.** पुस्तके नास्तीदमर्धम्। शृणु वक्ष्यामि **ष.**

१३८ रन्तरे **व.**, **योया.** ३.३, रन्तरे विप्र कृत्वा [illegible] **सूज्ञा.** १५.३ इदमर्धं नास्ति **ष.**,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

रन्तरे कृत्वा सम्यक् पादतले उभे **दउ**. ३.२

१३९ ..कायः सुखासीनः **श**., **योया**. ३.३., समासीनः **व**., समकायसुखासीनं स्व ..**ष**., समग्रीवशिरस्कस्य स्वस्तिकं परिचक्षते। **सूज्ञा**. १५.३., समग्रीवशिरः कायः स्वस्तिकं नित्यमभ्यसेत् **दउ**. ३.३

१४० सीवन्यास्त्वात्मनः **योया**. ३.४., सीवन्या आहरेत् पार्श्वे गु.**ष**.

१४१ **श**., प्राकास्यमितरे करम् **य**., एतच्च स्व..**ल**., **योया**. ३.५., प्रोक्तं सव्येन्यस्यत्तवेत्तरं **व**.

१४२ **व**., **योया**. ३.५, प्रविश्य गुल्फ तु ..र्श्व निवे ...**य**., निवेदयेत् **ल**., **श**., नियोजयेत् **दउ**. ३.३

१४३ **योया**. ३.६, गोमुखं तत् प्रचक्षते **दउ**. ३.४, **सूज्ञा**. १५.४, तु तथा सव्यं गोमुखं परिकीर्तितं **श**।

१४४ **ल**., **ष**., **योगवार्तिकम्**, **नागोजीवृत्तिः** (२.४६), **योया**. ३.६, अंगुष्ठावपि गृह्णीयाद्धस्ता..**सूज्ञा** १५.५, तु निव..**व**., कराभ्यां व्युत्क्रमेण **श**., अङ्गुष्ठावधि गृह्णीयाद्धस्ताभ्यां **दउ**. ३.४

१४५ **ल**,, **ष**., योगवार्तिकम्, नागोजीवृत्तिः (२.४६), विप्रेन्द्रे **योया**. ३.७, पादतलद्वयम् **सूज्ञा**. १५.५, ऊर्वो..तलद्वयम् **दउ**. ३.५

१४६ **योगवार्तिकम्**, २.४६, सर्वेषामपि पूजितम् **योया**. ३.७, देतत् पापरोगभयापहम् **सूज्ञा**. १५.६, देतत् पूजितं योगिभिः सदा **श**., सर्वेषामतिपूजनम् **ष**.

१४७ संस्थितः **ल**., **योगवार्तिकम्** २.४६, **व**., ..रौ तु सं..**मल्ली कुमार** ३.४५, रूणि संस्थितम् **मल्ली**. **रघु**. १३.५२, संस्थितः **ल**., **व**., रुणि संस्थितः **श**., एकपादमधश्चैव विन्यस्योपरिसंस्थितं **ष**., रुणि संस्थितम् **योया**. ३.८

१४८ स्तथा चोरुं वीरासनमुदाहृतम् **ल**., **योया**. ३.८, स्तथा चोरुं **व**., **ष**., स्तथा चोरौ वीरासनमुदाहृतं **श**., स्तथा चान्यं वीरासनमुदाहृतम् **मल्ली**. **रघु**. १३.५२, स्तथा पादं वीरासनमुदाहृतम् **योगवार्तिकम्** २.४६, स्तथा चोरुं वीरासनमुदाहृतम् **योया**. ३.८

१४९ **ल**., **व**., **सूज्ञा**. १५.७, **ष**., गुल्फौ तु **श**., गुदे पद उपस्थाय सीमंन्या पार्श्वयोः **य**.

१५० **व**., दक्षिणे च तथेतरं **ल**., दक्षिणे सव्यगुल्फंतु दक्षिणेनेतरे करं **य**. दक्षिणेन तथेतरं **श**., दक्षिणे दक्षिणेतरम् **ष**., दक्षिणं सव्यगुल्फेन दक्षिणेन तथेतरम् **योया**. ३.९, ल्फेन वामं दक्षिणगुल्फतः **सूज्ञा**. १५.७

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१५१ हस्तौ च जान्वोः संस्थाप्य **ल.**, **व.**, **सूतज्ञा**. १५.८, **योया**. ३.१० हस्तौ तु जान्वो. **श.**, हस्तौ जानू परिस्थाप्य **ष.**

१५२ **योया**. ३.१०, व्याघ्रवक्त्रो **ल.**

१५३ **योया**. ३.११, मुनिभिः पूजितं सदा **ष.**, नासाग्रं च निरीक्षेत भवेत् सिंहासनं हि तत् **सूज्ञा**. १५.८

१५४ तलाभ्यां करयोर्द्वयोः **ल.**, **व.**, **श.**, **ष.**, तलाभ्यां तु करद्वयोः **योया**. ३.१५

१५५ कूर्परे चापि स्थापयन्नाभिपार्श्वतः **ल.**, कूर्परौ चापि **व.**, कूर्परौ वापि **श.**, कूपरो वापि **ष.**, हस्तयोः कूर्परौ चापि स्थापयन्नाभिपार्श्वयोः **योया**. ३.१५ कूर्परोग्रौ मुनिश्रेष्ठ निःक्षिपेन्नाभिपार्श्वयोः **सूज्ञा**. १५.१३.

१५६ **योया**. ३.१६, **सूज्ञा**. १५.१४, **द**. ३.११

१५७ प्रणाशनं **ल.**, **व.**, **श.**, मेतत्तु..प्रणाशनम् **योया**. ३.१६, मेतत् स्यात्सर्व, पापप्रणाशनम् **दउ**. ३.१२, **सूज्ञा**. १५.१४, पवित्रं पापनाशनम् **ष.**

१५८ निवेश्य भूमौ संस्थाप्य व्योमस्थः कुक्कुटासनं **ल.**, **व.**, **श.**

१५९ क्षिपेत् **योया.**, ३.१२, **व.**, **योगवार्तिक** २.४६, गुल्फौतु..क्षिपेत् **श.**, सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपेत् **सूज्ञा**. १५.९, सीमन्याः **य.**

१६० **योया**. ३.१२, निश्चलः **सूज्ञा**. १५.१०, **श.**, **योगवार्तिक** २.४६

१६१ **योगवार्तिक** २.४६, **योया**. ३.१२, देतद्विषरोगविनाशनम् **सूज्ञा** १५.१०

१६२ **ल.**, **व.**, **श.**, **ष.** गुदं च सव्यगुल्फाभ्यां **य.**

१६३ वेदविदोऽब्रुवन् **व.**

१६४ **र.**, **ल.**, **योया**. ३.१४, **य.** मातृकायां नोपलभ्यते, मेढ्रादुपरि निक्षिप्य सव्यगुल्फं **श.**, संस्थाप्य सव्यगुल्फं **ष.**, मेढ्रोपरि विनिक्षिप्य सव्यगुल्फं तथोपरि **सूज्ञा**. १५.१२

१६५ **र.**, **ल.**, तु निक्षिप्य..मिदं तथा **व.**, **य.**, पुस्तके नास्ति। तु निक्षिप्य मुक्तासनमितीरितं **श.**, च संक्षिप्य मुक्तासनमिदं भवेत् **सूज्ञा**. १५.१२

१६६ अयं श्लोकः **य.** मातृकायां नोपलभ्यते, **ल.**, **व.**, **श.**, मातृकासूपलभ्यते। अयं श्लोकः मेढ्रादुपरि इत्यादिश्लोकात् पूर्व निवेशितः **श.**, **ष.**, मातृकयोः, नैव तु सर्वतः **व.**, नैव च सर्वतः **ष.**

१६७ इतः प्रभृत्येव **र.**, मातृकारभ्भः। मिदं स्मृतं **ल.**, मितीरितं **श.**,**ष.**

१६८ **र.**, श्चैव [illegible] **य.**, आसनेन तु संस्थितः **ल.**, **व.**, श्चैव आसनैश्च

CC-0. Nepal Sanskrit Academy \ Kathmandu Collection

सुसंयतः **श**., आसनेन तु संयुतः **ष**., आसनैश्च सुसंयता **योया**. ३.१७

१६९ **र**., **ल**., **श**., कृत्वान्तर्नाडिसंशुद्धिं **य**., कृत्वा च नाडिशुद्धिं तु **व**., कृत्वा नाडिशुद्धिं च **ष**., नाडीविशुद्धिं च कृत्वा तु **योया**. ३.१८

१७० **र**., नास्ति **य**., **व**., मातृकायोः। प्राणायामानि सर्वाणि..तु सर्वतः **ल**., नि च सर्वतः **श**., **ष**.

१७१ **र**., **ल**., **श**., नास्ति **य**. मातृकायाम्, इदमर्धं प्राणायामादि इत्याद्यर्धपूर्वम् **ल**., **श**., **ष**।

✷ इति श्री वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे यमनियमासनवर्णनं नाम प्रथमोध्यायः।।१।। **य**.,

इति वासिष्ठयोगकाण्डे प्रथमोध्यायः ।। छ।। **र**.,

इति वासिष्ठयोगसंहितायां प्रथमोध्यायः **ल**.,

इति वासिष्ठसंहितायां प्रथमोध्यायः **व**. **ष**.,

इति वासिष्ठयोगकाण्डे ज्ञानकर्मसमुच्चये प्रथमोध्यायः **श**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

द्वितीयोऽध्यायः

१ नैतद्वाक्यं कस्मिन्नपि पुस्तके हस्तलिखिते दृश्यते।

२ **र.**, मातृकायां न विद्यत एतद्वाक्यम्, गार्ग्युवाच **योया.** ४.२

३ इत आरभ्य मूले मुद्रितः पाठः प्रायशः **र.**, मातृकामनुसृत्य वर्तते इति वेदितव्यम्। मेतद्धि नाडीशुद्धिविधानतः **य.**, भगवन् ब्रूहि मे स्वामिन्नाडीशुद्धिं..**योया.**४.२

४ **योया.** ४.२, नास्तीदमर्धम् **ष.**

५ **योया.** ४.३, धारणा च **य.**, नाडीनामाधारं च **ल.**, चैव नाडीनां चारणं च **व.**, चालनं च यथाविधि **श.**, नास्तीदमर्धम् **ष.**

६ कर्म च कीदृशं **य.**, कंदं च कीदृशं **ल.**, **श.**, **योया.** ४.३, कालं च **व.**, नास्तीदमर्धम् **ष.**

७ **योया.** ४.४

८ **योया.** ४.४ येनास्मिन् देहे **व.**, चान्यानि देहे ..**ष.**

९ तत्सर्वं त्वत्तो **य.**, **व.**, **श.**, **योया.** ४.५, मे सर्व त्वत्तो **ष.**

१० इत्युक्तो भार्यया तत्र सम्यक्.. **योया.** ४.५, शक्तिणा **र.**

११ तत् सर्वमवदन्मुनिः **य.**, आत्मजंकृपया..तत् सर्व समभाषत **ल.**, **व.**, **श.**, गार्गी तां सुसमालोक्य तत् सर्वं **योया.** ४.६

१२ इदं वाक्यं **र.** पुस्तके चतुर्थश्लोक पूर्वार्धोत्तरार्धमध्ये, **य.**, **ल.**, योस्तु यथामुद्रिते स्थले, **व.**, **श.**, योस्तु नैवोपलभ्यते इदं वाक्यम्। याज्ञवल्क्य उवाच **योया.** ४.६, ईश्वर उवाच **सूज्ञा.** ११.१

१३ **ल.**, **योया.** ४.६, शरीरं तु भवेदेवं षण्णवत्यंगुलात्मभिः **य.**, शरीरं हि भवेदेतत् षण्ण..**श.**, शरीरं हि भवेदेवं षण्ण..**ष.**, शरीरं तावदेव स्यात् षण्ण.. **सूज्ञा.** ११.२, **दउ.** ४.१

१४ जंतूनामंगुलिभिस्त्रिभिर्द्विज **य.**,विद्यते सर्वजंतूनां **ल.**, विद्धि तत् ..भिरितीरितम् **ष.**, लीभिरिति प्रिये **योया.** ४.७, मनुष्याणां मुनिश्रेष्ठ स्वांगुलीभिरिति श्रुतिः **सूज्ञा** ११.२

१५ **ल.**, वंशस्थं **र.**, वसंति पार्श्वयोर्द्वयोः **य.**, **व.**, **श.**, नवस्यपार्श्वयोः स्थिता **ष**।

१६ नाड्यस्तु वसंति वै **य.**, नाडीनामपि संति वै **ल.**, नाडयो निवसन्ति हि **व.**, सहस्राणां नाडी..**श.**, मपि संति च **ष.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१७ ..दधिकं प्राणो..लमानतः **य.**, लमानतः **ल.**, **व.**, **श.**, **ष.**, **योया.** ४७.

१८ प्रमाणं कुरुते वायुस्तस्मात् प्राण इति स्मृतः **य.**, प्राणनं कुरुते जंतोस्तस्मात् **ल.**, कुरुते यस्मात् तस्मात् **व.**, **श**।

१९ **योया** ४.११, **सूज्ञा.** ११.३, **दउ.** ४.१, शिखास्थानं **व.**

२० **योया.** ४.१२, चतुरस्रं त्रिकोणं च इतरेषां च मंडलं **य.**, **श.**, चतुरस्रं त्रिकोणं तु इतरेषां तु मंडलं **ल.**, चतुरस्रं त्रिकोणं तु इतरेषां च मंडलं **व.**, त्रिकोणं मनुजानां तु सत्यमुक्तं बृहस्पते **सूज्ञा.** ११.३, त्रिकोणं मनुजानां तु सत्यमुक्तं हि सांकृते **दउ.** ४.२

२१ तत्पतंगानां **योया.** ४.१२, **य.** पुस्तके न दृश्यते।

२२ **य.**, **ल.**, **योया.** ४.१३, मध्येत्र..पावकः **र.**, पाविका **व.**, च शिखा **श.**, मध्ये तु शिखा सूक्ष्मा **ष.**

२३ इतः प्रभृति प्रबुद्धासाथवह्निना।। १८।। पर्यन्तो भागः नोपलभ्यते **य.**, पुस्तके, च कुत्रेति **व.**, **योया.** ४.१३

२४ **ल.**, मध्ये मेढ्रात्तु द्वयंगुलात् **र.**, मधो मेढ्राच्च **श.**, **योया.** ४.१४, मेढ्रात्तु द्व्यङ्गुलादधः **दउ.** ४.२

२५ देहमध्ये इतीरितं **व.**, देहमध्यं तयोर्मध्यं मनुष्याणामितीरितम् **योया.** ४.१४

२६ **व.**, **श.**,..वाङ्गुलात् **र.**, कन्दस्थानं मनुष्याणां देह..**योया.** ४.१६ कन्दस्थानं मुनिश्रेष्ठ मूलाधारान्नवाङ्गुलम् **सूज्ञा.** ११.५, **दउ.** ४.३

२७ मुच्छ्रायमायामं च तथाविधम् **ल.**, मायामं च तथाविधं **श.**, मायामश्च तथाविधः **योया.** ४.१६, चतुरङ्गुलमायामविस्तारं मुनिसत्तम **सूज्ञा.** ११.५, चतुर..विस्तारं मुनिपुङ्गव **दउ.** ४.४

२८ परिपूरितम् **ल.**, **ष.**, दाकारंभूषितं तत् त्वगादिभिः **योया.** ४.१७, कुक्कुटाण्डवदाकारं भूषितं च त्वगादिभिः **सूज्ञा.** ११.६, कुक्कु..तंतुत्व..**दउ.** ४.४

२९ नाभौ चक्रसमुद्भवः **ल.**, **योया.** ४.१८, तदंगे नाभिरुद्भूता तस्यां चक्र..**व.** तन्मध्ये नाभिरित्युक्तं नाभौ चक्र..**श.**, ..क्तं मुने वेदान्तवेदिभिः **सूज्ञा.** ११.६, तन्मध्ये नाभिरित्युक्तं योगज्ञैर्मुनिपुङ्गव **दउ.** ४.५

३० चक्रं तेन देहः प्रतिष्ठितः **ल.**, देहेस्ति सुप्रतिष्ठितं **व.**, देहान्तेन प्रतिष्ठित **श.**, द्वादशारचक्रमध्ये जीवं तेन प्रतिष्ठितः **ष.**, द्वादशारयुतं तच्च तेन देहः प्रति ..**योया.** ५.१८

३१ पुण्यापुण्यप्रचोदितः **श.**, **ष.**, पापपुण्य प्रचोदितः **योया.** ४.१९

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३२ जन्तु प..**र**., तन्तु..भ्रमति लुतिका **ल**., लूतिकः **व**., **श**., मृत्युपञ्जर..ति नर्तकः **ष**., मध्यस्था...लूतिका **योया**., ४.१९

३३ **योया**. ४.२०, मूले चक्रे..**व**., श., स्मिन् प्राणवायुर्वसत्यसौ **ष**.

३४ प्राणारूढो भवे..**ल**.,**श**., प्राणो भूत्वा वसेज्जीवः **ष**., सर्वभूतेषु सर्वदा **योया**. ४.२०

३५ ..स्तिर्यगधोमुखं **ल**., **व**.,..गथोर्ध्वतः **योया** .४.२१

३६ सा अष्टधा **ल**., **योया**. ४.२१, सा अष्टधा कुंडली स्थिता **श**., चाष्टधा **ष**.

३७ इदमर्धं **र**.पुस्तके नोपलभ्यते, **ल**., **व**., **श**.,**ष**., पुस्तकेष्वस्ति।

३८ **श**, बद्धायुचारं च निरुंध्यैषा **र**., यावद्वायुप्रचारं च निरुध्यैषा सदा **ल**., यथा बध्वाचारं च ..स्थिता सदा **व**., यथावद्वायुसंचारं निरुध्य सा सदा स्थिता **ष**., यथावद्वायुसचारं जलान्नादीनि नित्यशः। परितः कन्दपार्श्वेषु निरुध्यैव सदा..**योया**. ४.२२

३९ मुखेन तु समावेष्ट्य **ल**., मुखेन तु समाविश्य **व**., मुखेन तु समा ..रंध्रगता तथा **श**., मुखेनैव समावेष्ट्य ब्र..**योया**. ४.२३

४० प्रबुद्धा श्वासवह्निना **ल**., **व**., **श**., योगकाले वह्निना च प्रवृद्धा सा भवेत् सती **ष**., प्रबोधं याति साग्निना **योया** ४.२३

४१ स्फुरंति...काशे नागरूप महद्विला **य**, स्फुरंती..याकाशे..**ल**, **योया.** ४,२४ देह आकाशे नागरूपा **व,** भागरुपा महौजसा **श,** स्फुरन्ती हृदयांतोजो सर्वदा च महोज्वला **ष**,

४२ **व**. मातृकाया मेवोपलभ्यतेऽर्धमिदम्

४३ **ल**., वायुमुखेर्नव **य**, योया, ४, २४, वायुर्वासमुखंतत्र ततो ..**ष,**

४४ **सूज्ञा**, ११,७, **योया**, ४,२५, कंदमध्यस्थिता नाडी **ल**, **दउ**, ४,५, म्नेति प्रतिष्ठिता **व**,

४५ न्नाडीसंज्ञाः **योया**, ४,२५, परितस्तस्या वाड्योन्याः सहस्त्रशः **य**, न्नाभिसंज्ञके **ल**, सर्वाचक्रेस्मिन् जीवसंज्ञके **व**, नाडिसंज्ञिकाः **श**, परितस्तस्या मुनिसत्तम **सुज्ञा**, ११,७, परितस्तस्य नाडयो मुनिपुङ्गव **दउ**, ४.६

४६ मुख्यास्त्वेताश्चतुर्दश **योया**. ४.२६, द्विसप्ततिसहस्त्राणि तासां मुख्याश्चतुर्दश **दउ** ४.६, **सूज्ञा**. ११.८

४७ सुषुम्ना नाडी ततः पश्चात् य., तथा पश्चात् **श**., सुषुम्ना पिङ्गला तद्वदिडाचैव सरस्वती **सूज्ञा**. ११.८, इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा च सरस्वती **योया**. ४.२६

४८ वारुणीश्चैव **य**., धारणा चैव **ल**., वारुणी चैव संप्तमी च पयस्विनी **व**., कुहुश्च धारणा चैव सप्तमी च पयस्विनी **श**., वारुणी चैव पूषा च हस्तिजिह्वा यशस्विनी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

योया. ४.२७

४९ दशमीस्मृता **य.**, **ष.**, पूषा यशस्विनी **श.**, विश्वोदरा कुहूश्चैव शंखिनी च पयस्विनी **योया**. ४.२७

५० विश्वोदरी स्थिता **ल.**, विश्वोदरी **व.**, विश्वोदरी मता **श.**

५१ अलंबुसा च..ह्येताश्चतुर्दश **य.**, अलंबुषाच ..मुख्याश्चैव चतुर्दश **ल.**, अलंबुषा च सर्वासां..ह्येताश्चतु...**व.**, **श.**, अलंबुषा च गान्धारा मुख्याश्चैता **योया**. ४.२८

५२ स्तिसृष्ट्वेकोत्तमा **य.**, कोत्तमोत्तमा **ल.**, आसां मुख्यतमास्तिस्रस्तिसृष्वेकोत्तमा **योया**. ४.२८, **दउ.** ४.९, त्तमा स्मृता **व.**, तासां मुख्यतमास्तिस्रस्तिसृस्तिसृष्वेका वरा मुने **सूज्ञा**. ११.१०

५३ मुक्तिमार्गा **य.**, स्फुरंती विव्व..**व.**, मार्गा सुषुम्नेति **श.**, मार्गसुषुम्णा सा **ष.**, मुक्तिमार्गेति सा प्रोक्ता सुषुम्णा विश्वधारिणी **योया**.४.२९

५४ मध्यमस्थाने सुषुम्णा सा प्रतिष्ठिता **य.**, मध्यमे स्थाने सुषुम्ना **ल.**, **व.**, **श.**, मध्यमे मार्गि **योया**. ४.२९

५५ स्थिता चैषा मूर्ध्निभागे स्थिता सदा **य.**, स्थिता नाडज्ञा सह मूर्ध्नि स्थिता सदा **ल.**, पृष्ठभागे स्थिता नाम्ना मूर्ध्निभागे सदा स्थिता **व.**, स्थितेनैषा मूर्ध्निभागे सदा स्थिता **श.**, पृष्टमध्ये स्थिता नाडी सा हि मूर्ध्नि व्यवस्थिता **योया**. ४.३०, पृष्ठमध्ये स्थितेनास्थ्ना वीणादण्डेन सुव्रत **सूज्ञा**. ११.११

५६ मोक्षमार्गा सुषुम्णा सा ब्रह्मरन्ध्रेति कीर्तिता **य.**, ब्रह्मरंध्रेति कीर्तिता **ल.**, **व.**, मुक्तिमार्गः सुषुम्णा सा ..तिकीर्तिता **योया**. ४.३०, ब्रह्मरन्ध्रेति कीर्तिता **व.**, मोक्षमार्गः सुषुम्ना सा ब्रह्मरन्ध्रावधि स्थिता **ष.**

५७ मुख्या सा वैष्णवी **य.**, वैष्णवी मता **ल.**, सैव विज्ञेया ..**योया**. ४.३१ वैष्णवी मता **व.**, **श.**

५८ **योया**. ४.३१, सुषुम्नाया इडा सव्ये दक्षिणे पिङ्गला स्मृता **सूज्ञा**. ११.१५

५९ **योया**. ४.३२, पिङ्गला मता **य.**, **ल.**, पिङ्गला तथा **श.**, सुषुम्नाया इडा सव्ये दक्षिणे पिङ्ला स्थिता **दउ.** ४.१३

६० **योया**. ४.३२

६१ **योया**. ४.३३, रविस्तथा **य.**, **ल.**

६२ **योया**. ४.३३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

६३ तावेव दधतुः सर्वं कालं **य**., तावेव धत्तः कालं सकलं रात्रिदिवात्मकं **र**., तावेव धत्तः सकलं कालं रात्रिदिवात्मकं **ल**., **योया**. ४.३४, धत्ते सकलं कालं रात्रंदिवात्मकं **व**., रात्रदिवांतकं **श**।

६४ पार्श्वयोर्द्वयोः **य**., **ल**., पार्श्वयोः स्थिते **श**., **योया**. ४.३५, **सूज्ञा** ११.१५, **दउ** ४.१४, सुषुम्नापृष्ठपूर्वयौः **व**.

६५ पृष्ठपूरयोः **य**., इडायाः पार्श्वयोः स्थिता **ल**., **ष**., पृष्ठपार्श्वयोः **योया**. ४.७६, पूर्वपार्श्वयोः **सूज्ञा** ११.१६, गान्धारा हस्ति ..**दउ**. ४.१४

६६ **दउ**. ४.१५, पृष्ठपूरयोः **य**., **ल**., पयस्विनी चैव **व**., **श**., पृष्ठपूर्वयोः **सूज्ञा**. ११.१६, पृष्ठपार्श्वयोः **ष**., **योया**. ४.३६

६७ कुहूश्च हस्तिजिह्वाया मध्ये **य**., कुहोश्च ..विश्वोदरी **ल**., **व**. कुहूश्च ..विश्वोदरी **श**., विश्वोदरी **ष**., **सूज्ञा**. ११.१७, कुहोश्च ..विश्वोदरा **योया**. ४.३६, **दउ**. ४.१५

६८ पयस्विन्याः कुहोर्मध्ये वारुणी च प्रकीर्तिता **य**., **व**., पयस्विन्याः कुहोर्मध्ये वारणा च **श**,**स** मध्ये धारणा च प्रकीर्तिता **ल**., वारुणी च प्रति ..**ष**., योया. ४.३७, वारुणा सुप्रतिष्ठिता **दउ**. ४.१६

६९ सूज्ञा. ११.१८, **योया**. ४.३७, मध्ये यशस्विनी **य**., **ल**., **ष**., सरस्वत्या मध्ये प्रोक्ता यशस्विनी **दउ**. ४.१६

७० गांधार्याश्च सरस्वत्यां शखिनी मध्यमे स्थिता **य**., गांधार्याश्च सरस्वत्याः शंखिनी मध्यतः स्थिता **ल**., गांधर्याश्च सरस्वत्या शंखिनी मध्यसंस्थिता **व**., **श**., इदमर्ध नास्ति **ष**., गांधार्याश्च सरस्वत्याः स्थिता मध्ये च शंखिनी **योया**. ४.३८, सरस्वत्या मध्ये प्रोक्ता च शंखिनी **सूज्ञा**. ११.१८, गान्धारायः ..स्वत्या मध्ये प्रोक्ता च शङ्खिनी **दउ**. ४.१७

७१ ..बुसा **च र**., विप्रेन्द्रे **योया**. ४.३८, अलंबुषा स्थिता पायुपर्यन्त कन्दमध्यतः **सूज्ञा**. ११.१९, म्बुसा स्थिता पायुपर्यन्तं कन्दमध्यगा **दउ**. ४.१७

७२ पुरोभागे सुषुम्णाया मेढ्रन्तःस्था कुहुस्थिता **य**., पूर्वभागे ..या वा मेढ्रांत कुहूः **ल**., ..या आमेढ्रांतं कुहूः **योया**. ४.३९,..या मेढ्रांतं च कुहूः **व**., पृष्टभागे सुषु ..**श**., सुषुम्नाया मेढ्रांतं संस्थिता कुहूः **सूज्ञा**. ११.१९, कुहूः स्मृता **ष**., सुषुम्नाया राकायाः संस्थिता कुहूः **दउ**. ४.१८

७३ वारुणी सर्वगामिनी **य**., धारणा सर्वगामिनी **ल**., विप्रेन्द्र वारुणी सर्वगामिनी **व**.,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विज्ञेयो वारुणी सर्व..**ष**., कुण्डल्या वारुणी सर्वगामिनी **योया**. ४.३९, अधश्चोर्ध्वं स्थिता नाडी वारुणी सर्व...**सूज्ञा**. ११.२०

७४ पयस्विनी च **य**., पयस्विनी च वामस्य पादांगुष्ठांतमीड्यते **ल**., पयस्विनी च वामस्य पादा ..**व**., यशस्विनी तु वामे च पादा..**श**., तथा याम्यपादांगुष्ठा..**ष**., पयस्विनी तथा गार्गि याम्यकर्णान्तमिष्यते **योया**. ४.२१, च वामस्य **दउ**. ४.१९

७५ मूर्ध्नि पुत्रक **य**., **ल**., पिंगलायाश्चोर्ध्वयाम्ये **ष**., विद्धि मे प्रिये **योया**. ४.४०, पिंगलासंज्ञिता नाडी याम्यनासांतमिष्यते सूज्ञा. ११.२०

७६ **योया**. ४.४१, नेत्रांता पिगलायाः स्थिता सदा **य**., **व**., पिगलायाः स्थिता सदा **ल**., पिगलायाश्च **श**., पिंगलायास्तिता सदा **ष**., पूषाः याम्याक्षिपर्यन्तं पिंगलायास्तु पृष्ठतः **सूज्ञा**. ११.२२

७७ याम्यकंदांतमेष्यती **य**., यशस्विनी च विप्रेंन्द्र याम्य कर्णांतमिष्यते **ल**., यशस्विनी **व**., **श**., ..याम्यकर्णा..**ष**., पयस्विनी तथा गार्गि याम्यकर्णा ..**योया**. ४.४१, पयस्विनी तथा याम्यकर्णान्तं प्रोच्यते बुधैः **सूज्ञा**. ११.२२-२३

७८ **योया**. ४.४२, चोद्ध्र्वे आजि ..**श**., सरस्वत्यास्तथा चोद्ध्र्वमाजि ..**ष**., ..याः स्थिता मुने **सूज्ञा** ११.२३, चोर्ध्वा जिह्वायाश्च तथा मुने **दउ**. ४.२१

७९ सा सव्य कंदाद्विप्रर्षे शंखिनी चोद्ध्र्वगा मता **य**., असव्यकर्णाद्विप्रेन्द्र शंखिनी चोद्ध्र्वगा मता **ल**., आवामकर्णाद्विप्रष..चोद्ध्र्वंगा मता **व**., वोर्ध्वगा मता **श**., ..कर्णं विप्रेंद्र यशस्वी ऊद्ध्र्वगा मता **ष**., ..कर्णाद्विप्रेन्द्रे ..चोर्ध्वगा मता **योया**. ४.४२. शङ्खिनी नाम या नाडी सव्यकर्णान्तमिष्यते **दउ**. ४.२२

८० गांधारी सव्यनेत्रांत्य इडायाः पृष्ठतः स्थिता **य**., गांधारी सव्यनेत्रांता इडायाः **ल**., **व**., ..री सर्वनेत्रांतमिडायाः **श**., गांधारी **ष**., गान्धारी सव्य..**योया**. ४.४३, नेत्रान्ता प्रोक्ता वेदान्तवेदिभिः दउ. ४.२२

८१ इडा च सव्य नेत्रांता पिंगला...**य**., सर्व नासांतं सव्यभागे व्यवस्थिता **र**., **योया**. ४.४३, सव्यनासांता पिंगला **ल**., **व**., इडा च..पिंगलादक्षिणस्थिता **ष**., नासांतं संस्थिता मुनिपुङ्गव **दउ**. ४.१९

८२ **र**. मातृकायां नास्तीदमर्धम् **व**., **ष**., पूषा चोर्ध्वव्यवस्थिता **य**., तथा ज्ञेया पूषा वापि व्यवस्थिता **ल**.

८३ **सूज्ञा**. ११.२३, **योया**. ४.४४, **दउ**. ४.२१, तथा याम्ये पादांगुष्ठांतमिष्यंते, तथा याम्ये

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पादांगूलांतमिष्यते **व**.

८४ नाडी सव्यनेत्रगता तथा **य**., सव्यश्रोत्रगता स्मृता **ल**., सव्यश्रोत्रगता तथा **व**. **श**., सव्यगण्डगता स्मृता **ष**., नाडी तुन्दमध्ये व्यवस्थिता **योया**. ४.४४, ..दराभिधा नाडी तुण्डमध्ये व्यवस्थिता **सूज्ञा**. ११.२५, दराभिधा नाडी कन्दमध्ये व्यवस्थिता **दउ**. ४.२३

८५ ..बुसा महाभागा पायूपस्थादधोगता **य**., ..बुषा महाभाग पायुमूलादधो **ल**., **श**., ..ळंबुसा..व., अळंबुषा महाभागा पृष्ठमूलादधोगता **ष**., ..बुषा महाभागे पायु. **योया**. ४.४५

८६ नाडयोन्याः साहस्रशः **य**., एतास्त्वन्याः **ल**., नाड्योन्याश्च भास्वनि **ष**., समुत्पन्नाः शिराश्चान्याश्च **योया**. ४.४५

८७ सर्व देहिषु **य**., सर्व नाड्यः **ल**., **ष**., सर्व संधिषु **श**., तद्वदब्जपत्रेषु वा शिराः **योया**.४.४६

८८ **ल**., **योया**. ४.४७, श्चोदानश्च व्यान एव च **य**., श्चोदानव्यानौ च वायवः **ष**., स्तथा व्यानः समानोदान एव च **सूज्ञा**. ११.२५, **दउ**. ४.२३

८९ कूर्मश्च कृकरो देव..**य**., **व**., **दउ**. ४.२४, कूर्मश्च कृकलोदेव..**ल**., कृकश्चैव देव..**श**., कूर्मोथ कृकरो **ष**., **योया**. ४.४७

९० **योया**. ४.४८, **सूज्ञा**. ११.२६, **दउ**. ४.२४, वदंति दश वायवः **ल**.

९१ **योया**. ४.४८, तेषु प्राणादयः पञ्च मुख्याः पञ्च च सुव्रत **सूज्ञा**. ११.२७, तेषु प्राणादयः पञ्च मुख्याः पञ्चसु सुव्रत **दउ**. ४.२५

९२ कंदस्यांतः प्रतिष्ठितः **य**., **ल**., कंदस्याधो व्यवस्थितः **व**., एषां मुख्यतमः **ष**.

९३ आस्यनासिकयोर्मध्ये हृदये नाभिमण्डले **य**., **ल**., **व**., **ष**., आस्य नासिकयोर्मध्ये हृन्मध्ये नाभिमध्यमे **योया**. ४.५०, आस्य नासिकयोर्मध्ये नाभिमध्ये तथा हृदि **सूज्ञा**. ११.२८

९४ पादांगुष्ठेष्वपि सदा प्राण एवावतिष्ठति **य**., गुष्ठेष्वपि सदा प्राण एवावतिष्ठति **य**., गुष्ठेष्वपि सदा प्राण एवावतिष्ठते **व**., **श**., प्राणालय इति प्राहुः पादाङ्गुष्ठेऽपि केचन **योया**. ४.५०

९५ मेढ्र **य**., मद्र पायोश्च कटयां च गुल्फयोरपि **ल**., पायोश्च **श**., अपानो..श्च जावूरुकरसंधिषु **ष**., अपानो वर्तते नित्यं गुदमेढ्रोरुसंधिषु **सूज्ञा**. ११. २९, अपाननिलयं केचिद् गुदमेढ्रोरुजानुषु **योया**. ४.५२

९६ **ल**., पुस्तके नास्ति, ..मूले प्रतिष्ठितः **व**., जंघे पादौ च कटयां च **ष**., उदरे वृषणे कटयां जङ्घे नाभौ वदन्ति हि **योया**. ४.५२

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

९७ **योया**. ४.५४, हृत्कंठ गुल्फयोरपि **य.**, **ल.**, पुस्तके नास्ति, मध्ये च **व.**, मध्ये च कटयां च गुल्फयोरपि **श.**, **ष.**, मध्ये च कृकटयाङ्गुष्ठयोरपि **सूज्ञा**. ११.३०

९८ **य**. पुस्तके नास्ति, देशेषु स्थाने..**ल.**, गले स्फिजोर्देशे तिष्ठत्यत्र न संशयः **योया**. ४.५४, घ्राणस्थाने गले चैव वर्तते मुनिपुंगव **सूज्ञा**. ११.३०

९९ **योया**. ४.५५, सर्वसंधौ च **श.**, सर्वसंधिस्थो विज्ञेयः पादहस्तयोः **सूज्ञा**. ११.३१

१०० सर्व देहेषु सर्वं व्याप्य **य.**, **व.**, सर्व देशेषु सर्वं **ल.**, सर्वव्यापी व्यवस्थितः **श.**, सर्व देहे च **ष.**, सर्वगात्रेषु सर्व व्याप्य **योया**. ४.५५, सर्वदेहेषु व्याप्य तिष्ठत्यसंशयः **सूज्ञा**.११.३१

१०१ भुक्तः सर्वरसंगात्रश्वासेन वह्निना सह **य.**, व्यापयन् वह्निना सह **ल.**, **योया**. ४.५६, भोक्तं रसं सर्वगात्रे व्यापयन् वह्निना **व.**, भुंक्ते सर्वरसं गात्रे व्यापयन् वह्निना सह **श.**, भुक्तं रसादिकं गात्रे व्यापितं वह्निना सह **ष**।

१०२ नाडी मध्येषु **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, सहस्त्राणि नाडी मार्गेणसंचरन् **ष.**, संचरेत् **योया**. ४.५६

१०३ रेकैकः स्थितो व्याप्य कलेवरं **य.**, **श.** समानो वायुरेवैकः स्थितो व्याप्य कलेवरं **ल.**, **व.**, वैकः स्थितो वाप्य कलेवरं **ष.**, रेवैकः साग्निर्व्याप्य व्यवस्थितः **योया**. ४.५७, इतः परं **य.**, पुस्तके-

उदानः सर्वसंधिस्थः पादयोर्हस्तयोरपि।

व्यानः श्रोत्राक्षिमध्ये तु हृत्कण्ठगुस्फयोरपि।

कृकरः सर्व देहेषु स्थानेष्वेतेषु तिष्ठति।। इत्यर्धत्रयमधिकं दृश्यते।

तच्चासंबद्धं प्रतिभाति अतएव रआदिपुस्तकेष्वदर्शनमस्यार्धत्रितयस्य योग्यमेवावगन्तव्यम्।

१०४ **योया**. ४.५८, **सूज्ञा**. ११३२, त्वगस्थानादिषु स्थिता **ष.**

१०५ निश्वासश्वासकासादि.. इतीरितं **य.**, **व.**, प्राणकर्म समीरितं **ल.**, प्राणकर्म प्रकीर्तितं **श.**, कासाश्च प्राणकर्मेति कीर्त्यते **योया**. ४.६७, कर्म बृहस्पते **सूज्ञा**. ११.३५

१०६ **योया**. ४.६७, अपानारव्यस्यवायोस्तु विण्मूत्रादिविसर्जनम् **सूज्ञा**. ११.३५

१०७ प्रतानोदानचेष्टादि व्यानकर्म इतीष्यते **य**, दि व्यानकर्म इतीरितं **ल.**, व्यानकर्म इतीष्यते **व.**, व्यानकर्म समीरितं **श.**, दि व्यानकर्मेतिचेष्यते **योया**. ४.६८

१०८ **योया**. ४.६८, रहस्यान्नबलादिकं य।

१०९ **योया**. ४.६९, प्रेक्षणादि समा..कीर्त्यते **य.**, **व.**, शोषणादि समा..कीर्त्यते **ल.**, **श.**, शोधनादि शरीरस्य समानकर्मकीर्तितं **ष.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

११० **योया**. ४.६९, गुणं चैव नाग..कीर्तितं **य**., गुणोयश्च **ल**., गुणं चेतन्नाग कर्मेति कीर्तितं **व**., गुणाः पंच नाग..**श**., **ष**. पुस्तके नास्ति, गुणः प्रोक्तो नागाख्यस्य बृहस्पते **सूज्ञा**. ११.३२

१११ **सूज्ञा**. ११.३३, क्षुत्तृष्णा कृक..**य**., निमीलनादि कर्मास्य क्षुत्तृषा कृकरस्य च **ल**., क्षुत्तृष्णा कृकरस्य च **व**., **श**., क्षुतं वै कृक.. **योया**. ४.७०

११२ कर्मेति कीर्तितं **य**., तंद्राकर्मेति **ल**., तत्राकर्मेति कीर्तितं **व**., तंद्रांकर्मेति कीर्तितं **श**., विप्रेन्द्रे तन्द्री..कीर्तितम् **योया**. ४.७०, देवदत्तस्य कर्म स्यात्तन्द्रीकर्म महामुने **सूज्ञा**. ११.३३

११३ **श**., शोफादि **र**., **योया**. ४.७४, मोहादि सर्वकर्म..**य**., शोकादि सर्वकर्म **ल**., मोहादि सर्वकर्म..**य**., शोकादि सर्वकर्म **ल**., मोहादि सर्वकर्माणि कीर्तितं **व**., शोथादि **ष**., शोथादि कर्म प्रोक्तं बृहस्पते **सूज्ञा**. ११.३४

११४ नाडीसंस्थानं वायुस्थानं च यत्नतः **य**., **ल**., संस्थानमात्मस्थानं च यत्नतः **व**., ज्ञात्वा च नाडीसंस्थानं वायुस्थानं च यत्नतः **श**., धातुस्थानं प्रयत्नतः **ष**., नाडीसंस्थानं वायूनां स्थानकर्मणी **योया**. ४.७१

११५ विधिपुरः सरः **य**., नाडीनां शोधनं **श**., विधिनोक्तेन मार्गेण नाडीसंशोधनं कुरु **योया**. ४.७२

११६ गुणसंयुक्तः **श**.

११७ मायादिगुणसंयुक्तः सर्वकर्मविवर्जितः **व**., गुणसंपन्नः **श**।

११८ तपोवनं सुसंप्राप्य फलमूलोदकान्वितम् **योया**. ५.५

११९ नदी देवालयेपिवा **य**., रण्ये देवालये **ल**., देशे ब्रह्मघोषसमन्विते **योया**. ५.६, मनोरमे शुचौ देशे वेदघोषसमन्विते **सूज्ञा**. १२.४

१२० **योया**. ५.८, सर्वरक्षा सुशोभितं **य**.

१२१ युक्तः स्वधर्मनिरतः सदा **योया**. ५.९, युक्तः श्रद्दधानः समाहितः **सूज्ञा**. १२.५

१२२ मंत्रैर्न्यस्त..**य**., **ल**., **श**., **योया**. ५.१२

१२३ विद्वान् समास्तीर्य **य**., **ल**., सनोपविष्टश्च समास्तीर्याथचाजिनं **व**., समास्तीर्य ततोऽजिनम् **योया**.५.१२

१२४ **योया**. ५.१३, स संपूज्य **य**., च संपूज्य फलपुष्पोदकादिभिः **ष**., सरस्वतीं सुसंपूज्य स्कन्दं विघ्नेश्वरं गुरुम् **सूज्ञा**. १२.८

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१२५ तत्र चारभ्य चासनं **व**., **श**., इति देवं गुरुं नत्त्वा तत्र आरभ्य आसनं **ष**.

१२६ वा स्यात् मृद्वासनगतः **य**., **ल**., उ दङ्मुखो प्राङ्मुखो वा मृद्नासनग..**व**., उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा जितासनगतः **श**., खो वापि जितासनगतः **ष**., **योया**. ५.१४, आरुह्य चासनं पश्चात् प्राङ्मुखोदङ्मुखोऽपि वा **सूज्ञा**. १२.९

१२७ **योया**. ५.१४, **सूज्ञा**. १२.१०, काय उन्नास्यः सुनिश्चलः **य**., समकायशिरग्रीवः **श**., समुन्नतसुनिश्चलः **ष**.

१२८ **य**., दृक् सव्यमंके सव्ये **र**., तदा सम्यक् सव्ये न्यस्येतरे करं **ल**., सदा सम्यक् सव्ये न्यस्येतरं तरं **व**., दृक् सदा सम्यक् सव्ये **श**., **योया**. ५.१५, नासायां तु सदा सम्यक् न्यस्य सव्येतरं करं **ष**.

१२९ नासाग्रेण समुत्पन्नं ज्योत्स्नाजालशतान्वितम् **य**., ज्योत्स्नाजालवितान्वितं **ल**., जालविभान्वितं **व**., शशधृक् विश्वं ..विभाततं **श**., नासाग्रे ध्याननिरतो ज्योत्स्नाजालविभावितं **ष**., ज्योत्स्नाजालवितानितम् **योया**. ५.१५, द्विंबं बिन्दुमश्च तुरीयकम् **सूज्ञा**. १२.१०

१३० **योया**. ५.१६, तप्त, इतः परं श्लोकार्धपरिमितं रिक्तं स्थलम् **य**., सप्तमस्य च **श**.

१३१ **य**., बिंबमध्यं समालोक्य नेत्राभ्यं समना सह **ल**., इंदुंमध्य..**श**., नेत्राभ्यां नासिका सदा **ष**.

१३२ **य**., पुस्तके नास्ति, बाह्यद्वादशमात्रकैः **ल**., बाह्यं द्वादशमात्रकैः **श**., इडया वायुमारोप्य पूरयित्वोदरस्थितम् **योया**. ५.१७

१३३ ज्ज्वालाविभूषितम् **य**., ध्यायेत् कालाग्निवलिभियुतं **ष**., ततोऽग्निं देह मध्यस्थं ध्यायन् ज्वालावलीयुतम् **योया**. ५.१७, ततोऽग्निं देहमध्यस्थं ध्यायज्ज्वालावलीमयम् **सूज्ञा**. १२.१२

१३४ **योया**. ५.१८, मंडलसंयुतं **य**., **ल**., **व**., रेफं तु **श**., बिन्दुनाद समायुक्तमग्निबीजं विचिन्तयेत् **सूज्ञा**. १२.१२

१३५ **योया**. ५.१८, संरेचयेत् पश्चा..**य**., विवेचयेत् **व**., पिंगलया सह **श**.

१३६ **योया**. ५.१९, पूर्यवह्निबीजमनुस्मरन् **सूज्ञा**. १२.१३

१३७ विरेचयेद्वामे देहे प्राणं शनैः शनैः **य**., तद्वद्विरेचयेत् पश्चादिडया च शनैः **ल**., **श**., **ष**., तद्वद्विवेचयेद्वामे देहप्राणं शनैः शनैः **व**., पुनर्विरेचयेद्धीमानिडया तु शनैः **योया**. ५.१९, पुनर्विदेचयेद्धीमानिडयैव शनैः **सूज्ञा**. १२.१४

१३८ ..र्वासरं यावत् त्रिचतु.. **य**., त्सरं यावत् त्रिचतुर्मा..**ल**., **व**., **ष**., द्विचतुर्वत्सरं यावत्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

श., त्सरं वाथ त्रिचतुर्मासमेव वा **योया**. ५.२०, **सूज्ञा**. १२.१४

१३९ षड्विंसदाचरेदेवं **य**., षट्कृत्वा चाचरेदेवं त्रिषु लोकेषु यत्नतः **ल**., यश्च. सदाचरेदेवं **व**., षट्कृत्व आचरेदेवं त्रिषु...**र**., रेदेतत् **ष**., आचरेन्नित्यं रहस्येवं त्रिसन्धिषु **योया**. ५.२०, **सूज्ञा**. १२.१५

१४० **योया**. ५.२१, **सूज्ञा**. १२.१५, चिह्नोपलक्षणं **य**., ह्नोप. **र**., पलाक्षितः **व**. नाडीशुद्धिस्तथा प्रोक्ता पृथक् चिह्नपरीक्षिता **ष**.

१४१ विवर्धनः **य**., दिप्तिर्वह्नेर्जठरवर्तिनः **योया**., ५.२१, **सूज्ञा**. १२.१६

१४२ नादादिव्यक्तविद्यैतच्चिह्नं तत्सिद्धिसूचकं **य**., तत्सिद्धिसूचकं **ल**। रित्येवं चिह्नं तत्सिद्धिसूचकं **श**., नास्तीदमर्धम् **ष**., तत्सिद्धिसूचकम् **सूज्ञा**. १२.१६,..रित्येते चिह्नं तत्सिद्धिसूचकम् **योय**. ४.२२

१४३ **सूज्ञा**. १२.१७, तावदेव **योया**. ५.२२, तावदेतत् समाचरेत् **व**., ..वदेवं समभ्यसेत् **श**.

✷ इतिवसिष्ठसंहितायां योगकांडे द्वितीयोध्यायः।।२।। **य**., इति वसिष्ठकांडे द्वितीयोध्यायः।।छ।। **र**., द्वितीयोध्यायः **ल**., इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे द्वितीयोध्यायः **व**., इति वासिष्ठयोगकांडे द्वितीयोध्यायः।। **श**., इति योगशास्त्रे वसिष्ठसंहितायां द्वितीयोध्यायः **ष**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीयोऽध्यायः

१ **य.**, **व.**, मातृकयोर्नास्तीदं वाक्यम्, वशिष्ठ **श.**, याज्ञवल्क्य उवाच **योया.** ६.१

२ **य.**, पुस्तके नास्ति, प्राणायाममथेदानीं प्रवक्ष्यामि विधानतः **योया.** ६.१

३ **य.**, पुस्तके नास्ति, इतः प्रभृति मृणालान्तरसूत्रवत् (३.३९) पर्यन्तो भागः नास्ति **ष.** पुस्तके, समाहितमनास्त्वं च शृणु गार्गि वरानन **योया.** ६.१

४ प्रकीर्तिताः **य.**, पानसमायुक्तः **व.**, प्राणायाम इतीरितः **योया.** ६.२

५ **व.**, प्राणायामामैस्त्रिभिः प्रोक्तो रेचपूरककुंभकैः **य.**, स्त्रिधा प्रोक्तो **र.**, प्राणायाम इति प्रोक्तो **योया.** ६.२, **सूज्ञा.** १६.१

६ **योया.** ६.३, वर्णात्मकास्त्रयो ह्येते **ल.**

७ एषः **योया** ६.३ स एव...यामस्तु तन्मयः **य.**, एव प्रणवः **ल.**, **व.**, **सूज्ञा.** १६.२

८ वेदान्ते (ते) च प्रतिष्ठितः **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, वेदान्ते यः प्र... **वृया.** २.५२

९ त्मकावाद्यौ मकारश्चांतकः स्मृतः **य.**, स्थितिकरावेतौ मकारश्चान्तकः स्मृतः **व.**, मकाराख्योंतकः स्मृतः **श.**

१० आकारमूर्तिरत्रापि रक्तांगी हंसवाहिनी **य.**

११ हस्तागतिर्बाला गायत्रीत्यवधार्यते **य.**, हस्ता सती बाला गायत्रीत्यवधार्यते **ल.**, त्रीत्यवधार्यते **व.**, **श.**

१२ उकारमूर्तिरमध्यस्था युवती कृष्णविग्रहा **य.**, **श.**, उकारमूर्तिमध्यस्था युवती शुक्लविग्रहा **ल.**, मूर्तिरव्यक्ता युवती हृष्टविग्रहा **व.**

१३ गरुत्मवाहिनी चैव वैष्णवी चक्रधारिणी **य.**, गुरुत्म **र.**, गरुत्मद्वाहिनी वापि वैष्णवी चक्रधारिणी **ल.**, गरुडवाहिनी सापि सावित्री चक्रधारिणी **व.**, गरुत्मवाहिनी चापि वैष्णवी चक्रधारिणी **श.**

१४ **श.**, मकारमूर्तिः शुभ्रांगी या देवी वृषवाहिनी **य.**, त्रिशूलहस्तालक्षांगी सावित्री वृषवाहिनी **र.**, मकारमूर्तिः शुभ्रांगी सावित्री वृषभध्वजा। सरस्वती शूलहस्ता वृद्धा वृषभवाहिनी **व.**

१५ ..रीति सा प्राज्ञैः पश्चिमाशा प्रकीर्तिता **य.**, माहेश्वराति सा प्राज्ञैः पश्चिमा सा प्रकीर्तिता **ल.**, **व.**, माहेश्वरीति सा प्राज्ञैः पश्चिमा परिकीर्तिता **श.**

१६ तद्धि सर्वकारणमिष्यते **य.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१७ कारणं तस्य भारूपं **य.**, ब्रह्मरूपं सर्वस्य कारणं **व.**

१८ ओंकारपरमं ज्योतिस्तस्याहुः प्राणवं बुधाः **य.**, योतिः **र.**, ओंकारः परमं ज्योतिस्तमाहुः प्रणवं बुधाः (धः) **ल.**, ओंकारं परमं ज्योतिस्तमाहुः **व.**, **श.**

१९ प्रणवेन विधानतः **व.**, प्रणवेन समाहितः **योगवा**. २.५०

२० प्राणायामं त्रिधा **ल.**, **श.**, प्राणायामं त्रयं **व.**, प्राणायामत्रयं कुर्यात् पूरकुम्भकरेचकैः **योगवा**. २.५०

२१ **योगवा**. २.५० आकर्षस्वसने बाह्यात् **य.**, आकृष्य श्वसने बाह्यात् पूर...**ल.**, बाह्यं पूरये...**श.**, इडया वायुमारोप्य पूरयित्वोदरस्थितम् **योया**. ६.४, **सूज्ञा**. १६.२

२२ **य.**, मात्रैरुकारं **र.**, मात्रैरकारं तत्र संस्मरन् **ल.**, मात्रैरकारं तत्र संस्मरन्। आकारमूर्तिचक्रोऽपि संस्मरन् प्रणवं जपेत् **व.**, रकारं तत्र संस्मरन्। अकारमूर्तिमत्रैव संस्मरन् प्रणवं जपेत् **श.**, षोडशमात्राभिरुकारं तत्र संस्मरन्। मकारमूर्तिमत्रापि संस्मरन् प्रणवं जपेत् **योगवा**. २.५०, र्मात्रैरकारं तत्र संस्मरेत् **योया**. ६.४, **सूज्ञा**. १६.३

२३ **योगवा**. २.५०, **योया**, ६.५ पूरितं धारयेत् पश्चा..**सूज्ञा**. १६.३, धारयेत् पूरयेत् पश्चाच्चुः **य.**, इदमर्धं नास्ति **ल.**

२४ **ल.**, **व.**, **योया**. ६.५ **सूज्ञा**. १६.४, मकारम्..जपन् **र.**, मकारमूर्तिरत्रापि **य.**, मकारं मूर्तिमत्रापि **योगवा**. २.५०

२५ **योगवा**. २.५०, **योसिचं**. २.५१, **योया**. ६.६ **सूज्ञा**. १६.५, जपसंस्थितः **य.**, इदमर्धं नास्ति **ल.**

२६ **योया**. ६.६, निलात्मकम् **ल.**, पश्चात् प्रणवं ह्यनिलान्वितम् **योगवा**. २.५०, पश्चान्मकारेणानिलं बुधः **सूज्ञा**. १६.५

२७ **योगवा**. २.५०, ..लया वायुं द्वात्रिं ..**य.**, **व.**, ..लयापूर्य द्वात्रिं **श.**, ..लया गार्गि **योया**. ६.७, ..लया विप्र **सूज्ञा**. १६.६

२८ **श.**, ध्यायन्नारायणं रुद्रं प्रणम्य सुसमाहितः **य.**, त्राद्याक्षरं तत्र **र.**, **योगवा**. २.५०, ध्यायन्नंताक्षरं तत्र **ल.**, ध्यायन् त्र्यक्षरकं तत्र प्रणवं सुसमाहितः **व.**

२९ भवेदेवं पुनश्चैवं सम..**य.**, **ल.**, ..यामं भवेदेवं **व.**, भवेदेषः पुनश्चैवं **योया**. ६.८, पुनः ततश्चैवं सम.. **सूज्ञा**. १६.६

३० **योया**. ६.८, पुनः पिगलया **य.**, **ल.**, **व.**, **सूज्ञा**. १६.६

३१ **व.**, उकारमूर्तिमत्रापि संस्मरन् प्रणवं जपेत् **य.**, उकारम्..**र.**, उकारमूर्तिमात्रापि **ल.**,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उकारमूर्तिमत्रा ..**योया**. ६.९, मकारमूर्तिमत्रापिस्मरेदेकाट्रमानसः **सूज्ञा**. १६.७

३२ **व**., धारितं प्राणं पुनर्द्वात्रिंशतिद्वयं **य**., प्राणं प्रणवं विंशतिद्वयम् **र**., **योया**. ६.९, धारयेत् पूरितं विद्वान् प्रणवं विंश..**सूज्ञा**. १६.८

३३ जपेतत्रस्मरेन्मूर्ति **य**., जपेत्तत्र ..महेश्वरम् व, जपेदत्र स्मरन् मूर्ति मकाराख्यं **योया**. ६.१०

३४ इदमर्धं व मातृकायामेवोपलभ्यते

३५ **योया**. ६.१०, **व**.,

यावद्वाशक्यते तावद्धारणं जपसंयुतम्।
धारितं विसृजेत् पश्चात् प्राणं गत्या तु सूक्ष्मया।।
शनैः शनैरेष पन्थाः प्राणायामस्य सिद्धये। **योसिचं** २.५१

३६ आकारमूर्तिरत्रापि संस्मरन् पूर्ववत्सदा **य**., पूर्ववत्तथा **ल**., **व**.

३७ एवमेव पुनः कुर्यादिडया पुर्ववत्तदा **य**., एवमेव पुनः कुर्यादीडयापूर्वपूर्ववत् **ल**., **व**., एवमेव पुनः कुर्यादिडयापूर्य पूर्ववत् **योया**. ६.११, एवमेव पुनः कुर्यादिडयाऽऽपूर्य बुद्धिमान् **सूज्ञा**. १६.९

३८ नित्यमेव प्रकु..**य**., नित्यमेव ..माश्च **व**.

३९ अत्र भ्रूणहनः पापा नश्यंत्यहरहः कृताः **य**.

४० ..दृते किंचित्तारणं नरकान्नहि **य**., त्तारकं नरकादपि **ल**.

४१ नास्ति **य**. पुस्तके, रुदरे पूरणं स्मृतं **ल**., **श**., पूरकं स्मृतं **व**., पूरको हि सः **योया**. ६.२४, **सूज्ञा**. १६.१८

४२ **योया**. ६.२४, **सूज्ञा**. १६.१९, नास्ति **य**. पुस्तके, संपूर्यापूर्ववद्वायोर्धारणं..**ल**., कुंभकं भवेत् **व**., कुंभकं मतं **श**.

४३ नास्ति **य**. पुस्तके, द्रेचकः स्मृतः **योया**. ६.२५ **सूज्ञा**. १६.१९

४४ **योया**. ६.२५, **सूज्ञा**. १६.२०, नास्तीदमर्धं **य**. पुस्तके, प्रस्वेदं जनयेद्यस्तु प्राणायामस्तु सोऽधमः **ल**., प्रस्वेदं जनयेद्यस्तु सोधमः परिकीर्तितः **व**., प्रस्वेदं जनयेद्यस्तु प्राणायामो हि सोधमः **योगवा**. २.५१, **भावागणेश**, **नगोजी**.

४५ मध्यमः कंपसंयुक्त उत्थाने चोत्तमो भवेत् **य**., उत्थानेनोत्तमो भवेत् **ल**., उत्थाने चोत्तमो भवेत् **श**., चोत्तमो भवेत् **योगवा** २.५१, कम्पकः प्रोक्त उत्थाने चोत्तमो भवेत् **नागोजी**., **भावागणेश** २.५१, कम्पको मध्यमः प्रोक्त उत्थानश्चोत्तमो भवेत् **योया**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

६.२६, कम्पनं मध्यमं विद्यादुत्थानं चोत्तमं तथा **सूज्ञा**. १६.२०

४६ **योया**. ६.२६, **सूज्ञा**. १६.२१, **योगवा** २.५१, भावगणेश यावदुत्तरसंभवः **नागोजी**. २.५१, यावदुत्थानसंभवः **य**.

४७ नास्ति **य**. पुस्तके, गार्गि प्राणायामे **योया**. ६.२७, प्राज्ञः प्राणायामे **सूज्ञा**. १६.२१.

४८ **योया**. ६.२७, नास्ति **य**. पुस्तके, प्राणाज्जयति तेनैव देहः स्यात् संवृतोधिकः **ल**., प्राणं जयति तेनैव देहस्य सुस्थताधिकं **श**.

४९ **योया**. ६.२८, नास्ति **य**. पुस्तके देहश्चोत्तिष्ठते तेन किंचिज्ज्ञानाद्विमुक्तता **सूज्ञा**. १६.२४

५० **योया** ६.२८, नास्ति **य**. पुस्तके, ..सकौ देहे स्वाभाविकगुणावुभौ। तथापि नश्यस्तेन प्राणायामोत्तमेन हि **योगवा**., **भावागणेश** २.५१, सकौ देहे स्वाभा..नश्यतस्तेन प्राणायामोत्तमेन तौ नागोजी २.५१.

५१ **योया** ६.२९-३०, **योगवा**. २.५१, **नागोजी** तयोर्नासससमर्थः **भावागणेश**

५२ रेचकं पूरकं कृत्वा सुखं **य**., रेचकं पूरकं त्यक्क्त्वा **ल**., **श**., रेचकं पूरकं त्यक्त्वा मुख्यं यद्वायुधारणं **योगवा** २.५१, **नागोजी**, **भावागणेश**, रेचकं पुरकं मुक्त्वा ..**हठप्र** २.७२.

५३ सर्वे केवलकुंभकाः **य**., सर्वे केवलकुंभकः **प**., **र**., **व**. **श**. **योगवा** २.५१ **भावागणेश** **योया** ६.३१, **हठप्र**. २७३, स च केवल..**नागोजी** २.५१

५४ नास्ति **य**. **व**. पुस्तकयोः, रेच्यवापूर्य यत् कुर्यात् स वै **ल**. रेच्य चापूर्य यः कुर्यात् स वै **योया**. ६.३१, आरेच्यापूर्य यः कुर्यात् **श**.

५५ **योगवा** **नागोजी** **भावागणेश** २.५१ सहितं रेचपूरककुंभकं नित्यमभ्यसेत् **य**. केवलं चाथ कुंभकं **योया**. ६.३२

५६ **योगवा**, **भावागणेश** २.५१, **योया**. ६.३२, तारकेनैव सिद्धिः स्यात् कुंभकेन समाहितः **य**., तावद्विहितमभ्यसेत् **ल**., नास्ति **व**.

५७ **योया** ६.३३, रेचकपूरकवर्जिते **य**., **ल**., **व**., **योगवा**. २.५१ **हष्प्र**. २.७३, रेचकात् पूरकाद्वहिः **श**.

५८ लोकेषु विद्यते **य**., **व**., **श**., **योगवा**, **भावागणेश** २.५१, **योया** ६.३३, **हष्प्र** २.७४, लोकेषु वर्तते **ल**.

५९ मनोजयत्वं **ल**. दि च निश्यति **योया** ६.३४

६० **य**., मुक्तेरयं [illegible] **र**., मुक्तेरि [illegible]कात्मकः **ल**. ख्योन्तबाह्यकः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व., ख्योन्तकात्मकः **श**., महामार्गो मकाराख्यान्तरात्मनः **योया**. ६.३४

६१ दयत्येषः **योया** ६.३५ दयत्येव **व**.

६२ प्राणसंयम इत्येष महाप्राणविधारणं **य**. देहे प्राणस्य धारणम् **योया**. ६.३५

६३ एवं प्राण.. **य**. एषः प्राण **योया** ६.३६

६४ किंचित् प्राण...**य**. **व**., **योया** ६.३६

६५ **योया** ६.३७, पूरयित्वोदरस्थितः **य** पूरयित्वोदरं ततः **ल**., पूरयित्वोदरं स्थितं **व**., ..दरं स्थितः **श**. बाह्मप्राणं समाकृष्य पूरयित्वोदरेऽनध **सूज्ञा**. १६.२८

६६ अंगुष्ठजातिनासाग्रे **व**. अंगुष्ठनाभि नासाग्रधार...**श**., नाभि-मध्ये च नासाग्रे पादाङ्गुष्ठे च यत्नतः **योया**. ६.३७, नासाग्रे नाभिमध्ये च पादाङ्गुष्ठे च धारयेत् **सूज्ञा** १६.२८

६७ सम्यगासनमास्थितः **व**., शक्य आसनमास्थितः **श**., एवं ..पायः प्राणस्यतु वरानने शक्यमासनमास्थाय समाहितमनास्तथा **योया**. ६.५०

६८ **योया**. ६.५१

६९ मूर्ध्वमालोक्य वायु..**य**., वायुमायुविघातकं **ल**., वायुमायुविघातक, **व**., मायुर्विवर्धकं **श**., माकृष्य प्रणवेन समाहितः **योया** ६.५१

७० निरुध्यैनं वायुं तत्रैव **य**., निरुध्यैनं प्राणं तत्रैव **ल**., विरुद्धो तत् वायुस्तत्रैव **व**.

७१ **योया**. ६.५२, करणानि वै **सूज्ञा**. १६.३९

७२ **योया**. ६.५२, तु चक्षुषी **सूज्ञा**. १६.४०

७३ नासापुटा यथान्यासं भ्यां समग्वक्रेनिरोधयेत् **य**., नासापुटाव-नामा**भ्यां** सम्यग्वक्त्रे निरोधयेत् **ल**., नासापुटावथान्या**भ्यां श**., नासापुटौ मध्यमाभ्यां प्रच्छाद्य करणानि वै **योया**. ६.५३, नासापुटावथान्याभ्यां प्रच्छाय करणानि वै **सूज्ञा**. १६.४०

७४ सुखमुत्पद्यते नादः **य**., स्फटिकसंभवः **ल**., सुखनोत्पद्यते नादः **व**., नादोत्पत्तिस्त्वनेनैव शुद्धस्फटिकसंनिभा **योया**. ६.५५

७५ सुषुम्णायां **श**., **योया**. ६.५४

७६ आमूर्ध्निवतुलो नादो वेणुकुंडमिवात्थितः **य**., आमूर्ध्नो वर्तते **ल**., **योया**. ६.५५

७७ **सूज्ञा**. १६.४२, निभस्त्वादौ **य**., **ल**., **श**., **योया**. ६.४६

७८ प्रश्न र, अत्र श्लोके मातृकासु चरणव्यत्यासः श्लोकार्धव्यत्यासो वा सर्वत्र दृश्यते यथा -व्योमरंध्रगतो नादो गिरि प्रसुवर्ण विदुः। व्योमरन्ध्रगतेवायौ मनसापि सहेंदियैः **य**., व्योमरंध्रगतो नादो गिरिप्रस्रवणं यथा। व्योमरंध्र.. सहेंदियैः **ल**., गते रात्रौ **व**., ब्रह्मरंध्रगतो

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

...गिरिप्रस्रवणो यथा। व्योमरंध्रगते वायौ मनसा...**श.**, ब्रह्मरंध्रइत्याद्यर्धं नास्ति **ष.**, व्योमरंध्रे गते नादे गिरिप्रस्रवणं यथा। व्योमरंध्रगते वायौ चित्ते चात्मनि संस्थिते **योया.** ६.५६-५७

७९ **योया.** ६-१७, सदानंदी **य.**, तदानंदो भवे..**ष.**

८० ..परे येतु वदंति **य.**, **ल.**, समचेतसः **योया.** ६.५८

८१ पराः सर्वे रेचपूरक **श.**, पूरणवर्जिताः **योया.** ६.५८

८२ पीडयेच्छिवां **य.**, पीडयेत् स्थिरां **ल.**, दक्षिणेन तु..पीडयेच्छिवां **व.**, पीडयेत्शिराम् **योया.** ६.१९. दक्षिणोत्तरगुल्फेन सींवनीं... **सूज्ञा.** १६.४४

८३ दक्षिणम् योया. ६.५९, **ष.**, दक्षिणाम् **ब.**, **र.**, **ल.**

८४ रंतरं सम्यक् निछिद्रं **य.**, रंतरे सम्यक् **ल.**, रंतरं सम्यक् **व.**, रंतरं तत्र निछिद्रं **श.**, जङ्घयोरन्तरे **ष.**, रन्तरं गार्गि निश्छिद्रं **योया.** ६.६०

८५ **योया.** ६.६०, शिरश्चक्षुः **य.**, **व.**, शिरश्चक्षुः समपृष्ठसमोदरः **ल.**, शिरः कायः समसमपृष्ठः समोदरः **श.**, शिरचक्षुः समदृष्टिः समोदरः **ष.**

८६ लोकयत्रव्यवस्थितं **य.**, लोकयन्त्रुपरिस्थितं **ल.**, **श.**, **योया** ६.६१

८७ **ल.**, **श.**, भावयेन्मन सा सार्धव्याहर (रिक्तं थलम्) **य.**, भारत्या मनसा **र.**, भावयन् मनसा सर्व व्याहरन् प्रणवात्मकम् **ष.**, धारयन् मनस सार्धं **योया.** ६.६१

८८ आसनेवान्मिधीरास्ते रहस्यं विजि...**य.**, रास्ते द्विजो रहसि नित्यशः **योया.** ६.६२

८९ **योया**, ६,६५, प्राणो बंधनेन लयं गतः **य.**, नाग्नीछलं गतः **ल.**, प्राणस्थूले नाग्निस्थलं गतः **व.**, घातकः प्राणः अनेनागिस्थलं गतः **श.**

९० सह निश्चयः **य,**

९१ **योया**, ६.६५, धूम्रध्वजं जयेद्यावत्तावन्ताल्पधियाभ्यसेत् **य.**, ध्वज जयेद्यावन्ना..**व.**, ध्वजलयं यावन्नान्याचेताः समभ्यसेत् **ष.**

९२ प्रियालये प्राणं **य.**, आरोप्य पातयेत प्राणं शनै...**ष.**

९३ लोकनान्नाभिं मनसा प्रणवं जपन् **य** लोकयेत्राभि..जपन् **ल.**, जपन् **व.**, लोकयन्? न्द्रं..जपन् **ष.**

९४ जगत्प्राणः कंदनाभेरधस्तदा **य.**, जगत्प्राणः **ल.**, **व.**, कंदेनाभेररधस्तथा **श.** नित्यस्मिन् त्वर्गं प्राणश्च कर्णनाभिरवं तथा **ष.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

९५ लयत्यस्मिन् **श.** लयत्यस्मिन्नाभो सवितृमण्डले **योया.** ६.६८

९६ **योया** ६.९, इदमर्धं **य.**, **र.**, पुस्तकयोर्नदृश्यते। **ल.**, पुस्तकमनुसृत्यतदत्रविनिवेशितम्। नास्ति **ष**, पुस्तके

९७ **योया**. ६.६९, **र**. पुस्तके नास्ति। **य**. **ल**. पुस्तकयोर्दृश्यते तत्रयोगो न संशयः **श**. नास्ति **ष**. पुस्तके

९८ ततः सा वह्निना दग्धा प्रवोधं..**य.**, वह्निना दग्धः **व.**, वह्निना नादः **श.**, संतप्ता वह्निना तत्र वायुना चलिता स्वयम्। प्रसार्य फणभृद्भोगं प्रबोधं याति सा तदा **योया.** ६.७०

९९ संस्मरत्यस्मिन **य**. प्रबधे **र.**, प्रबुद्धे संस्मरन् मूर्ध्नि वायुयंः पूरये त्ततः **ल.**, प्रबुद्धे संस्मरन् तस्मिन् वायुमारोपयेततः **व**. प्रबुद्धे संस्मरन् तस्मिन् वारोपयेत्ततः **श**. प्रबुद्धे संसरत्यस्मिन्नाभिमूले तु चक्रिणि **योया**. ६.७१

१०० न्नोंकारमरम् **य.**, **ल.**, नास्तीदमर्धम् **व**. ध्यायेदोंवारपूर्वकं **ष.**, नास्ति **व**. पुस्तके, सुषुम्णायां प्रयाति प्राणसंज्ञकः **योया**. ६.७१

१०१ शनैरापूरयेन्मू **ल.**, नास्ति **व**. पुस्तके, रारोपयेद्वह्निं नाग्नि वायुमनन्यधीः **ष.**

१०२ साग्निप्राणं **ल**. नास्ति **व**. पुस्तके, वायुं समाहितः **श**. विप्रेन्द्रे व्याहरन् प्रणवाक्षरम् **योया**. ६.७४

१०३ पूरितो..पांगः कलेवरः **य**. पूरते व्योम्नि **र**. पूरितव्योम्नि सांगोपांग कलेवरं **ल.**, कलेवरं **व.**, कलेवरे **श**, तेनैव प्रथितो ष, वायुना पूरिते व्योम्नि याङ्गोपाङ्गे कलेवरे **योया.** ६.७४

१०४ जायते तत्र स्याद्वयोम्नि तु दिवाकरः **य**. तदात्मा राजते **ल.**, **व.**, **ष.**, तदात्मा..व्योम्नि विकर्तनः **योया**. ६.७५

१०५ देवं ध्यानं समाचरेत् **य.**, **ल.**, शरीरं च सुसूक्ष्मंचेदेवं ध्यानं समाचरेत् **व.**, शरीरं च निरुध्य च एवं सम्यक् समाचरेत् **ष.**, विसुसृक्षुश्चेदेवं **योया**. ६.७५

१०६ एकारं परमं ब्रह्म ध्यायन् **य.**, एकाक्षरं परं ब्रह्म **योया**. ६.७६

१०७ **योया**. ६.७६, संचित्य मनसा **य.**, संजित्य **व.**, संचिंत्य मनसा **ष.**

१०८ **योया**. ६.७७, प्राणं मुक्त्वा चरेत् पश्चान्महाप्राणे स्वमध्यमे **य.**, महाप्राणेथ मध्यमे **ल.**, महाप्राणमथाव्यये **श.**

१०९ **योया** ६.७७, शून्यनित्ये **य.**, भेदातीते..ध्रुवे परे **ल.**, नित्ये जगत्पदे **व.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

११० **योया**. ६.७८, आत्मज्ञानसदानंद आत्मधीनो जपेद्विया **य**., आत्मानं योजयेद्धिया **ल**., **व**., **श**.

१११ भवेद्गार्गि **योया**. ६.७८, ब्रह्माभ्यासाद्भवेत् पुत्र **य**., ब्रह्माकाशे वसेन्नित्यं न पुन..**ष**.

११२ योगांगानि तवानघ **य**., न्येतानि तत्त्वानि..तवानघ **व**., तपोनिधे **श**., योगाङ्गानि द्विजोत्तमे **योया**. ७.१

११३ **योया**. ७.१, प्रत्याहारणि चत्त्वारि तदन्वाभ्यं..**य**., प्रत्याहाराणि **व**.

११४ **योया**. ७.२, **सूज्ञा**. १७.१, विषयेषु प्रभावतः **य**., येषु प्रवर्ततः **व**.

११५ **योया**. ७.२

११६ **योया**. ७.३, यद्यत् पश्यति तत्सर्वं पश्येयदात्मैवत्वात्मनि **य**., पश्येदात्मानमात्मनि **ल**., सर्वं ब्रह्म पश्येत् समाहितः **सूज्ञा**. १७.२

११७ **योया**. ७.३, सविज्ञेयो **ष**., प्रत्याहारो भवत्येष ब्रह्मविद्भिः पुरोदितः **सूज्ञा**. १७.३

११८ **योया**. ७.४

११९ **योया**. ७.४, तेषामात्मन्यात्मधीर्मनसा च निवेशितः **य**.

१२० अथवा नित्यकर्माणि ब्रह्माराधनबुद्धितः।
काम्यानि च तथा कुर्यात् प्रत्याहारः स उच्यते।। **सूज्ञा** १७.४-५

१२१ **योया**. ७.५, प्रत्याहारः स च प्रोक्तो विद्वद्भिर्वेदवादिभिः **य**.

१२२ प्रत्याहारः प्रशस्तत्वात् सेवितो योगिभिः **सदा य**., प्रत्याहारे प्रशस्तं तत् प्रशस्त योगिभिः सदा **ल**., प्रत्याहारः प्रशस्तः सः सेवितो योगिभिः सदा **श**., प्रशंसंति सेवितं योगिभिः सदा **ष**., प्रत्यहारः प्रशस्तोऽयं सेवितो योगिभिः सदा **योया** ७.५

१२३ **योया**. ७.६, र्मध्यस्थानेषु धावनं **य**., नेषु साधनं **व**.

१२४ स उच्यते **य**., प्रत्याहारो निगद्यते **योया** ७.६

१२५ **ल**., जंघास्यमुदरस्य च **य**., जंघमध्योस्तथै..**र**., जंघामध्ये तथैव च **ष**., **योया**. ७.८, जंघासंधी तथैव च **श**.

१२६ चित्तमूले च जानौच **य**., चित्यो मूले च जान्वौ **ल**., चितेर्मूले च जानू च **श**., दोर्मूले जानुमूले च मध्ये चोर्वोस्तथैव च **ष**., चित्योर्मूलं च जान्वोश्च **योया**. ७.९

१२७ वायुमूलं ततः पश्चान्मध्यदेशं च **य**., मध्यदेशश्च मेंद्रकं **ल**., पश्चाद्देहमध्यं च मेद्रकं **श**., **योया**. ७.९ पादमूलं **ष**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१२८ नाभिं च हृदयं चोरू कंठकूपं तथैव च **य.**, कण्ठकूपं तथैव च **ल.**, हृदयं चैव कंठकूपं तथैव **श.**, **ष.**, नाभिश्च हृदयं गार्गि **योया**, ७.१०

१२९ नासा च मूलं चक्षोश्च मध्यमं **य.**, नासायां मूलं..मध्यमौ **ल.**, मध्यमे **श.**, मध्यगे **ष.**, चाक्ष्णोश्च मण्डले **योया.** ७.१०

१३० र्मध्यललाटं च मूर्ध्ना च मुनिसत्तमः **य.**, र्मध्ये ललाटं च मूर्द्धिन च मुनि..**ष** मूर्धा च मुनिसत्तमे **योया.** ७.११

१३१ **योया.** ७.११, मानं चैषां पृथक् पृथक् **य.**, **ल.**, धर्मस्था..स्थानं चैव पृथक् **व.**, सर्व स्थानानि चैतानि मानस्तेषां पृथक् पृथक् **ष.**

१३२ पादांगुष्ठात्तु गुल्फस्य **य.**, पादांगुष्ठात्तु गुल्फस्य पृथङ्गमानं न विद्यते **ल.**, पादांगुष्ठात्तु गुल्फस्य पृथग्मानं न विद्यते **श.**

१३३ **योया** ७.१२, च गुल्फस्य **य.** पादांगुष्ठं तु गुल्फस्य सार्धांगुलिचतुष्टयं **ल.**, पादांगुष्ठात्तु गुल्फस्य सार्धांगुलचतुष्टयं **श.**, पादमूलाच्च गुल्फस्य **ष.**

१३४ गुल्फाजंघस्य मानं च विज्ञेयस्तु **य.**, जंघस्य मानं तु विज्ञेयं **ल.**, गुल्फाजङ्घोरु मानं तु विज्ञेयं च दशा..**व.**, गुल्फाच्च जंघामध्ये तु विज्ञेय तु दशा..**श.**, विज्ञेयं तद्दशांगुलं **योया.** ७.१२

१३५ जंघामध्याज्जानुमूलं यत्तदेकादशांगुलं **य.** जङ्घमध्याश्चित्योर्मूलं **योया.** ७.१३

१३६ नास्ति **य.** पुस्तके, चितामूलान्महाभाग जानुः स्यादंगुलद्वयं **ल.**, मूलान्महाभाग जानुः स्यादंगुलत्रयं **व.**, महाभाग जानुः स्यादंगुलिद्वयं **श.**, मूलान्मुनिश्रेष्ठ जानुस्याच्च दशांगुलं **ष.**, चित्योर्मूलाद्वरारोहे जानुः स्यादङ्गुलिद्वयम् **योया.** ७.१३

१३७ नास्ति **य.** पुस्तके, प्राहुंस्तरुमध्यं **र.**, जान्वोर्नवांगुलंप्राहुरूरुमूलं मुनीश्वर **ल.**, प्राहुरूरुमध्यं मुनीश्वराः **योया.**७.१४

१३८ नास्ति **य.** पुस्तके, मध्यात्तुतद्वत्स **व.**, पायुस्थानं **ष.**, गार्गि पायुमूलं **योया.** ७.१४

१३९ तथा पायोः सार्धांमुलचतुष्टयं **य.**, पायोर्मूलं वत्सांगुलिद्वयं **ल.**, गुलिद्वयं **श.**, देहमध्यात्तथापायोर्मूलंसार्धा **ष.**, मूर्लादर्धाङ्गुलद्वयम् **योया.** ७.१५

१४० पुनर्मेहं तद्वत् **य.**, सार्धांगुलिद्वयं **ल.**, तच्च सार्धांगुलिद्वयं **श.**, तस्मात् सार्धांगुलद्वयं **ष.**, मध्यात्तथा मेढ्रं तद्वत्सार्धाङ्गुलद्वयम् **योया.** ७.१५

१४१ ..भिश्च विज्ञेयस्तथा **य.**, **ल.**, विज्ञेया गार्गि सार्ध..**योया.** ७.१६

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१४२ हृदयं च प्रकीर्तितं **य.**, मध्यं च प्रकीर्तितं **ल.**, **व.**, **श.**, मध्यं च वरानने **योया.** ७.१६

१४३ द्वादशांगुलकं तस्मात् कंठकूपं तथैव च **य.**, षडंगुलं तु हृन्म..कूपं तथैव च **ल.**, **योया.** ७.१७

१४४ कूपाच्च **य.**, **योया.** ७.१७ मूलं तु चतुरंगुलं **श.**, कूपाच्च विज्ञेयं जिह्वायाश्चतुरङ्गुलं **ष.**

१४५ जिह्वामूलाच्च नाशाया मूलं स्या..**य.**, जिह्वामूलात्तु नासाया मूलंस्या..**ल.**, **व.**, मूलं च जिह्वाया **श.**, जिह्वामूलाच्च नासायास्तथा स्याच्चतुरङ्गुळं **ष.**

१४६ **ल.**, **योया.** ७.१८, च तन्मूला.. मिहेष्यते **य.**, नेत्रमध्यं तु तन्मू..मिहोच्यते **व.**, स्थानं च तन्मू..**ळ.**, देहस्थानं तु तन्मध्याद्दशाङ्गुलमितीरितम् **ष.**

१४७ **ल.**, **ष.**, **योया.** ७.१९ भ्रुवोर्मध्ये तथैव च **य.**

१४८ ललाटाख्यं भ्रुवोर्मध्यादूर्ध्वं स्यादङ्गुलद्वयं **य.**, **व.**, **श.**, ललाटाख्यं भ्रुवो..दंगुलिद्वयम् **ल.**, ललाटाख्ये भ्रुवोर्मध्ये ऊर्ध्वंस्यादङ्गुलत्रयं **ष.**, ललाटाख्यं भ्रुवो..दङ्गुलद्वयम् **योया.** ७.१९

१४९ ललाटाद्व्योमसंज्ञस्तु अंगुलत्रय एव हि **य.**, दंगुलि **ल.**, व्योमसंज्ञस्तु अङ्गुलत्रय..**व.**, व्योमसंज्ञंस्यादगुलत्रय **श.**, संज्ञं तु अङ्गुलत्रयमे..**ष.**, संज्ञं स्यादङ्गुलित्रयमे..**योया.** ७.२०

१५० **योया.** ७.२०

१५१ प्रत्याहारोत्तमः स्मृतः **व.**, हारोत्तमोत्तमः **श.**, प्रत्याहारः सचोत्तमः **ष.**

१५२ एवं यः कुरुते विद्वान् योगं वेत्ति यथाविधि **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, **य.** इदं कुरुते ..योगं ज्ञात्वा यथाविधिः **ष.**

१५३ पुनरावर्तते भुवि **य.**, न पुनर्वर्तते यतः **ल.**, पुनर्नावर्तते ध्रुवं **व.**, पुनर्नावर्तते पुनः **ष.**

✷ इति श्रीवसिष्ठसंहितायां योगकांडे..**य.**, इति वसिष्ठसंहितायां ज्ञानकर्म समुच्चये तृतीयोध्यायः।।छ।। **र.**, तृतीयोध्यायः **ल.**, इति वसि.. योध्यायः **व.** इति वशिष्ठयोगकांडे तृ..।। **श.**, इति वसिष्ठसंहितायां योगशास्त्रे तृतीयोध्यायः **ष.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चतुर्थोऽध्यायः

१ नास्तीदं वाक्यं **य**., **र**., **ल**., पुस्तकेषु।

२ पञ्च भेदतः **ष**.

३ मनासत्वं च श्रृणु गार्गि तपोधने **योया**. ८.१

४ **मल्ली रघु** ८.१८, संयुक्ता **य**., **व**., संयुक्तो मनसः **ल**., संपन्नाः मनसः **श**. संयुक्तमानसं स्थिरमात्मनि **ष**., गुणयुक्तस्य मनसः **योया**. ८.२

५ शास्त्रर्थकोविदैः **ल**., शास्त्रविशारदैः **मल्ली रघु**. ८.१८, धारणेत्युच्यते सद्भिः शास्त्रतात्पर्यवेदिभिः **योया**. ८.२

६ उदराकाशे यद्वा...**य**., **ल**., **व**., हृदये दहानागरे यद्वा आकाश **श**. हृदये देहजाया च आकाशे यद्वायुधारणम् **ष**., अस्मिन् ब्रह्मपुरे गार्गि यदिदं हृदयाम्बुजम्। तमिन्नेवान्तराकाशे यद्बाह्माकाशधारणम् **योया**. ८.३

७ **य**., **ल**., **व**., **श**., तावेवाकाशगाभवेत् **र**., एषा च धारणेत्युक्ता योगशासत्र. विशारदैः **योया**. ८.४

८ **योया**. ८.५, वायुराकाश एव च **य**., तेजरतथैवाकाश..**व**., **श**., पृथिव्याप. स्तथा **ष**.

९ धारणा मता **य**., **व**., **श**., वर्णानां धारणा योगगिर्भिर्मता **ल**.,

१० धारणा चापि **व**., धारणं चाद्यधारणा **ष**.

११ **योया**. ८.६

१२ **य**., **योया**. ८.७ आजानु **र**., आजान्वोः **ल**.

१३ **योया**. ८.७, र्हदयं यावद्वह्निस्थानं प्रकीर्तितं **य**., **ल**., **व**., **श**., हृदयांतं हि वह्नि...**व**.

१४ आहृदश्च भ्रुवोमर्मध्ये यावद्वायुस्थलं मतं **य**., युतलंस्मृतं **र**., स्थलं मतं **ल**., **व**., हृन्मध्यात्तु भ्रुवो..स्थलं मतं **श**., वायुस्थानं हि तत् स्मृतं **ष**., युकुलं स्मृतम् **योया**. ८.८

१५ **योया**. ८.८, मध्याच्चमूर्ध्वांतं तावदाकाशमुच्चते **य**., भ्रुवोर्मध्याच्चमू..यावदाकाशमुच्यते **व**., यावदाकाशमुच्यते **ल**., **श**., भ्रुवोर्मध्यात्तथाचोर्ध्वंतदाकाशमिदं भवेत् **ष**.,

१६ **य**., **ल**., पृथिवीस्थानं **व**., **ष**.,

१७ विधारयेत् **व**.

१८ एकारंधार..हंकारंव्यौम्नि...**य**., नास्ति **व**. पुस्तके.

१९ धारयेच्चैवसब्रह्मपरमेष्ठिनं **य**., धारयेद्धत्स **ल**., **व**., **श**., पृथिव्यां धारयेद्गार्गिब्रह्माणं योया. ८.१४

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२० महत्तत्वं च मारुते **य**., **ल**., रुद्रमीश्वरं चैव मारुते **ष**., रुद्रमीश्वरं वायुमण्डले **योया**. ८.१४

२१ धारयेच्चैवम..**य**., धारयेश्चैवमव्यक्तं परमेश्वरं **ल**., **व**., सदाशिव तथा व्योम्नि धारयेत् सुसमाहितः **योया**. ८.१५

२२ समन्वितः **व**., ..थिव्यां च **ष**. पृथिव्यां वायुमास्थाय लकारेण समन्वितम्। ध्यायंश्चतुर्भुजाकारं ब्रह्माणं सृष्टिकारणं **योया**. ८.१५-१६

२३ **योया**. ८.१६, घटिकाः पृथिव्यां जयमाप्नुयात् **य**., **ल**., व्यां जयमाप्नुयात् **व**., व्या जय **श**.

२४ संयोवायुम..**य**., यथोक्तं वर्णदेवेशं संयोगवायुमत्सु च **व**., वर्णदेवेशंसंयोज्य वायुमप्सु च **श**., नास्ति **ष**.

२५ सर्वंपापैः **य**, धारयेत् पञ्च घटिकां सर्वरोगैः प्रमुच्यते **ष**.,
वारुणे वायुमारोप्य वकारेण समन्वितम्।
स्मरन्नारायणं सौम्यं चतुर्बाहुं किरीटिनम्।।
शुद्धस्फटिकसंकाशं पीतवाससमच्युतम्।
धारयेत् पंच घटिकाः सर्वरोगैः प्रमुच्यते।। **योया**. ८.१७-१८

२६ सर्ववद्धारणं वह्नौ **य**., पूर्ववद्धारयन् वह्नौ.. प्रदह्यते **व**., द्धारणं वह्ने र्वह्निना स न दह्यते **श**., वह्नौ चानिलमारोप्य रेफाक्षरसमन्वितम्। त्र्यक्षं वरप्रदं रुद्रं तरुणादित्यसन्निभम्। भस्योद्धूलितसर्वांगं सप्रसन्नमनुस्मरन्। धारयेत् पंच घटिकाः वह्निनासौ न दह्यते **योया**. ८.२०

२७ मरुतां मरुतां स्थाने **य**, समन्विते **र**, मारुतं मारुतां **ल**., **श**., मारुतं..स्थानं..**व**., मारुतं मारुतस्थाने **ष**.

२८ नास्ति **य** पुस्तके, घटिकां स सत्यं खेचरो भवेत् **ष**., घटिकाः वायुवद्व्योमगो भवेत् **योया**. ८.२१

२९ **ल**., **श**., **ष**., नास्ति **य**. पुस्तके, समन्विते **र**., देवसमाहितं **व**., ..मारोप्य हकारोपरिशकारम् **योया**. ८.२२

३० क्तो भवत्यसौ **श**., घटिकां **ष**.

३१ **य**, षंस्या..गेव तु **र**, ..गेवतु **ल**., **श**., पुरीषः स्वादव्यङ्गो बहुतत्परात् **व**., षः स्यात् षण्मासादेव वत्सरात् **ष**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३२ आसनाद्वासनाद्वापि लोभं तं सक्य एव सः **य**, आसनाद्धारणाद्वत्स योगः शक्यः स

एव सः **ल**., आसनाच्छयनाद्वादि नाहुर्तु शक्य...**व**., आसनाच्छयनाद्वापि नवेष्टु शक्य एव सः **ष**. अल्पमूत्रपुरीषः स्यात् षण्मासे वत्सरेपि वा।
आसने वाहने पश्चान्नभेतव्य त्रिवत्सरात्।। **योया** १२.७

३३ यदितद्वायोः **व**., यदिदं प्रोक्तं स्थानेष्वेतेषु पङ्चमः **ष**.
सर्वासुखविनाशिनी **य**., **ल**., धारणा सा स्यादर्वागेव तु वत्सरात् **व**. सर्वासुखनिवारिणी **श**.

३४ ध्यानं च संप्रवक्ष्यामि **व**, ते संप्रवक्ष्यामि श्रृणुष्वात्र समाहितः **श**, पुत्रसमा..**ष**, श्रृणु गार्गि वरानने **योया**. ९.१

३५ **योया** ९.१, बन्धमोचेन **व**., ध्यानमेतद्धिजन्तूनां **ष**.
० अत्र **र**. पुस्तके ।।०।। एतादृशं चिह्नं वर्तते। अत्र वसिष्ट उवाच इत्याधिकं **श**.
० अत्र **र**. पुस्तके १७ इत्येवाङ्को लिखितः दृश्यते।
० अत्र **र**. पुस्तके श्लोकसंङ्ख्या।।१।। इति लिखिता दृश्यते ततः परं २,३ इत्येवं श्लोकाङ्काःसमुलभ्यन्ते। परन्तु नवीनाध्यायप्रारंभादर्शनात्स लेखकप्रसाद एवेति मत्वा अत्र श्लोकसंख्या यथामुद्रितैव **य**. **ल**. पुस्तकदर्शनादत्र मुद्रिता वेदितव्या। **श**. **ष**, योस्तु श्लोकसंख्यैवामूलान्न लिखितादृश्यत इति पूर्वमावेदितमेव।

३६ **व**., **योया**. ९.४, जन्मस्थानानि वायूनां संस्थानं **य**, जन्मस्थानानि नाडीना **ल**. पृथक् शुणु **श**., स्थानं च **ष**।

३७ विनिबोध्य समाचरेत् **ष**., कर्माणि ज्ञात्वा कुर्वात्मवेदनम् **योया**. ९.४

३८ मनसा खलु **य**., **ल**., **श**. **योया** ९.२, नास्ति **ष** पुस्तके.

३९ निर्गुणं सगुणं तथा **ल**., तदेव द्विगुणं **श**., एतच्च द्विविधं **ष**., सगुणं निर्गुणंतच्च सगुणं बहुशः स्मृतम् **योया**. ९.२

४० नास्ति **ष**.
पंचोत्तमानि तेष्वाहुर्वैदिकानि द्विजोत्तमाः।
त्रीणि मुख्यतमान्येषामेकमेव हि निर्गुणम् **योया**. ९.३

४१ एको ज्यो..सगुणं व्योमवधृतं **व**., र्मयं शांतं सर्वज्ञं व्योम..**श**., कर्मगं..**ष**., एक ज्योतिर्मय शुद्धं सर्वगं **योया**. ९.५

४२ अत्यंतममलं **य**., **ल**., प्रशान्तममलं **व**., अत्यंत विमलं नित्य **श**., अत्यंत निर्मलं नित्यमादि...**ष**., अव्यक्तमचलं नित्य..**योया** ९.५

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

४३ स्थूलं सूक्ष्मं नचाकाशं नामशून्यं न चाक्षरं **श**., सूक्ष्ममनाकारमसंस्पृश्यमचाक्षुषां

ल., मसंस्पृश्यमचाक्षु..**श**., स्थूलसूक्ष्ममयमपश्यमपिचक्षुषा **ष**.
सूक्ष्ममनाकारमसंस्पुश्यमचाक्षुषम् **योया** ९.६

४४ **योया**. ९.६, गंधाढ्यमप्रमेयमनुत्तमं **य**., मनौपमम् **र**., गंधाढ्यमप्रमेयनूपमं **ल**., अरसं न च गंधाढ्यमप्रमेय..**श**.

४५ **योया**. ९.७, कर्मकारणं **व**., मजरं सत्यं संलसत् सर्वकारणं **ष**.

४६ **योया**. ९.७ ममृतं चाजमव्ययं **श**.

४७ **श**, अदृश्यदृश्यमंतस्थं **य**., **ल**., दृश्यमन्तस्थं **र**., **योया**. ९.८

४८ **योया**. ९.८, सर्वत्वक्र **व**.

४९ **योया**. ९.९, ब्रह्मरंध्रमयोहंस्या...**य**., यद्ब्रह्मतदहं स्यामिति तद्वेदनं **व**.

५० तदेतन्निर्गुणं ध्यानमिति ब्रह्मविदो विदुः **योया**. ९.९

५१ कंदमध्यात् **य**., **व**., **योया**. ९.१२, कंदमूलात् समु..**श**., पेतं कन्दमध्यात् समुत्थितं **ष**.

५२ मानेऽस्मिं **व**., दशाङ्गुलप्रमाणेहि चतुरञ्गुलसन्मुखे **ष**., लमुन्मुखे **योया**. ९.१२

५३ **योया**. ९.१३, प्राणापानौ यिकसिते **ल**., कसितं ..कर्णकैः **ष**.

५४ **य**., **ल**., **व**., **श**., **ष**., नाव्ययं **र**, नारायणमजं हरिम् **योया**. ९.१३

५५ **योया**. ९.१४, चतुर्भुजं स्वदारांकं शंख **य**.

५६ **योया**. ९.१४, नास्ति **य**. पुस्तके. त्रायतेक्षणं **ष**.

५७ **योया**. ९.१५, नास्ति **य**. पुस्तके

५८ नास्ति **व**., भोष्ठं **योया**. ९.१५

५९ **योया**. ९.१६, पीतवासयुगावृतं **ष**.

६० परमानन्दमीश्वरं **व**., **श**., परमात्मानमव्ययम् **योया**. ९.१६

६१ **योया**. ९.१७ र्भावयेद्रूपं परितः पुरुषोत्तमः **य**.

६२ **योया**. ९.१७ नास्ति **य** पुस्तके

६३ नास्ति **य** पुस्तके, सोहमात्मेतिविज्ञानं **ल**., **व**.. मात्मेति विज्ञाय समाधिंसमवाप्नुयान् **श**., मात्मेति विज्ञानं तत्ध्यानं सगुणं **ष**., सोहमात्मेति विज्ञानं सगुणं ध्यानमुच्यते **योया**. ९.१८.

६४ **योया**. ९.१८, प्रहत्यात्मक **व**, मध्येऽपि हृत्सरोरुहकर्णिके **ष**.

६५ **योया**. ९.१९. केसरिसंयुते **य**., ऐश्वर्याष्टदलोपेते विद्याकेसकर्णिके **ष**.

६६ ज्ञानपाने महाकंदे प्राणायाम प्रबोधिते **य**., प्राणेनैव **र**., ज्ञानानले महाकंदे प्राणायामप्रबोधिते **ल**., महाकंदे प्राणायामप्रबोधिते **व**., मनः कंदे प्राणायामप्रबोधिते **श**., ज्ञात्वा मालामहाकन्दे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राणायामेन बोधते **ष**., बृहत्कन्दे प्राणायाप्रबोधिते **योया**. ९.१९

६७ **योया**. ९.२२, ज्वलंत सर्वतोमुखं **ल**., **श**.

६८ सिखातल्लीमनीश्वरं **य**., शिषातन्विनमीश्वरं **र**., शिखासंलीनमीश्वरं **ल**., शिखातन्वानमीश्वरं **श**, वैश्वानरं जगन्मोहं निकामं नित्यमीश्वरं **ष**., जगद्योनि **योया**. ९.२०

६९ **योया**. ९.२१, भासयंतं **य**., भासयंतं..तलमस्तं **ल**., भासयन्तं स्वकं देहमात्मेहतलमीश्वरं **व**.

७० दीपिते हव्यवाहने **य**., निवापदीप..**र**., निर्वातदीप..**ल**, **योया** ९.२१ निर्वाणदीपवत्तस्मिन् **व**., नास्ति **ष**.

७१ परमानंदमीश्वरं **य**., परमात्मानमक्षरम् **योया**. ९.२२

७२ भास्करं **र**., भासुरं **श**., तडिल्लेखेव **ष**., मध्यस्थविद्यू..**योया**. ९.२२

७३ **योया**. ९.२३, नीवारांशुकतद्रूपं **य**.

७४ सोहमात्मेति या **य**., **योया**. ९.२३, सोहमस्मीति **ल**., **व**., देहं सोयमात्मेति चिंतयेत् **ष**.

७५ **योया**. ९.२४, सगुणेच्चोत्तमं ह्येतद्धाचनं योगविदो विदुः **य**, सगुणैचोत्तमं **ल**., वेदविदो **व**., सगुणेचोत्तमेह्येतत् **श**.

७६ **योया**. ९.२४

७७ भावरूपं सर्वकारणं **य**, त्रिरूपं सर्व..**व**., भ्रुवोर्मध्येऽन्तरात्मान भारूपं सर्वकारणम् **योया**. ९.३०

७८ **योया**. ९.३१, स्थाणूवन्मूर्धिबपर्यंतं **य**., न्मूर्द्धिन्पर्यंतं मध्ये देहात् **र**, देहमध्यात् **श**.

७९ **योया**. ९.३१, मपितैजसं **ल**., ज्वलंतमिवतेजसं **ष**.

८० स्यामितिध्यानमुत्तमं **य**., मनसालोक्य... मितितध्यानमुत्तमं **ल**., **व**., मितियध्यान **श**., मित्येनद्ध्यानमुत्तमम् **योया**. ९.३२

८१ **योया**. ९.३५, केसरान्वितं **य**., कर्णिके केस ..**ष**.

८२ उद्भिन्नहृदयांभोजे **य**., मण्लमध्यमे **योया**. ९.३५

८३ **योया**. ९.३६, आत्मानमर्भ **य**., **ल**., **श**., भारूपिणमव्ययं **ष**.

८४ **योया**. ९.३६, सुधारसविषंवह्निः शशि..राप्लुतं **य**., सुधारसं विमुंचद्भिः सहस्राभिः समंततः **ल**., सुरसंच विमु..**व**.

८५ शोडषछद्संयुक्ताः शिरः पद्मादधोमुखात् **य**., ..संयुक्ताच्छिरः - पद्मादधोमुखात् **ल**., कण्ठपद्मादधोमुखं **व**., धोमुखं **ष**., संयुक्तशिरः पद्मा **श**., **योया**. ९.३७

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

८६ **योया**. ९.३७, धाराभिः संसिक्ताभिः समंततः **य**., निर्गतामृतधादाभिः मरमात्माहमव्ययः

ल., संयुक्ताभिः समन्ततः **व.**, घृतधारा **श.**

८७ पूरितं पुरुषं दृष्ट्वा चिन्तयिता समंततः **य.**, **व.**, पुरुषं दिव्यं चिंत ..**श.**, पुरुषं तत्र चिंत ..**योया.** ९.३८

८८ सांगोपांगकलेवरः **य.**, सांगोपांगं **र.**, संपीर्णं सांगोपांगकलेवरं **ल.**, **व.**, संपन्नसांगो ..वरः **श.**, तेनामृतरसेनैव साङ्गोपाङ्गकलेवर **योया.** ९.३८

८९ **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, **योया.** ९.३९, मव्ययं **र.**, परमात्मा सनातनः **ष.**

९० **योया.** ९.३९, एवं यो वेत्ति तद्रूपं सगुणं **ष.**,

अत्र, अहमेव परं ब्रह्म शशिरश्मिभिरावृतं।।४२।।

षोडशछद संयुक्ताच्छिरःपद्मादधोमुखात्।

निर्गतामृतधाराभिः परमात्माहमव्ययः।

एवं यद्वेदनं तच्च सगुणध्यानमुच्यते।।४५।।

इति श्लोकक्रमः दृश्यते **ल.** पुस्तके

९१ **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, **योया.** ९.४०, एतद्ध्यानामृत **र.**

९२ **योया.** ९.४०, एवंस्या **ल.**, जीवत्येव **व.**

९३ कथंचन **य.**, **ल.**, **श.**, **योया.** ९.४१, न कापि ..कथंचन **व.**, वत्समुक्तस्य नक्वापिदुःखावाप्तिर्भवेत् क्वचित् **ष.**

९४ न्मुक्तिः सदुर्लभा **य.**, मुक्तिरेव हि दुर्लभा **ल.**, **व.**, **श.**, **योया.** ९.४१

९५ **व.**, **श.**, कुरु यत्नतः **य.**, **र.**, **ल.**, कुरु मानसं **ष.**

९६ **य.**, **व.**, **श.**, फलंत्यक्त्वेव नित्यशः **र.**, अनेनसह कर्माणि फल शून्यानि **ल.**, त्यक्तेन नित्यशः **ष.**

९७ **योया.** ९.२५, अथ मंडले मध्ये आदित्यस्य महामते **य.**, दादित्यस्थं महामते **ल.**, महामते **व.**, मण्डलं ..द्युतिः **ष.**

९८ **योया.** ९.२५, हेमपिंगलं **श.**, सर्वजगतां **ष.**

९९ **योया.** ९.२६, हिरण्मयश्मश्रुकेशं **य.**, नास्ति **ल.**, पुस्तके

१०० **य.**, खगस्यासनवद्वक्त्रं, नास्ति **ल.** पुस्तके, कल्पांतानलवद्वक्त्रं **श.**, कर्पूराननवद्रूपं सृष्टि ..**ष.**, कप्यासस्य समं वक्त्रं सृष्टि ..**योया.** ९.२६

१०१ **योया.** ९.२७, सने स्थितं ..निभेक्षणं **श.**

१०२ पद्मपत्रायताक्षं च सर्वलोका **य.**, दलाभासं **ल.**, **श.**, पद्मपत्रायताक्षं च **व.**,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लोकभयप्रदम् **योया**. ९.२७

१०३ सर्वमुल्लसंतं च धार्मिकं **य**., सर्वमुल्लसंतं च धार्मिकान् **ल**., सर्वांनुत्तमाधमधार्मिकान् **श**., विराजंतंसदादेवमंबरंचैव धार्मिकं **ष**., जानन्तं सर्वदा सर्वमु ..९.२८

१०४ **योया**. ९.२८, सर्वं स्रष्टारं लोकसाक्षिणं **श**.

१०५ **व**., **श**., सोहमात्मेति या बुद्धिः .. सा च ध्याने प्रशस्यते **य**., सोहमात्मनि ..ध्यनेन शस्यते **र**., सोहमात्मेति ..साच ध्यानं प्रचक्षते **ल**., सोहमस्मीति या ...ध्यानेषु शस्यते **योया**. ९.२९

१०६ लोकस्य महामार्गस्तपोधनः **य**., स्तपोनिधे **श**., मार्गं तपोधन **ष**., एष एव तु मोक्षस्य महामार्गस्तपोधने **योया**. ९.२९

१०७ **ल**., सौरस्य मुक्तिं यांतिव सूरयः **य**. ध्याने ज्ञानेन सौरेण मुक्तिं यांगीह सूयः **र**., यांति हि साधकाः **ष**., मुक्तिं यास्यन्ति सूरयः **योया**. ९.३०

१०८ ध्यानमेतत् समाचर **य**., **व**., **ष**., नास्ति **ल**. पुस्तके

१०९ **ल**., आत्मन्यपि बहुन्याहुर्ध्यानानि **य**., अज्ञान्यपि **र**., र्ज्ञानानिमुनि **व**., अन्यानपि च बहुधा ध्यानानि **ष**., अन्यानपि बहून्याहुर्ध्यानानि मुनिसत्तमाः **योया**. ९.४३

११० चैताभ्यां **य**., उक्तान्युक्तिानि चैतेभ्यो ..**र**., मुख्यान्येतानि चैते ..**ल**., **श**., मुख्याह्येतानि ...तु **व**., उक्तान्येतानि विप्रेन्द्र जघन्या ...**ष**., मुख्यान्युक्तानि चैतेभ्यो जघन्यानीतराणि तु **योया**. ९.४३.

१११ **य**., **ल**., **श**., **योया**. १०.१, पापविनाश **र**., नास्ति **ष**.

११२ भवपाशविबद्धानां यथा त्वं वक्तुमर्हसि **य**., भवपाप **र**., भवपापविनाज्ञानं यथा ...**व**., भवपाशनिबद्धस्य **श**., **योया**. १०.१, नास्ति **ष**.

११३ गुणसंपन्नो **य**., **ल**., नास्ति **ष**.

११४ पुत्रकः **य**., ध्यानसंपन्नो समाधिं **ल**., संयुक्तं समाधिं कुरुयत्नतः **ष**.

११५ **योया**. १०.२, समता प्रोक्ता **ल**., समभावस्तु जीवा ...**ष**..

११६ परमात्मस्थितीः प्रोक्ता समाधिः प्रत्यगात्मनः **य**., **श**., स्थितीं प्रोक्ता समाधिं कुरुते बुधः **व**., प्रोक्ता समाधिः **ल**., यदात्मनि स्थितिः प्रोक्तो **ष**. ब्रह्मण्येव स्थितीर्या सा समाधिः प्रत्यगात्मनः **योया**. १०.२

११७ ध्याने यथा यथात्मानं **व**., ध्यायेद्यथा यथात्मानं तत्समाधिस्तथा तथा **योया**. १०.३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

११८ ध्यानेनात्मनि संस्थाप्य नान्यथात्मा यथा भवेत् **र**., **व**., **ष**., नान्यस्यात्मानस्या भयेन्

र., ध्यानेनात्मनि संस्थाप्य नान्यथात्यो यथा भवेत् **व**., परमात्मनि संस्थाप्यो नान्यथा चलितो भवेत् **ष**., ध्यात्वेवात्मनि संस्थाप्यो नान्यथात्मा यथा भवेत् **योया**. १०.३

११९ ध्यायन्नानंदमात्रैकं सत्यं ज्ञानमनंतकं **य**., न्नानंदमद्वैतं सत्यं ज्ञान **ल**., ध्यायन्नानन्दमद्वैरं सत्यं **व**., ध्यायन् बाह्ये तथात्मानं सत्यज्ञानमनुत्तमं **ष**.

१२० निर्गुणमात्रैव **य**., बह्मनिर्वाणमत्रैव **ल**., ब्रह्मनिर्गुण **व**., **श**., **ष**.

१२१ परिग्रहं **ष**.

१२२ ध्यायन्नारायणं देवं समाधिं **य**.

० इदमर्धषट्कं नास्ति **र**., पुस्तके **य**., पुस्तकस्थं तदत्रविनिवेशितम्

१२३ शिखासन्निभमीश्वरं **व**., शिखातन्वीनमीश्वरं **श**., शिखालंविनमी ..**ल**.

१२४ अयं श्लोकः **व**. पुस्तके ६१ तमश्लोकानन्तरं दृश्यते।

१२५ **श**., ममृतप्लुतदेहिनं **य**.

१२६ अयं श्लोकः **ल**. पुस्तके नोपलभ्यते

१२७ र्मध्ये अधीशानं ज्वलद्रूपिणमीश्वरं **ल**., **व**.,

१२८ नास्ति **य**., **ष**, मंडले देवं **ल**., **व**.

१२९ नास्ति **य**., **ष**., ध्यायन् पुरुषमात्रैव **ल**., **व**.

१३० अष्टांगयोगमेवेति पवित्रं **य**., अष्टांगं योगमेतद्धि पवित्रं **श**., अष्टांगं ध्यानमेतद्धि **ष**., एतत् पवित्रं परमं योगमष्टाङ्गसंयुतम् **योया**. १२.३६

१३१ ज्ञेयं कीर्तितं तत्तपोधन **य**., प्रोक्तं कीर्तितं **ल**., **श**., ते वरानेन **योया**.१२.३६

१३२ नित्यं कर्माणि कुर्वतः **य**., कर्माणि सर्वतः **ष**,

१३३ निवृत्ति **व**.

१३४ **ल**., **व**., **श**., **ष**., **य** इदं श्रृणुयान्नित्यं पुण्याख्या ...**य**., इमं पठते **र**., य इदं श्रृणुयान्नित्यं योगाख्यानं नरोत्तमः **योया**. १२.३७

१३५ सम्यग्ज्ञानी भविष्यति **य**., **ल**., **श**., **योया**. १२.३७

सम्यक् ज्ञानी भविष्यति **व**., सम्यक् ज्ञानं भविष्यति **ष**.

१३६ य इदं श्रृणुयान्नित्यं **य**., यस्त्वैतत् श्रृणुयान्नित्यं **ल**., यस्त्वेदं शृणुया., **व**., यश्चेदं शृणुया ...**श**., यश्चैतत् ...भक्तिश्रद्धा समन्वितः **ष**. यस्तेतच्छ्रावयेद्विद्धान्नित्यं भक्तिसमन्वितः **योया**. १२.३८

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१३७ **योया**. १२.३८, दिनैकेन प्रणश्यति **य**., पश्यति **श**., बहुजन्म ..दिनैकेन विनश्यति **ष.**
१३८ पुण्याख्यानमिदं परं **य**., **ल**., **व**., पुण्याख्यानमतः परं **श**, मिदं नरः **योया**. १२.३९
० अज्ञानजनितं पापं सम्यक् सद्य प्रणश्यति। इत्याधिकं **व**., **श**.,
योगाख्यानमिदं प्रोक्तं ज्ञानाख्यानमतः परं।। इत्याधिकं **व**.,
योगाख्यानमिदं पुण्यंज्ञानाख्यान ..इत्याधिकं **श**.
अज्ञानजनितं पापं सद्यः एव विनशति।
योगाख्यानमिदं पुण्यं कलाख्यानमिदं परं ।। इत्यधिकं **ष**।
१३९ सम्यग्विचारयेद्यस्तु ततः सर्वज्ञतामियात् **य**., विचारयत्येतत् स च सर्वज्ञतामियात् **ल**., सम्यग् विचारयन् ह्येतत् स च **व**., सम्यग्विचारयेद्यस्तु स च सर्व ..**श**., सम्यक् विधारयेदेव स सर्वगतितामियात् **ष**.
१४० ज्ञानमतंद्रिताः **श**., अनुतिष्ठति यो नित्यमेतज्ज्ञानंसमाहितः **श**., मात्मज्ञानसमन्वितम् **योया**. १२.४०
१४१ देवा अपि नमंति च **श**., नित्यकर्माणि ता दृष्ट्वा देवताः प्रीणयंति हि **ष**. नित्यकर्माणि तान् दृष्ट्वा **ल**., **योया**. १२.४०
१४२ नित्यं कर्म तथा विधि **व**., नित्यं कर्म **ष**., **योया**. १२.४१
१४३ देहिनाप्यत्र **य**., **ल**., भवबन्धनात् **ष**., देहिभिर्गार्गि योगश्च भवभीरुभिः **योया**. १२.४१

✱ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे चतुर्थोध्यायः।।४।।
य., इति वसिष्ठे योगकाण्डे चतुर्थोध्यायः **र**., इति वसिष्ठसंहितायोगकांडे चतुर्थोध्याय।। **ल**., अत्र **व**. मातृकायामध्यायसमाप्तिद्योतकं किमपि नास्ति परमग्रे १४ तमे पृष्ठे पञ्चमाध्यायसमाप्त्युल्लेखदर्शनाल्लेख कानवधानमूलकमेवेदं स्खलनं दृश्यते **व**., इति वसिष्ठयोगकांडे चतुर्थोध्यायः।।४।। **श**. इति योगशास्त्रे वसिष्ठसंहिता समाप्ता।। श्रीकृष्णमयि लेखके।। श्रीराम।।०।। **ष**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पञ्चमोऽध्यायः

१ **य.**, वसिष्ठेनान्तरात्मना **ल.**

२ महाभागः **ल.**

३ **व.**, **श.**, पुस्तकयोर्नोपलभ्यते इदं वाक्यम्।

४ **श्वे शांभा**. १.८, सदानंदोजयोमयः **य.**, दोजरामरः **ल.**

५ **य.**, संस्थितिः कस्य तातः स्यात् ..कथं स्थितिः **र.**, कथं स्थितिः **ल.**, संसृतिः कस्य तात स्यान्मोक्षो वा विद्यया विभो **श्वे. शांभा.**

६ **ल.**, भगवन् पितः **र.**, **व.**, **श.**, **ष.**, क्षेत्रनाशः कथं तस्य ज्ञायते भगवन् यतः **श्वे शांभा.**

७ **श्वे शांभा.**, मेतत् त्वं वक्तु **य.**

८ **व.**, **श.**, पुस्तकयोर्नोपलभ्यते इदं वाक्यम्। वसिष्ठः इति **श्वे. शांभा**. १.८

९ **श्वे शांभा**. १.८, नित्यमुक्तस्य **य.**, **ल.**, नित्यतृप्तस्य **ब्रविज्ञा**.४९

१० **श्वे. शांभा** १.८, कथ्यते बुधैः **य.**, **ल.**, वसिष्ठसंहितायामिति प्रस्ताव्यायं श्लोकः **ब्रविज्ञा**. ४९

११ अयं श्लोकः मोक्षशास्त्रेषु इति प्रस्ताव्य **ब्र. शांभा** ३.२.१८, योगशास्त्रेषु इति प्रस्ताव्य **ब्र. भास्करभाष्ये** ३.२.१९, श्रुतिषु इति प्रस्ताव्य **ब्रविज्ञा**, ४५१, वासिष्ठे योगशास्त्रे इति प्रस्ताव्य **श्वे शांभा**. १.८, सिद्धान्तबिन्दु १. ब्रह्मबिन्दूपनिषद् १२, त्रिपुरातापिन्युपनिषद् ५.१२, विवस्थितः **य.**, **र.**

१२ भ्रमारूढः स एवात्मा ..स्ततो भवेत् **य.**, प्ररूढः ..स्तदा भवत् **ल.**, स जीवात्मा जीवसंज्ञस्ततो भवेत् **श्वे शांभा** १.८

१३ **य.**, यत् क्षेत्रं विजा ..**र.**

१४ **ल.**, क्षेत्रज्ञसंसृतिः प्रोक्ते भुंक्ते यत्रशुभा ..**य.**, क्षेत्रज्ञो जाग्रति प्रोक्तो भुंक्तेजस्त्रं शुभा **र.**

१५ **श.**, भोगमाभ्य ...सुखादि यद् घटादिवत् **य.**, मुखादिवद्घटादिव **र.**, सुखादिवद् घटादि च **ल.**, मुखादि च घटादिवत् **व.**

१६ **ल.**, भोग्यश्च भुक्तिश्च **य.**

१७ तस्रो वै **य.**, **श.**, तस्रश्च जाग्रत् **ल.**, वस्थाश्च पञ्चैव **व.**

१८ या चतुर्थी तुरीयाख्या ...च पञ्चमी **य.**, च तुरीयाख्या सास्यावस्था तु पंचमी **व.**, च तुरीयाख्या ..च पंचमी **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

० अत्राधिकमर्धम् - भुंक्ते बाह्यानि करणैस्तत्र जाग्रद्दशाः स्वयं **ल.**, भुंक्ते च बाह्यकरणेस्तत्तुजाग्रद्दशा भवेत् **श.**

१९ स्वप्नं तु **य.**, भोक्तुमुक्तिः **ल.**, स्वप्नोपि बाह्यभूतस्य भोक्तुर्भुक्तिर्व्यवस्थिता **व.**, स्वप्नोपि **श.**

२० सिषुप्तिस्तु स्वरूपेण **य.**, प्तिश्चात्मरूपेण **ल.**, प्तिस्थानरूपेण **व.**, प्तिस्थाणुरूपेण **श.**

२१ तुर्याख्यातस्तावदात्मा **य.**, तुरीयाख्येन वेदात्मा विनिद्रेतरतारकः **र.**, तुरीयाख्यो भवेदात्मा विनष्टेंतरभावतः **ल.**, तुर्याख्यो हि भवेदात्मा विनष्टे भवभावितः **व.**, तुर्याख्यो हि भवेदात्मा विनष्टभवभावितः **श.**

२२ **य.**, सेपि च **र.**

२३ सूक्ष्मलिंग **य.**, **ल.**

२४ लिंगदेहेषु **य.**, **ल.**, संज्ञिकः **र.**

२५ पुरा पापवशाद्देहं **ल.**

२६ परिक्षयं **य.**, **ल.**

२७ शुद्धेचात्मनिवेदनं **य.**, शुद्देश्चैवात्म **ल.**

२८ ज्ञानयोग ...श्चनान्यथा **य.**, **व.**, **श.**, ज्ञानयोगवशादेवं भवे ...श्चनान्यथा **ल.**

२९ **ल.**, **श.**, क्षैत्रज्ञनाशकास्यज्ञायते **य.**, नाशकाले तु **र.**, ज्ञनके ज्ञानसूत्रकैः **व.**

३० वह्निबाह्याभ्यंतरैश्च ज्ञात्वा गच्छेद्यथा तथा **य.**, र्ज्ञात्वा गच्छेद्यथा तथा **ल.**, **व.**

३१ त्रै भवेत्तावत् ... प्रसादयेत् **य.**, सर्वं प्रसाध्यते **व.**, क्षेत्रं भवे ..साध्य सर्वं प्रसाध्यते **श.**

३२ क्षेत्रवांश्च समर्थः स्यात् क्षेत्रज्ञः स हि दुर्लभः **य.**

३३ जीवनाः **ल.**, प्राणिनः श्रेष्ठाः प्राणिनां **मनुः.** १.९६

३४ **मनु** १.९६, ब्रह्मणास्तथा **श.**

३५ **मनु** १.९७

३६ **मनु**. १.९७, **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, वादिनः **र.**

३७ ब्रह्मवित्सु परं किंचिन्नभूतमिह दृश्यते **य.**, **ल.**, ब्रह्मविद्भ्यः परं ...न्नभूतमिह दृश्यते **व.**, ब्रह्मविद्भयः परं ..न्नभूतमिह विद्यते **श.**

३८ सेत्रवांश्चैव विद्वांश्च कुर्यान्निःश्रेयसो द्विजः **य.**, क्षेत्रवांश्चैव विद्वांश्च ...यसं द्विज **ल.**, क्षेत्रकाले विना विद्वांसोस् कुर्यान्निश्रेयसं द्विजः **व.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३९ **ल.**, **श.**, स्तथापरैः य., एतेन कालो विज्ञे ...**र.**, कालो हि **व.**

४० कालश्चतैर्ज्ञातो मुक्तो **य.**

४१ वशाद्बुधः **व.**

४२ भास्करभागतः **य.**

४३ **ल.**, देहेस्मिन्नभ्यासाद्देहमध्यतः **य.**, मध्यमः **र.**, रन्तसश्च देहेस्मिन् ...मध्यतः **व.**, केषां चिन्मध्यदेहतः **श.**

४४ वियद्बास्करभागंस्यात् सोमभागं तथामृतं **य.**, भागेमृतं भवेत् **ल.**, भागः स्यात् ..भागोमृतं **व** ..**श.**

४५ तौ च कालवशान्नित्यं **य.**

४६ सर्वे च कालवशगाः **य.**

४७ तद्धि चिह्नैः **य.**

४८ **श.** पश्चादुभयतोपि च **य.**, **व.**, पश्चादुभयतोपि वा **र.**, वापि पश्चादुभयतोपि च **ल.**

४९ देहे प्राणरूपेण **व.**

५० नास्ति **व.**

५१ नास्ति **व.**, श्वासैर्भवेत् प्राणः ...णै घटिका **श.**

५२ **ल.**, **श.**, घटिकापि च राशिः स्याद्राशि ..**य.**, रात्रिः स्याद्रात्रिद्वादश ...**र.**

५३ मासौ भवेदृतुः **य.**, मासौ च भवेदृतुः **ल.**, **व.**, मासौ तु **श.**

५४ र्विद्याद्द्वेयने **य.**, ऋतुभिस्तिसृभिर्विद्याद्वेयने **ल.**, दयनं विषुवेपि वा. **श.**

५५ छतमांयुरुत्तमं **य.**, चायुरुत्तमं **ल.**, **श.**, च्छतंवायुवर्णनैः **व.**

५६ श्वासं द्वादश **य.**, **ल.**, श्वासं द्वादशरात्रयः **श.**

५७ नास्ति **य.**, पुस्तके, अविंशति तदैतस्मिन् राशौ पंचैव **र.**, अविंशति तदेकस्य **ल.**, अविशन्ति तदेकस्य राशेः पञ्चैव **व.**, **श.**

५८ नास्ति **य.**, मिथुनं **ल.**

५९ नास्ति **य.**, तुलाश्चैव **ल.**, कोथ धनु **श.**

६० नास्ति **य.**, मीनश्चैवेतिराशयः **ल.**, **व.**, **श.**

६१ च स्थिरोभयात्मका मेषाद्या **य.**, भयात्मनो मेषाद्या द्वादशराशयः **व.**

६२ चरात्मकाश्च यामेस्युरुभयोरुभयात्मकः **य.**, चरंति हि **ल.**, भवन्ति हि **व.**, **श.**

६३ नास्ति **य.**, याम्या स्यु ..**ल.**, श्चयाम्येस्युरुभया उभयात्मकः **व**, काव्यसव्ये स्युरुभये **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

६४ भविष्यं च **य.**, **ल.**, **श.**

६५ **य.**, **ल.**, **व.**, ग्रहोदरात् **र.**, अत्राधिकपङ्क्तिसहिता एषा पङ्क्ति -

षष्ट्युत्तरैस्तु त्रिशतैः श्वासैरेका तु नाडिका।
पञ्चभिर्नाडिकाभिस्तु राशिरेकः प्रकीर्तितः।
दिनं मेषादिमीनान्तैरेकं द्वादशराशिभिः।
राशिष्वेतेषु भूतेषु विज्ञातव्या ग्रहोदयाः।।

इत्येवंरूपेण राघवभट्टकृतायां शारदातिलकटीकायाम् पृ ३९७, अन्यत्रापि इत्येवं प्रस्ताव्य लिखिता दृश्यते। अनन्तरं राघवभट्टोद्धतवचनानां अन्यत्रापि इत्येव प्रस्तावना ज्ञातव्या।

६६ वायुरग्निस्तथाभूमिराप ...पञ्चकैः **य.**, वायुर्भूमिस्तथावह्निरापः **ल.**, खमिति पञ्चमम् राघव पृ. ३९७.

६७ **ल.**, **व.**, मपिजंतूनां वायवी प्रथमा मता **य.**, मेव नाडीनां वायव्याद्या तु नाडिका **र.**, द्यास्तु नाडिकाः **श.**, मेव राशीनां **राघव**. ३९८

६८ **राघव**. ३९८

६९ राव. ३९८, पंचमी मता **श.**

७० र्वाव्यांशोदयस्तदा **य.**, र्वायव्यांशोदयस्तथा **ल.**, **व.**, **श.**

७१ नास्ति **य.**, चरत्यूर्ध्वं पार्थिवे तूभयाश्रितः **ल.**, चरत्यूर्ध्वं पार्थिवे वामपार्श्वतः **श.**, पार्थिवेस्तंभार्श्वयोः **व.**

७२ नास्ति **य.** पुस्तके, र्वारुणांशोदयस्तथा **ल.**, **व.**, **श.**

७३ **य.**, **ल.**, नाशामध्ये **र.**

७४ वायव्ये वरुणेग्नौ भृगुःकुजः **य.**, गुरुवाहश्च **व.**

७५ बुधरवी ज्ञेयौ **य.**, **राघव**. ३९७, बुधरवी ज्ञेयौ ...शनीश्वरौ **ल.**, भूमौ रविबुधौ **श.**, इतः प्रभृति सर्वाणि राघवभट्टकृतायां शारदातिलकटीकायामुध्दृतानि वचनानि, अन्यत्रापि, इत्येवं प्रस्ताव्योद्धतानीति विज्ञेयम्।

७६ आकाशे ..विद्यादेवं सर्वेषु **य.**, आकाशं **र.**, विंद्यादेवं **ल.**, विद्यादेवं **श.**, आकाशं सग्रहं विद्यादेवं **राघव**. ३९७

७७ पूर्वोदयास्तुसर्वत्र सौम्याः पापास्तनंतराः **य.**, सर्वे सौम्याः **र.** पूर्वोदयास्तुसर्वत्र सौम्याः **ल.**, पूर्वोदयास्तुसर्वंत्र सौम्याः **व.**, **श.**, **राघव**. ३९८

७८ **राघव**. ३९८, श्चैते दक्षिणतः **ल.**, सौरिश्चैते **व.**, शोरिरेते **श.**

७९ गुरुर्भृगुर्बुधश्चंद्रः सर्वे वामे शुभावहाः **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, गुरुर्बुधो **र.**, गुरुर्भृगुर्बुधश्चन्द्रः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

सव्ये ..**राघव**. ३९८

८० **व**., पापाश्चशुभदाः सर्वे सौम्याः पापफलास्ति मे **य**., कराइमे **र**., पापाश्च शुभदाः सव्ये सौम्याः पापफलाश्च ये **ल**., श्चशुभ...पापफला **श**.

८१ निर्गमेचाशुभावहाः **य**., निर्गमे **र**., निर्गत्वशुभोवहा **ल**., शुभदाः सोम्ये सोम्याः पापफलास्त्विमे **व**.

८२ राशिषु सर्वेषु ग्रहोदय...**य**., **व**., राशिषु सर्वेषु ग्रहोदयवशात्ततः **ल**., शशिषु भूतेषु **श**.

८३ शुभाशुभफलं ज्ञात्वा **य**., **ल**., सदाज्ञात्वा **व**.

८४ स्थितस्तत्र प्रश्नं च शुभमेव तत् **य**., **श**., स्थितस्तत्र प्रष्टाचेच्छुभमेव तत् **ल**., स्थितस्तत्र ..पृष्टं च शुभमेव तत् **व**.

८५ **ल**. यत्रभागे ..तत्रश्चेद्वृथा हि तत् **य**., यस्मिन् भागे ..तत्रस्थंश्चेद्वृथा हि तत् **र**., वृथा हि सः **व**., **श**.

८६ सुखं दक्षिण इत्युक्तं पृष्ठे सौम्यमितीरितं **य**., पृष्ठं सौरमितीरितं **व**. **श**.

८७ अग्रस्थ यदिवा यस्येत्पृष्टे दक्षिणवत्फलं **य**., यदिवापृच्छेद्द्रष्टा दक्षिणवत्फलं **ल**., अग्रस्थो यदि वा पृच्छेत् पृष्टो दक्षिणवत् फलं **व**., अग्रे यदि वहेदेतत् पृष्ठे दक्षिणवत् फलं **श**.

८८ पृष्ठे स्थितस्य **य**., **श**.

८९ **श**., ऋद्धिर्धनसं ...**य**. **ल**., मैथुनं युक्तं धन ..**र**., फलपुष्पग्रहं तथा **राघव**. ९.३ इतः प्रभृति श्लोकद्वयम् शारदातिलकटीकायां राघवभट्टकृतायाम् उक्तं तन्त्रान्तरे इति प्रस्ताव्य लिखितं वेदितव्यम्।

९० दक्षिणसंस्थिते **य**., **ल**., **व**., **श**., कुर्यात् क्रूराणिकर्माणि ..दक्षिणसंश्रिते **राघव**. ९०३

९१ **य**., **व**., **श**., **राघव**. ९०३, विवाहकर्मादि **र**., यानि तु **ल**.

९२ वायुवामे च संस्थिते **य**., वायौवामे सुसंस्थिते **ल**., तानिकर्माणि ..विमो सुसंस्थिते **व**., सुसंस्थते **श**. वाने वायौ तु संस्थिते **राघव**. ९०३

९३ वायौ वामेपि वह्नौ च न कुर्या ...**य**., वायौ वह्नौ तु कुर्या ..**ल**., वायौ वामे च वह्नौ च न कुर्या...**व**., वायौ वह्नौ चें न कुर्याद्गमनं बुधः **श**.

९४ यदा मोहा ..**ल**.

९५ गमने सुख ...**य**., गमनं कार्यसाधनं **ल**.

९६ च गंतव्यं **ल**., मांशे च **व**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

९७ **ल.**, **व.**, दिवशादौ च राशौचावायूदय **य.**, दिवसस्यादौ च रात्रौ वा **र.**, दिराशौ तु वायू ...**श.**

९८ भवेत्तस्य **व.**

९९ राशौ च **य.**, **व.**, **श.**

१०० धनहानिर्महद्दुःखं सत्यमेव भविष्यति **य.**, हानिर्महादुःखं **ल.**, हानिर्महद्दुःखं **व.**, **श.**

१०१ नास्ति **व.**, द्वितीये चैव राशौ च यात्रा **श.**

१०२ चतुर्थे बंधुनाशः **य.**, **ल.**, देहविभ्रमः **व.**, चतुर्थे बंधुहीनः **श.**

१०३ रागसंभवः **ल.**, रोगसंचयः **व.**

१०४ न्नावमे **ल.**

१०५ संतापः पर ... **य.**, संतापः परस्मिन् मित्रसाधनं **ल.**, देहपीडा स्यात् **व.**, संतापः परस्मि **श.**

१०६ दिवसस्यांतराशौचं सर्वतस्त्वरितं भवेत् **य.**, दिवसस्यांतराशौ तु सर्वतो दुःखितो भवेत् **ल.**, राशौ च सर्वतो दुःखितं भवेत् **व.**, स्यान्तराशौ तु सर्वत्र दुरितं भवेत् **श.**

१०७ स्थानेषु च विपर्यये **य.**, **ल.**, **व.**, स्थानेषु च विपर्ययः **श.**

१०८ **ल.**, **व.**, **श.**, सर्वभूतभयं ..त्वरितो भवेत् **य.**, सर्वभूते भयं विंद्याद्राज्ञश्च हरिनं भवेत् **र.**

✷ इति वशिष्ठसंहितायां योगकांडे च पंचमोध्यायः।।५।। **य.**, इति वासिष्ठे योगकांडे पंचमोध्यायः।।छ।। **र.**, पंचमोध्यायः **ल.**, इति वासिष्ठसंहितायां योगकांडे पंचमोध्यायः **व.**, इति वसिष्ठ योगकांडे पंचमोध्यायः **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

षष्ठोऽध्यायः

१ नास्तीदं वाक्यं **य, र, ल** मातृकायाम्

२ **ल.**, **व.**, कालं भवति **य.**, पायेन भावेन **र.**, कालाविन् कालजिद्भवेत् **श.**

३ यथावद्वद मे प्रभो **य.**, **ल.**, **व.**

४ नास्ति **य.**, ब्रह्मवादिना **र.**, मुक्तः स भगवान् **ल.**, भगवन **व.**, शक्तिणा **श.**

५ **ल.**, **व.**, नास्ति **य.**, स्वात्मानं कृपया **र.**, **श.**

६ **य, र, ल** मातृकायां नास्ति

७ कालमन्यैर्वापरमार्थवित् **योया.** १०.१०

८ नियतस्तु **व.**, नियतस्तु समंहात्मानिर्दुखोविजितेंद्रिय **श.**, निर्भयः स प्रसन्नात्मा मर्त्यस्तु विजितेंद्रियः **योया.** १०.१०

९ कानि तु **श.**

१० सुखेन प्राप्य चेतसा **व.**

११ तारकेन ...यतात्मा काम **य.**, तारकं तु ...तात्मा काम ..**ल.**, तारकं तु जपेन्नित्यं यतात्मा कामवर्जितः **व.**, ओंकार च जपेन्नित्यं गतायुः कालवर्जितः। तारकेन जपेन्नित्यं शतायुः कालवर्जितः **श.**

१२ जपं चाचाच्युतं विप्र निष्कामश्चाच्युतं परं **य.**, श्चाच्युतं परं **ल.**, निष्णातश्चाच्युतः **श.**

१३ मृत्युकालमति... **य.**, मृत्युकालमति ...युर्मृत्युजिद्भवेत् **ल.**, मृत्युकालमतिक्राम्य **व.**

१४ पृच्छते प्रणवं पुरा **य.**, प्रणवाक्षरं **श.**

१५ तव वक्ष्यामि **य. व.**

१६ इंदुमग्रे सदैवासीत्योमज ...**य.**, सौम्य **ल.**, सदैवासीत् सौम्य **श.**

१७ चतुर्वर्णाक्षरात्मकं **य.**, **ल.**, **श.**, कारणाच्चभवेद्वीजं चतुर्वर्णाक्षरात्मकं **व.**

१८ **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**, ज्ञानेन कारणं **र.**

१९ पश्यंत्यनेन विद्वांशः सर्वतः परमामृतं **य.**, पश्यत्यनेन विद्वांसः सर्वतः परमामृतं **ल.**, **व.**, ये च पश्यंति **श.**

२० तदेद्ब्रह्मभवने प्रणवे **य.**, **व.**, ह्मवदने प्रणवे **ल.**, तदेव ब्रह्मभवने प्रणवे पु शूरयः **श.**

२१ संप्रपश्यंति यं नित्यं तत्ते **य.**, संपश्यंति यथानित्यं तं ते वक्ष्यामि संशृणु **ल.**, संपश्यंति धिया **व.**, संपश्यंति यथा नित्यं तत्त्वं वक्ष्यामि तत् शृणु **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२२ **श.**, कस्यास्य व्यंजनंमर्धमात्रकं **य.**, संहारसंज्ञकस्यापि व्यंजनं त्वर्धमात्रकम् **र.**

२३ काशमस्ति बिंदुमदक्षरं **य.**, **श.**, काशमबिंदुमदमक्षरं **ल.**, स्वस्ति बिंदुमदक्षरं **व.**

२४ कारयुक्तस्य यतात्मामुक्त चेतसः **य.**, **ल.**, तपस्योंकारयुक्तस्य यतात्मायुक्तचेतसः **व.**, ष्टं यथात्मामुक्ति चेतसः **श.**

२५ ह्लादनीयो मकरांतो बिंदुरूपः प्रशस्यते **य.**, हृत्ज्ज्योतीय..रूपप्र **र.**, ह्लादनीयं प्रकाशते बिंदुरूपं प्रदृश्यते **ल.**, आकारादिमकारांते विश्वरूपं प्रकाश्यते **श.**

२६ बिंदुरूपं च निनादःस्याच्छुद्धस्फटिकसन्निभ **य.**, बिंदोरुपरि नादःस्याच्छुद्धस्फटिकसन्निभः **ल.**, बिदोपरि निनादश्च **श.**

२७ **श.**, विशुद्धतेजसः शास्त्रं प्रकाशयति चेतसा **य.**, विरुद्धचेतसः शक्तिं **र.**, चेतसा **व.**,

२८ विश्वार्चिते **य.**, विश्वार्चितो **ल.**, **व.**, विश्वधिपो रुद्रो महर्षिः कृष्णपिंगलः। तथागमांतान् संदुग्धममृतं कृष्णपिंगलः **श.**

२९ रागमे **य.**

३० आगमादिकसंवेद्यो रुद्र **य**... आगमादिकसंवेद्यो ...न संशयः **ल.**, आगमादिक शास्त्रेख्यो रुद्र ...**व.**, आगमांतिक संवेद्यो **श.**

३१ **य.**, तमागमांतासंदृश्यममृतं **र.**, तमागममज्ञानदुग्धममृतं कृष्णपिंगलं **ल.**, तमागमस्थात् संदुग्धसमृतं **व.** तमागमांतात् संदुग्धममृतं **श.**

३२ **व.**, सस्रष्टुमिच्छतः क्ते सृष्टिरोंकात्मेव च **य.**, संद्रष्टुभि ...द्रष्टरोंकारएवहि **र.**, तंदृष्टमिच्छतः शक्ते दृष्टिरोंकार एव वा **ल.**, तंदष्टुमिच्छतः शक्ते द्रष्टुमोंकार एव हि **श.**

३३ **व.**, ओंकारवाचकस्तस्य रुद्रो वाच्योमृताक्षरः **य.**, रुद्रोघृणानिधिः **र.**, वाच्योरुद्रो मृताक्षरः **स.**, ओंकारवाचकः शक्ते आद्यस्तु पुरुषोत्तमः। संतुष्टिमिच्छतस्तस्य योगिनोऽपि न संशयः **श.**

३४ **ल.**, इतिवेदार्थवेदज्ञः स्वयंभूः प्राह सर्वदृक् **य.**, वेदावनज्ञ ..प्राहसर्ववित् **र.**, वेदावसानोक्तः ...सर्वदृक् **व.**, प्राह सर्ववित् **श.**

३५ संख्यादिष्वपि विद्वांसः सदा प्रणवसंस्थितः **य.**, सांख्यादिष्वपि विद्वांसो सदा ...**ल.**, सांख्यादिष्वपि विद्वांसः ...स्थितं **व.**, सांख्यादिष्वपि विद्वांसः ...मास्थिताः **श.**

३६ **ल.**, ओंकारं जगतः कालं पश्यंति ज्ञानचक्षुसः **य.**, चक्षुषा **र.**

३७ तदा व्यासादयोप्येवं विशु ...**य.**, तश्लाघ्यासादयोप्ये **र.**, तथा व्यासादयोप्येवं **ल.**,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व., प्येते **श**.

३८ नास्ति **य**., **व**., संसार दावदग्धानां **नित्याप्र**. २.१००

३९ **श**., नित्याप्र. २.१००, नास्ति **य**., **व**., मेषज्यमंतरेण वृषध्वजं **र**., नान्यादस्यास्ति भैषज्यमंतरेण **ल**.

४० गमांतसंबद्धममृतं **य**., तमागमज्ञानदुग्ध **ल**., मागमदुग्धरूपममृतं **व**., तमागमात् सुसंदुग्धमम्...**श**.

४१ निक्षिप्य **य**., **ल**., **व**., ओंकारमूर्धनिक्षिप्तं संध्यायन् प्रणवं जपेत् **श**.

४२ तस्याशु निग्रहादेव प्रकाशयति स स्वयं **व**.

४३ **ल**., महादेहदिस्थिते **य**., किंचान्यत्परमात्मा च योगिनांहृदिसंस्थितः **र**., किंचात्मा योगिनां साक्षान्महादेवोहृदि स्थितः **ल**., स सर्वयोगिनां साक्षात् महादेवो हृदि स्थितः **व**.

४४ ईश्वरः सर्वजगतः प्रभुः प्रीणाति विश्वसृक् **य**., स ईशः सर्वजगतः ...**ल**., सईशः सर्वजग...प्रीणाति सर्वदृक् **व**.

४५ संप्रीतो भगवान् रुद्रो **य**., **श**., सुप्रीतो भगवान् **ल**., सप्रीतो **व**.,

४६ ओंकारैः स्वयमागत्य मुक्ताचित्तस्य सान्निधौ **य**., ओंकारैः स्वय...युक्तवित्तस्यसन्निधौ **ल**., **व**., ओंकारात् स्वय..मुक्तचित्तस्य **श**.

४७ यतः स्वात्मा त्वं चैतत् पश्य मूर्धनि **य**., तिष्ठंति नियतस्तस्मात्त्वं चैवं **ल**., तस्मात् जप्तव्यः सप्तमूर्धनि **व**., ततस्तस्मात् त्वं ...**श**.

४८ पूरितं ब्रह्मणः कोशं शेषास्थं परमामृतं **य**., इति मे ब्रह्मचोंकारं कोष्ठस्थं परमामृतं **ल**., कोशकायस्थं पर ...**व**., कोशस्त्वं पर ...**श**., इति मे कर्मसर्वस्वं योगरूपं च तत्त्वतः **योया**. १४०.

४९ नास्ति **य**., विधिवन्मंत्रमृषि ..**ल**., त्रिधिवन्मन्त्रं ऋषिच्छंदश्च **व**., **श**.

५० नास्ति **य**., च विश्वात्मा योगयुक्तोभवत् **ल**., उपदिश्य ततो ब्रह्मा योगनिष्टोऽभवत् स्वयम् **योया** १.४०

५१ **ल**., **श**., नास्ति **य**., ऋचोक्तेन विधातेन **र**., संध्योक्तेन **व**.

५२ नास्ति **य**., मात्माविशुद्धये **ल**., प्राणानां यमनं **व**.

५३ **व**., नास्ति **य**., कासस्थं **र**, चेतास्त्वोंत्कारकोष्ठस्थं परमा ...**ल**., चेतसोंकारं कोषस्त्वं परमामृतं **श**.,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

५४ विज्ञायात्मशरीरेपि विद्याख्योंकारमक्षरः **य.**, विज्ञायात्मशरीरेपि विन्यस्यो ..**ल.**, यात्मशरीरेपि **व.**

५५ न्यस्तसमस्ततनुर्धीरः सित ...**य.**, गुंठितः **ल.**, तनुं धीरः ...ष्ठितः **व.**, मंत्रन्यस्ततनुद्वारः सि..गुंठितः **श.**

५६ शतायुरेकधर्मात्मा स्वे स्वे संसृष्टकारणे **य.**, कृंतातरेव कार्याणि स्वे स्वे संस्कृत्य कारणे **ल.**, यत्रार्तमेककर्माणि स्वसंहृत्य स्वकारणं **व.**, यथार्थमेक कार्याणि ..कारणं **श.**

५७ **व.**, विष्णोः पदे तु रमते चतुर्भिश्च **य.**, **ल.**, विष्णूपदेशे परमे चतुर्भिश्च **र.**, पदेतुपरमे चतुर्विश्वसमन्विते **श.**

५८ **य.**, विधाय योगींद्र **र.**, विधाय योगेन **ल.**, **व.**, निधाय योगींद्रो **श.**

५९ गुहायां स्थितं रुद्रं **य.**, गुहायांत्यस्थितं रुद्रं **ल.**, यांसंस्थितं **व.**, चस्थितं **श.**

६० **व.**, **श.**, यदि तिष्ठामो **र.**, गुहायां जपनिष्कामो योजपेत्सशिचेत्पुनः **य.**, गुहायां जपतिष्कामो जन्ममोक्षसि चेत् पुनः **ल.**

६१ यश्चैव परमात्मानं **य.**, यस्त्वेवं पर ..**ल.**

६२ **व.**, गुहोपविष्टममृतं तारकेन **य.**, जयेत् सदा **र.**, गुहाप्रविष्टममरं तारकेन **ल.**

६३ ब्रह्मवद्भवेत् **य.**, सकलं सम...**ल.**

६४ त्यक्त्वा च कायमात्मनः **व.**, कामममात्मनः **श.**

६५ **ल.**, **श.**, भवत्यस्मात्कालतः सोपि **य.**, बह्मैवानुद्यततस्मात् **र.**, ब्रह्मवासो भवेत्तस्य काल ..**व.**

६६ **ल.**, एवं वा विजयो ..सत्तमः **य.**, एवं च विजयोपायः ..सत्तमः **र.**, एवं वा **व.**, एवं चातिजयो ...त्तम **श.**

६७ **योया** ९.१२.

६८ **योया** ९.१२.

६९ **योया** ९.१३.

७० सुधोरसं **य.**

७१ गुरुपदेशाद्विज्ञाय पुरुषं **योया** ९.१०.

७२ **ल.**, **व.**, **श.**, ऊर्ध्वरेतो..सदाशिवं **य.**, सदाशवं **र.**

७३ सारभूतं हृदिस्थितं **ल.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

७४ **ल.**, **व.**, षोडशज्छदसंयुक्ताच्छिरःपद्मा ..**य.**, शिरः पद्मा..**र.**, युक्तशिरः **श.**

७५ **व**., प्रार्चितं पुरुष दृष्ट्वा चिंतयेत् सुसमाहितः **य**., चिंतयेत् स महामतिः **र**. प्रावृतं पुरुषं तत्र चिंतयेत् सुसमाहितः **ल**., चिंतयन् सुस...**श**.

७६ त्रैयंबकं हि निष्कामो जपेत्तद्गतमानसः **य**., नास्ति **ल**. पुस्तके, त्रैआत्मकं हि निष्कामो जपेतोङ्गतमानसः **व**., त्र्यंबकेन तु निष्कामो यजेच्चैवाच्युतः पथात् **श**.

७७ एवं च हृदयांभोजे केसरान्वित...**य**., यदेयं हृदया..**व**, एकस्मात् हृदयांभोजे **श**.

७८ **य**., **व**., बह्त्वादित्य **र**., बाह्यादित्य **ल**., ब्रह्मादित्य **श**.

७९ सुधारसं विसिंचद्भिः **य**., रश्मिभिरावृतं **ल**.

८० तमर्धहं वरदं कारणत्रयमातरं **य**., त्रयमांतरं **ल**., त्रयमातरं **व**., त्रयमावृतं **श**.

८१ त्रैयंबकंस्वदारागं **य**., त्रैयंबकमुदा..त्रिनेत्रकं **ल**., त्रयात्मकमुदारागं व त्र्यंबकं वाप्युदारागं कारणत्रयमांतरं **श**.

८२ सिक्तांगं **य**., अमृतेनापि सिक्तांगं **ल**., अमृतं नाभिषिक्ताङ्गीं **व**., नाभिसिक्तांगं **श**.

८३ **श**., त्र्यंबकेन विधानेन जपेदात्मनि चेतसा **य**., त्रियंबकऋचा नित्यं जपेत्स्वात्मनि चेतसाम् **र**., त्रियंबकेत्यृचा नित्यं जपन्नात्मनिचेतसा **ल**., नास्ति **व**.

८४ **य**., **ल**., जयद्रोनित्य..**र**. यजेद्वानित्य **श**., नास्ति **व**.

८५ तात नित्यमात्मनि संस्मरन् **य**., मृतसंजीवनं तात...स्मरन् **ल**., नास्ति **व**., जीवनं तत्र रुद्र..**श**.

८६ विश्वाधिपं रुद्रं **य**., विश्वाधिकं **ल**., नास्ति **व**.

८७ त्र्यंबकेन विधानेन जपोद्वात्मनि संमतः **य**., जपेदात्मनि संततं **ल**., त्रैयांबकेन विधिना जपेदात्मनि संस्थितः **व**., त्र्यंबकेन विना वापि यजेदात्मनि संततं **श**.

८८ याजी स एवापि सम्यग्विद्वद्भिरीरितः **य**., याजी स एवेति सम्यक् **ल**., याजी स एवापि सस्याद्विद्भिरी...**व**., याजी स एवेति सम्य...**श**.

८९ मनु. १२.९१, सर्वभूतस्थमात्मानं **य**., **ल**., **व**., **श**.

९० समं पश्यन्नात्मयाजी स्वाराज्यमधिगच्छति मनु. १२.९१.

९१ इतः प्रभृति ५० तमश्लोकपर्यन्तं नास्ति **य**. पुस्तके.

९२ मात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि **ल**., **व**.

९३ आत्मन्यपश्यब्दाह्येषु पश्वन्नपि न पश्यति **ल**., आत्मन्नपश्यन् बाह्यानि पश्यन्नपि न..**व**., आत्मन्यपश्यन् बाह्येषु पश्यन्नपि ..**श**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

९४ **ल**., आत्मस्थं देहमुत्सृज्य..**र**., आत्मस्थ वित्तमुत्सृज्य **व**., आत्मदेहस्थमुत्सृज्य सोन्यदर्जितुमिच्छति **श.**

९५ करस्थं रत्नमुत्सृज्य **ल**., नास्ति **श.**

९६ तस्मादात्मानमद्वैतं **व**., यथा स्वात्मानमद्वैतं परमानंदविग्रहं **श.**

९७ **ल**., नास्ति **य**., **र**., **व**., **श.**

९८ **श**., यस्त्वन्यकर्मशक्तश्चेज्जायेद्वाह्येषु सर्वदा **य**., यः स्वमात्मन्यसक्तश्चे..**र**., यस्तु स्वात्मानं भेदस्थो यजेब्दाह्येषु सर्वदा **ल**., स्वयमात्मन्यसक्तश्रे...**व.**

९९ लिङ्गे वा **य**., **ल**., स्वयं वा परलिंगे वा स्थापि **व**., लिंगे वा स्थापयित्वा विशेषतः **श.**

१०० त्रैयंबकविधानेन जपेद्यस्तु सदाशिवं **य**., चान्यै ..**ल**., त्रयात्मकविधानेन यजे..**व**., अंबुजे चांबुजैर्वान्यैर्यजेयुश्च सदाशिवं **श.**

१०१ यस्य विश्वार्चितो देवो महर्षिः **य**., तस्य विश्वार्चितो देवो **ल**., विश्वर्चितो देवो महर्षिः **व**., विश्वाधिपो रुद्रो **श.**

१०२ प्रकाशयति सर्वतः **य**., **ल**., **व.**

१०३ **नित्याप्र** २.१००, मृत्यूहीनः शुचिर्नित्यं सर्वा...**य**. भीतश्च **र**., मृत्युवक्त्रगतस्यापि सर्वा..**ल**., मृत्युहीनः शुची नित्यं सर्वावस्थासु **व**., मृत्युभीतः समुद्रोपि सर्वावस्थासु **श.**

१०४ ..वस्थासु..संजीवनी भवेत् **य**., सर्वापत्स्वपि सर्वत्र **ल**., सर्वत्र समदृश्योपि मृतं संजीवनं **व**., सर्वापत्स्वपि तं शर्वं मृतसंजीवनं स्मरेत् **श**., सर्वापत्सु च सर्वत्र **नित्याप्र** २.१००

१०५ **य**. योगिनां मोक्षसाक्षिणां **र**., जनानां मोक्ष ..**ल**., नराणां मोक्षसाक्षि **व**., योगिनां मोक्ष..**श**., संसारदावदग्धानां योगिनामप्ययोगिनाम् **नित्याप्र** २.१००

१०६ **ल**., **नित्याप्र**. २.१०० नात्र पश्यामि..मृतास्त्रैयंब **य**., विजयोपायं त्रैयं ..**र**., नात्र पश्यामि..**व**., मृत्योस्तु त्र्यंबकादृते **श.**

१०७ विजयोपायं **य**.,

१०८ जगन्नाथं शंखचक्रगदाधरं **य**., वासुदेवमयोनिजं **श.**

१०९ नास्ति **य.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

११० धरं पद्मनिनेक्षणं **ल.**

१११ भौष्ठं सर्वलोकवरप्रदं **य**., वरप्रदं **व**., भौष्ठसर्व **श.**

११२ पुरे तस्मिन् ..गं **य.**, **ल.**, **व.**, पद्मपुरे **र.**, नास्ति **श.**

११३ **ल.**, **व.**, जगन्नारायणं देवं तस्य तेनांतरात्मना **य.**, जपेन्नारायणायेति मंत्रमोंकारसंजपे **र.**, नास्ति **श.**

११४ धर्मेण काल..**य.**, **ल.**, विश्वेनोक्तेन धर्मेण काल..**व.**

११५ जप्त्वा समाधि..**य.**, वसिष्ठउवाच। यद्वा समा ..**ल.**, **श.**

११६ समाधिः समता प्रोक्ता सर्वावस्थासु सर्वदा।।६०।। एतावत्पर्यन्तमेव **ल.** मातृका।

११७ नास्ति **श.**, **योया.** १०.२

११८ नास्ति **व.**, ज्ञानादिभि **श.**

११९ विवार्जिता **य.**, नास्ति **व.**, विवर्जितः **श.**

१२० भावयेत् सुसमाधिना **य.**, भावं भावविनिर्मुक्तं **र.**, विनिर्मुक्ता... समाहितः **व.**, विनिर्मुक्तो **श.**

१२१ वत्स विशेषेण **य.**, जिद्भवेत् **र.**, सोहंवत्सविशे..**व.**, विद्भवेत्। एवं ध्यानादिकं कृत्वा मृत्युजिद्योगविद्भवेत् **श.**

✷ इति वशिष्टसंहितायां योगकाण्डे अष्टमोध्यायः।।८।। इतिश्रीवशिष्टसंहिता समाप्तं।। संवत् १८९९ कार्तिक शु. १५ गुरुवासरेणल्लिखीकृतायां।। **य.** इति वासिष्ठे योगकांडे ज्ञानसमुच्चये अष्टमोध्यायः।। शिवमस्तु।। संवत् १४६३ वर्षे पौषमासे शुक्लपक्षे १ प्रतिपत्तिथौ शनिदिने लिखितमिदं परोपकार्थम्। **र.**, इति वसि.. ध्यायः।।ओं।। **व.**, इति वसिष्ठयोगकांडे अष्टमोध्यायः समाप्तः।। संवत् १७०१ श्रावण शुद्ध १३ भौमे लिखितमिदं पुस्तकं **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - ३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - ३

अन्य ग्रन्थों में वसिष्ठसंहिता के उद्धरण

वसिष्ठसंहितायाम् :
त्रयोदशाङ्गुलं त्यक्त्वा वेदिकायाश्चतुर्दिशम्।
कण्डानि स्नागमोक्तानि विदध्याद्विधिवद् बुधः।। **राघव** १७४
वसिष्ठसंहितायाम् :
अनेकदोषदं कुण्डमत्र न्यूनाधिकं यदि।
तस्मात् सम्यक् परीक्ष्येदं कर्तव्यं शुभमिच्छता।। **राघव** २१६
वसिष्ठसंहितायाम् :
इषुमात्रं स्थण्डिलं वा संक्षिप्ते होमकर्मणि ।। **राघव** २१७
वसिष्ठसंहितायाम् :
सुषिरं कण्ठदेशे स्याद् विशेद् यावत् कनीयसा।। **राघव** २१८
वशिष्ठसंहितायाम् :
कृत्वादौ वैदिकं स्नानं ततस्तान्त्रिकमाचरेत्।
इत्यादिना च मन्त्रस्नानादिविधिरुक्तः।
तत्र मन्त्रस्नानं द्विविधम् आन्तरं बाह्यञ्च।
तत्र वैष्णवस्नानमान्तरमुक्तं वसिष्ठसंहितायाम्। -
अनन्तादित्यसंकाशं वासुदेवं चतुर्भुजम्।
शङ्खचक्रगदापद्ममुकुटं वनमालिनम्।
तत्पादोदकजां धारां निपतन्तीं स्वमूर्द्धनि।
चिन्तयेद् ब्रह्मरन्ध्रेण प्रविशन्तीं स्वकां तनुम्।
तया संक्षालयेत् सर्वमन्तर्देह (मेतद्देह) गतं मलम्।
तत्क्षणाद्विरजा मन्त्री जायते स्फटिकोपमः।
इदं स्नानं वरं मन्त्रात् सहस्त्रम (स्राद) धिकं स्मृतम्। राघव. २३३
वसिष्ठः
खस्थितं पुण्डरीकाक्षं मन्त्रमूर्तिं प्रभुं स्मरेत्।
CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection
तत्पादोकधारां च निपतन्तीं स्वमूर्द्धनि।

चिन्त–स्विकां तनूम्।
तया संक्षालयेत् सर्वमन्तर्देहगतं मलम्
इदं स्नानवरं मन्त्रस्नानाच्छतगुणं स्मृतम्। **गदाधरपद्धतिः** (७४-७५)
शिष्टाः
खस्थितं–स्वकां तनुम्। तथा संक्षा-स्मृतम्। **नित्याचारप्रदीपः** (१.३२७)-
वशिष्ठसंहितायाम् :
विन्यस्याङ्गे षडङ्गनि प्राणायामपुरःसरम्।
श्रीसूर्यमण्डलात्तीर्थमाकृष्याऽङ्कुशमुद्रया।।
वमित्यनेन चाप्लाव्य कवचेनावगुण्ठयेत्।
संरक्ष्यास्त्रेण मूलेन मन्त्रयेद्रुद्र (द्रस) संख्यया।।
निमज्य तस्मिन् श्रीदेवं ध्यायेच्छक्त्या जपन् मनुम्।
उन्मज्य कुम्भमुद्रां च बद्धा स्यायाद् द्विषट् ततः।
शालग्रामशिलातोयं तुलसीगन्धमिश्रितम्।
कृत्वा शङ्खे भ्रामयंस्त्रिः प्रक्षिपेन्निजमूर्द्धनि।
शालग्रामशिलातोयमपीत्वा यस्तु मस्तके।
प्रक्षेपणं प्रकुर्वीत ब्रह्महा स निगद्यते।
विष्णुपादोदकात् पूर्वं विप्रपादोदकं पिबेत्
विरुद्धमाचरन् मोहादात्महा स निगद्यते।
पृथिव्यां यानि तीर्थानि तानि तीर्थानि सागरे।
ससागराणि तीर्थानि पादे विप्रस्य दक्षिणे।
ततः संक्षेपतो देवान् मनुष्यांस्तर्पयेत् पितृन्।
पीडयित्वाम्बरं चोरू प्रक्षाल्याचम्य यत्नतः।
धारयेद्वाससी शुद्धे परिधानोत्तरीयके।
अच्छिन्ने सुदृशे शुक्ले आचमेत् पीठसंस्थितः।
ऊर्द्धपुण्ड्रं त्रिपुण्ड्रं वा कृत्वा संध्यां समाचरेत्। **राघव** २३५
वशिष्ठसंहितायाम् :
अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे।
पार्ष्णिघातत्रयं कृत्वा मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्।
भूतसंघान् समुत्सार्य संविशेदासने बुधः। **राघव.** २४४
सोहं मन्त्रेण तामाद्यां (मण्वीं) नादान्ते सिद्धभाविताम्।
ध्यात्वैवं ब्रह्मरन्ध्राच्च हृदि जीवकलां न्यसेत्। **राघव.** २५१
हृदि हस्तं सन्निधाय प्राणस्थापनमाचरेत्।
ततो जन्मादिकद्व्यष्टक्रियासंस्कारसिद्धये।
षोडशप्रणवावृत्तीः कृत्वा शक्तिं परां स्मरेत्। **राघव** २५४
प्रमथ्य विधिनैवाग्निमाहिताग्नेर्गृहादपि।
आनीय चादधीतात्र। **राघव.** ३१५
अन्यत्रापि-गुरुराहू च वायव्ये। **राघव.** ३९७-९८
वसिष्ठसंहितायामपि :
प्रसिद्धा ग्राह्याः षट्कर्मादिकसाधने।
यस्मिन् कस्मिन् ऋतौ कार्यं मन्त्राणां वाथ साधनम्। **राघव.** ८५०
तथाचोक्तं वसिष्ठेन :
नासिकाकृष्ट उच्छ्वासो ध्मातः पूरक उच्यते।
कुम्भको निश्चलश्वासो मुच्यमानस्तु रेचकः।।
नीलोत्पलदलश्यामं नाभिमध्ये प्रतिष्ठितम्।
चतुर्भुजं महात्मानं पूरकेण तु चिन्तयेत्।।
कुम्भकेन हृदिस्थाने ध्यायेत्तु कमलासनम्
ब्रह्माणं रक्तगौरांगं चतुर्वक्त्रं प्रजापतिम्।।
रेचकेनेश्वरं ध्यायेल्ललाटस्थं महेश्वरम्।
शुद्धस्फटिकसंकाशं निर्मलं पापनाशनम्।।

- हेमाद्रौ श्राद्धकल्पे अ. १० (पृ. ८९१-९२)

(एते श्लोकाश्चत्वारः **बृया** (८.२२-२५) मध्ये किञ्चित् पाठभेद सहिताः समुपलभ्यन्ते)

तदुक्तं वसिष्ठसंहितायाम् :
आसनेन रुजो हन्ति प्राणायामेन पातकम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विकारं मानसं योगी प्रत्याहारेण सर्वदा।
धारणाभिर्मनोधैर्यं ज्ञानादैश्वर्यमुत्तमम्।
समाधौ मोक्षमाप्नोति त्यक्तकर्मशुभाशुभः।। **राघव.** पृ.८९७
वसिष्ठसंहितायां पञ्च धारणा उक्ताः -
भूतानां मानसं चैकं धारणा च पृथक् पृथक्।
मनसो निश्चलत्वे तु धारणा च विधीयते।।
या पृथ्वी हरितालहेमरुचिरा तत्त्वं कलालान्वितम्।
(पीता लकारान्विता **गो.**, यत्तत्वं हरितालदेशरचितं भौमंलकारान्वितं **घे.**)
संयुक्ता कमलासनेन च चतुष्कोणा हृदिस्थायिनी।
(वेदास्त्रं कमलासनेन सहितं कृत्वा हृदिस्थायिनम्। **घे.**)
प्राणांस्तत्र विलीय पञ्च **घटिका** चित्तान्वितं धारये -
(प्राणंस्तत्र विनीय प...काश्चिन्त **गो.**, विनीय-घटिकां चित्तान्वितो धारयेत् **घे.**)
देषा स्तम्भकरी सदा क्षितिपरा ख्याता क्षमाधारणा।।
(क्षितिजयं कुर्यात्भुवोधारणा **गो.** देषास्तम्भकरी सदा क्षितिजयं कुर्यादधोधारणा **घे.**)
अर्धेन्दुप्रतिमं च कुन्दधवलं **कण्ठे च तत्त्वान्वितं**
(कण्ठेंबुतत्तवंस्थितं **गो.**, शङ्खेन्दुप्रति–तत्त्वं किलालं शुभं **घे.**)
तत्पीयूषवकारबीजसहितं युक्तं सदा विष्णुना।
(यत्पीयू - **गो**।)
प्राणांस्तत्र **विलीय** पञ्च **घटिका** चित्तान्वितं धारये -
(विनीय-घटिकाश्चि गो. विनीय-घटिकां चित्तान्वितो **घे.**)
देषा दुःसहकालकूटजरणा स्याद् वारुणी धारणा।।
(दुर्वह-वारिणी **गो.**, तेषांदुःसहतापपापहरिणीस्यादांभसी धारणा **घे.**)
तत्त्वस्थं शिवमिन्द्रगोपसदृशं तत्र त्रिकोणेऽनलं
(यत्तालस्थितमिंद्र–तत्त्वं त्रिकोणोज्ज्वलं **गो.**, यन्नाभिस्थितमिंद्रगोपसदृशं बीजं त्रिकोणान्वितं **घे.**)
तेजोऽनेकमयं प्रवालरुचिरं रुद्रेण तत्संगतम्।
(तेजोरेफमयं –यत्संगतम् **गो.**, तत्वं तेजमयं प्रदीप्तमरुणं रुद्रेण यत्सिद्धिदम् **घे.**)
प्राणांस्तत्र **विलीय पञ्च घटिका** चित्तान्वितं धारये -
CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection
(णं - विनीय-घटिकाश्चित्ता **गो.**, विनीय-घटिकां -धारयेत् **घे.**)

देषा **वह्निसमं वपुर्विदधती** वैश्वानरी धारणा।।

(वह्निजयं सदा विदधते वैश्वा-**गो**., देषा कालगभीरभीतिहरिणी वै-**घे**.)

यन्मूलं कमलं प्रपञ्चसंहितं दृष्टं भ्रुवोरन्तरे

(यद्भिन्नांजनपुंजसान्निभमिदं तत्त्वं भ्रु-**गो**., यद्भिन्नाञ्जनपुञ्जसन्निर्भामदं धूम्रावभासं परं **घे**.)

तद्वत्सत्वमयं यकारसहितं तत्रेश्वरो देवता।

(वृत्तं वायुमयं य-यत्रेश्वरो **गो**., तत्त्वंसत्व-यत्रेश्वरो **घे**.)

प्राणांस्तत्र विलीय पञ्च घटिका चित्तान्वितं धारये -

(प्राणं तत्र विनीय-काश्चित्ता-**गो**., विनीय-घटिकां-न्वितां **घे**.)

देषा खे गमनं करोति नियतं वायोः सदा धारणा।।

करोति यमिनां स्याद्वायवी धारणा **गो**., करोति यमिनां स्याद्वायवी धारणा **घे**.)

आकाशं सुविशुद्धवारिसदृशं यद्ब्रह्मरन्ध्रस्थितं

(ब्रह्मरन्ध्रे **गो**., यत्सिंधौ वरशुद्ध-शं व्योमं परं भासितं **घे**.)

तन्नाथेन सदाशिवेन सहितं **युक्तं हकाराक्षरैः**।

(तत्राद्येन-शांतं हकाराक्षरम् **गो**., तत्त्वं देवसदाशिवेन-बीजं हकारान्वितम् **घे**.)

प्राणांस्तत्र विलीय पञ्च घटिका चित्तान्वितं धारये -

(प्राणं त विनीय-टिकाश्चित्ता **गो**., विनीय-घटिकां **घे**.)

देषा मोक्षकपाटभेदनपटुः प्रोक्ता नभोधारणा।।

(कवाटपाटनपटुः **गो**., भेदनकरी कुर्यान्नभोधारणा **घे**.)

(राघव पृ. ९००-९०१, **गो**., ६९-७३, घे. ३.७०,७२,७५,७७,८०)

कर्मणां साधकाः सर्वा धारणाः पञ्च दुर्लभाः।

तासां विज्ञानतो योगी सर्वपापैः प्रमुच्यते। राघव.९०१

(कर्मणा मनसा वाचा धारणाः -विधाय सततं योगी **गो**., ७५)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - ४

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सप्तमोऽध्यायः

वसिष्ठ उवाच[१]

अयनेऽपि परीक्षेत शुभाशुभफलानि च[२]**।**
मृत्युकालश्च सर्वेषामात्मनश्च समाहितः[३]**।।१।।**

यदि स्यादयनं पुत्र वायव्यांशेषु राशिषु[४]**।**
दुर्भिक्षं विग्रहं राज्ञां विद्याद्राष्ट्रभयं तथा[५]**।।२।।**

आग्नेयांशेऽयनं स्याच्चेद्वह्निना भयमादिशेत्[६]**।**
दुर्भिक्षं वृष्टिहानिश्च बहुबालविनाशनम्[७]**।।३।।**

पार्थिवेत्वयने जाते न बालमरणं तथा[८]**।**
सुभिक्षं क्षेमवद्राष्ट्रमरोगं निर्भयं भवेत्[९]**।।४।।**

वारुणांशेऽयने प्राप्ते प्रभूतोदकमेदिनी[१०]**।**
सधर्मा सप्रजाऽरोगा निर्दुःखा च भविष्यति[११]**।।५।।**

---

१ वसिष्ठ उवाच **य. श.**, श्रीवसिष्ठ उवाच **ल.**

२ अयने तु...फलानि तु **य., ल.**, फलानि तु **व.**, तु परीक्षेत्तु...लानितु **श.**

३ **य., श.**, मृत्युकालं च **र.**, मात्मनः क्षणमाहितः **व.**

५ **श.**, दुर्भिक्षं वृष्टिहानिश्च वसुधान्यविनाशनं **य.**, विंद्याद्राजभयं **र.**, राष्ट्रे विद्याराष्ट्रभयं तथा **ल.**, राज्ये विद्याद्राष्ट्र **व.**

६ आग्नेय्यांशे चायनंस्याद्वह्नीनां भय **य.**, **व.**, चायनंस्या **ल.**

७ वसुधान्यविना...**य.**, दुर्भिक्षं विग्रहं राष्ट्रे विद्या...**ल.**, बहुधान्यविना **व.**, राज्यहानिश्च **श.**

८ ष्वयने याते यदि वा गमनं तथा **य.**, नवमे मरणं तथा **व.**, नराणां मरणं भवेत् **श.**

९ मारोग्यं निर्भयं भवेत् **य.**, मरोगी निर्भयो भवेत् **र.**, न रोगं निर्भयं तथा **ल.**, मरोगं निर्भयं **व.**, क्षेमराज्यं च नीरोगं गर्भयं **श**

१० प्रभूतो यदि मेदिनी

११ सधर्मा च निरोगा च निर्दुःखा च भवेदिति **य.**, सर्वधर्मप्रजा रोगान्निर्दुःखा च भविष्यति **ल.**, सधर्मा च निरोगा च **व.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आकाशे सर्वनाशः स्यादयनं यदि जायते[१२]।
देशभ्रंशस्तथा राज्ञां गजाश्वादेश्च नाशनम्[१३]।।६।।

मध्यमौ सौरभागे तु अंशौ वारुणपार्थिवौ[१४]।
तयोः पापग्रहांशौ यौ तावेतावधमौ विदुः[१५]।।७।।

वामे वारुणभूमांशौ शुभांशावुत्तमोत्तमौ[१६]।
व्योमांशस्तूभयत्रापि दुःखदस्त्वयने भवेत्[१७]।।८।।

वत्सरस्यादिकाले तु संजाते चोत्तरायणे[१८]।
अनन्तरं वहेद्वायुर्दक्षिणे पञ्च नाडिकाः[१९]।।९।।

ततः सव्येऽपि नाडीनां पञ्च वायुर्वहेद्यदि[२०]।
शतायुः स तु विज्ञेयः स्वल्पायुश्चेत्तदन्यथा[२१]।।१०।।

---

१२ जायते यदि **य.**, यनो यदि **व.**

१३ गजाश्वादिविनाशनं **य.**, स्तदा राज्ञां **व.**

१४ मध्यमे सौरभागे च अंसौ वारुणवार्थिवौ **य.**, भागे च दृश्ये वारणपार्थिवौ **ल.**, मध्यमे सौर भागे चेदंशौ वारुण **व.**, **श.**

१५ तयौः पापग्रहांसौ यौ तौ च राश्युत्तमौ विदुः **य.**, तावत्तावध...**र.**, भवेतामुत्तमौ विदुः **ल.**, तयोः पूर्वौ ग्रहांशौ यौ भवेतामुत्तमौ विदुः **व.**, तावेतावुत्तमौ विदुः **श.**

१६ भौमांसे शुभाशीरूत्तमोत्तमौ **य.**, भौमांशे शुभां...ल., **व.**, वारुण-भौमांशौ शुभाशावुत्तमौ विदुः **श.**

१७ व्योमांशस्तु तत्रापि दुःखदस्त्वनयोर्भवेत् **य.**, स्त्वयनो भवेत् **ल.**, व्योमांशभृतौ यत्रापि दुःसहौ **व.**, त्रापि दुःसहः कलहो भवेत् **श.**

१८ संयाते **य.**, कालेषु **ल.**, तूत्तरायमे **श.**

१९ **य.**, **श.**, भवेद्वायु-नाडिका **र.**, क्षिणं पंचनाडिका **ल.**, दक्षिणे ग्रहनाडिकः **व.**

२० **य.**, **ल.**, **श.**, ततः सव्येतरा नाडी **र.**, ततः षष्ठेपि नाडीनां **व.**

२१ **ल.**, शतायु सतु विज्ञेयो नाल्पायुश्चापि कर्हिचित् **य.**, स्वल्पायुस्तदनोन्यथा **र.**, अल्पायुश्चेत्तदन्यथा **व.**, स्वल्पायुश्च तदन्यथा **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

घटिकाः षड् वहेद्यस्य तस्याशीतिरितीरितम्[२२] ।
घटिकाः सप्त यस्य स्युः षष्ट्यायुः स तु विन्दति[२३] ।।११।।

घटिकाष्टौ चरेद्वायुः पञ्चाशत्तस्य निर्दिशेत्[२४] ।
घटिकानां नव चरेत् त्रयस्त्रिंशत्समा विधिः[२५] ।।१२।।

घटी दश वहेद्यस्य अष्टाविंशत् समाः स्मृताः[२६] ।
दिवसार्ध वहेद्वायुः पञ्चविंशतिवत्सरान्[२७] ।।१३।।

दिनं यस्य वहेद्वामे द्वादशाब्दं स जीवति[२८] ।
अहोरात्रं वहेद्यस्य दशाब्दं तस्य जीवितम्[२९] ।।१४।।

दिनद्वयं वहेद्वायुरष्टौ वर्षाणि जीवति[३०] ।
दिनत्रयं चरेद्वायुः षड्वर्षाणि स जीवति[३१] ।।१५।।

---

२२ घटिकाः...सीतिरितीरिता **य.**, घटिः काः ष..**र.**, घटिषट्कं वहेद्यस्य **ल.**

२३ **व.**, **श.**, नास्ति **य.**, यस्य स्याद्विषष्ट्यायुः स विंदति **र.**, स तु जीवति **ल.**

२४ नास्ति **य.**, वहेद्वामे पंचाशत्तस्य निर्दिशेत् **ल.**, **व.**, ष्टौ वहेद्यस्य **श.**

२५ घटिनवहेद्वामे पंचदशसमाः स्मृताः **य.**, घटिनववहेद्यस्य तस्य त्रिंशत्समावधि **श.**

२६ **व.**, नास्ति **य.**, नाडिकानां दश वहेदष्टविंशत् **र.**, घटिका दशवहेद्यस्य तस्याष्टाविंशतिः **ल.**, घटिका दश..समा मताः **श.**

२७ नास्ति **य.**, वहेद्वामे पञ्चविंशतिवत्सराः **ल.**, वहेद्वामे..वत्सरः **व.**, दिनस्यार्धं वहेद्वामे पंचविंश **श.**

२८ **य.**, **व.**, **श.**, दिनं यदि चरेद्वायुर्द्वाद..**र.**, दिनं यस्य वहेद्वामे द्वादशाहं स जीवति **ल.**

२९ **ल.**, नास्ति **य.**, वहेद्वायुः **र.**, वहेद्वामे षड्वर्षाणि स जीवति **व.**, वहेद्वायुरष्टौ वर्षाणि जीवति **श.**

३० नास्ति **व.**, **श.**

३१ षड्वर्षाणि जीवति **य.**, स षड्वर्षाणि जीवति **ल.**, नास्ति **व.**, त्रयं वहेद्वायुः **श.**

UGC. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चतुर्दिनं तु यस्य स्याच्चतुरब्दं स जीवति[३२]।
पञ्चरात्रं वहेद्वायुस्तस्यायुर्वत्सरत्रयम्[३३]।।१६।।

दशरात्रं वहेद्वायुर्द्विवर्षान्मरणं भवेत्[३४]।
वहेत् पञ्चदशाहानि तस्यायुर्वत्सरं भवेत्।.१७।।

दिनानां विंशतिह्यायुः षण्मासांश्च स विन्दति[३५]।
पञ्चविंशतिरह्नां च त्रिमासायुः स विन्दति[३६]।।१८।।

षड्विंशतिदिनं यस्य द्विमासान्मरणं भवेत्[३७]।
सप्तविंशति चेद्वायुः मासमेकं स जीवति[३८]।।१९।।

अष्टाविंशत्यहानिस्युर्मासार्धं तस्य जीवितम्[३९]।
एकोनत्रिंशदस्मिंश्चेद्दशरात्रं स जीवति[४०]।।२०।।

---

३२ चतुर्दिनं यस्य स्याच्चतुरब्दं संजीवति **य.**, चतुर्वर्षं **ल.**

३३ **ल.**, **व.**, **श.**, वहेत्प्रौस्थौ तस्यायुर्वत्सरत्रयं **य.**, वहेत् सोष्टं द्विवर्षान्मरणं भवेत् **र.**

३४ **श.**, दशरात्रं वहेत् प्रौस्थं द्विवर्षाणि मरणं भवेत् **य.**, नास्ति **र.**, द्वायुर्वर्षात्तु मरणं **ल.**, वहेत् पौत्रंद्विव...**व.**

३५ नास्ति **य** पुस्तके, दिनांतं विंशतिर्वामे षण्मासायुः स विंदति **ल.**, दिनानि विंशतिर्वामे षण्मासायुः स जीवति **व.**, **श.**

३६ **व.**, नास्ति **य.**, **ल.**, रह्नांनि त्रि...**र.**, रह्नां चेत् त्रिमासायुः सजीवति **श.**

३७ **ल.**, **व.**, **श.**, नास्ति **य.**, षड्विति रहान्यस्मिन् **र.**

३८ चेद्वामे **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**

३९ अष्टाविंशति रात्राणि मासार्धं...**य.**, - वामांशे मासार्धं **ल.**, - तिरह्नां च मासार्धं **व.**, - ति वहेद्यस्य मासार्धं तस्य जीवनं **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

४० एकोनविंशदह्नां च दशरात्रं स जीवति **य.**, त्रिशदह्नश्चेद्द..**व.**, त्रिंशदह्नं चे...**श.**

त्रिंशद्दिनानि चेद्वायुः पञ्चरात्रं स जीवति[४१]।
एकत्रिंशद्वहेद्यस्य त्रिरात्रान्मरणं भवेत्[४२]।।२१।।

द्वात्रिंशच्च वहेद्यस्य तस्यायुः स्याद् द्व्यहान्तिकम्[४३]।
एकाहान्मरणं तस्य त्रयस्त्रिंशद्वहेद्यदि।।२२।।

आरभ्यैवायनाद्वयोश्चारादुक्तमिदं फलम्[४४]।
आरभ्यायनकालं तु विचरेदेव दक्षिणे[४५]।।२३।।

यथोसर्वसंक्रान्तिमतिक्रम्य दिवानिशम्[४६]।
वायुश्चरति यस्यैवं क्रूरकर्मादिपीडितः[४७]।।२४।।

म्रियते वत्सरादर्वागितिशास्त्रविदो विदुः[४८]।
ऋतावृतौ परीक्षेत वायोश्चरितमात्मनः[४९]।।२५।।

मृत्युकालोऽपितेनैव ज्ञातव्यो योगवित्तमैः[५०]।
माघमासस्य संक्रान्तिमारभ्य दिनपञ्चकम्।।२६।।

---

४१ चेद्वामो **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**

४२ **य.**, **ल.**, **श.**, द्वहेदस्मिन् **र.**, द्विरात्रान्म...**व.**

४३ स्याद्द्विहांतिक **य.**, द्वात्रिंशद्वहे...युद्वर्याह्निकं भवेत् **र.**, द्वात्रिंशतं वहे..**ल.**, **व.**

४४ भ्यैकायनं वायो...**य.**, द्वायुश्चारादुक्तं फलं त्विदं **र.**, आरभ्येतः पर वायोश्चा...फलं त्विदं **ल.**, आरभ्य तंत्परं वायोश्चाराद्वक्तुं फलं त्विदं **व.**, आरभ्य चायनं वायोश्चारे उक्तफलं **श.**

४५ **ल.**, **व.**, विचरेदेव दक्षिणं **य.**, विषुवे चैव दक्षिणे **र.**, एवमेव तु दक्षिणे **श.**

४६ **व.**, सव्यसंक्रांति **य.**, **ल.**, **श.**, यथोक्तः सव्यं **र.**

४७ **ल.**, **व.**, यस्यैव क्रोधरागादिपीडितः **य.**, यश्चैतत्क्रूररोगादिपीडनं **र.**, तस्यैवं **श.**

४८ बत्सरादूर्ध्वमितिशा...**य.**, दूर्ध्वादितिशा..**व.**

४९ श्चरिरितिमात्मनः **य.**, श्चरणमात्मनः **श.**

५० **ल.**, मासवित्तमैः **य.**, कालस्य तेनापि **र.**, तेनैव ज्ञायते **व.**, कालं च तेनापि ज्ञातव्यं **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वायुर्यस्य वहेद्याम्ये त्रिवर्षं तस्य जीवितम्[५१]।
चैत्रमासस्य संक्रांतिमारभ्य दिनपञ्चकम्[५२]।।२७।।

वायुर्यस्य वहेद्याम्ये षड्वर्षं तस्य जीवितम्[५३]।
ज्येष्ठ मासस्य संक्रान्तिमारभ्य दिनपञ्चकम्[५४]।।२८।।

वायुर्यस्य वहेद्याम्ये तस्यायुर्नववार्षिकम्[५५]।
श्रावणस्य तु संक्रान्तिमारभ्य दिनपञ्चकम्[५६]।।२९।।

वायुर्यस्य वहेद्याम्ये द्वादशाब्दं स जीवति[५७]।
आश्विनस्य तु संक्रान्तिमारभ्य दिनपञ्चकम्[५८]।।३०।।

वायुर्यस्य वहेद्याम्ये तस्य पञ्चदशाब्दिकम्[५९]।
मार्गशीर्षस्य संक्रान्तिमारभ्य दिनपञ्चकम्[६०]।।३१।।

वायुर्यस्य वहेद्याम्ये सोष्टादशसमावधिः[६१]।
एवमेव वहेद्यस्य सव्यभागेपि मारुतः[६२]।।३२।।

---

५१ षडब्दं तस्य जीवितं **य.**, **ल.**, वहेद्वामे तस्यायुः स्यात् त्रिवार्षिकं **श.**

५२ नास्ति **य.**, **ल.**

५३ नास्ति **य.**, **ल.**, वहेद्वामे **श.**, एतदर्धानन्तरम् मेषराशेस्तु संक्रान्तिमारभ्य दिनपञ्चकं। वायुर्यस्य वहेद्वामे षडब्दं तस्य जीवितं।। इत्यधिकं **व.**

५४ नास्ति **य.**, ज्येष्ठे मासम्य संक्रांतिमारभ्य नियम व्रतः **ल.**

५५ नास्ति **य.**, वहेद्वामे **श.**

५६ नास्ति **य.**, णस्य च **व.**

५७ नास्ति **य.**, वहेद्वामे **श.**

५८ आश्विनस्यापि चैवं च वायुः पंचदशाब्दिकं **य.**, स्य च **श.**

५९ नास्ति **य.**, पंचदशादिकं **ल.**, वहेद्वामे **व.**, **श.**

६० मार्गशीर्षस्य चैवं चेत् षडब्दं तस्य जीवितं **य.**

६१ नास्ति **य.**, समावधि **ल.**, वहेद्वामे अष्टादशसमा..**श.**, शमाविधिः **र.**,

६२ मारुते **य.**, एक एव वहेद्यस्य वामभागेपि मारुतः **ल.**, एकत्रयं वहेद्यस्य सव्यभागे च मारुतः **व.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नानाविधं भयं तस्य मृत्योरन्यत् प्रकीर्तितम्[६३]।
विषुवत्कालमेषादौ संजाते तदनन्तरम्[६४] ।।३३।।

घटिकैका वहेद्वायुर्दक्षिणे व्योमदेशतः[६५]।
ततः संक्रमते सव्ये सर्वेषां च स्वभावतः[६६] ।।३४।।

विपर्यासाद्विपत्तिःस्यात् सर्वेषां प्राणिनामपि[६७]।
तस्मिन् विषुवकाले तु सव्ये वायव्यदेशतः[६८] ।।३५।।
वायुर्यस्यवहेत्तेन दुर्भिक्षादिर्भविष्यति[६९]।
यस्य कस्य तु मासस्य शुक्लपक्षस्य चादितः[७०] ।।३६।।
परीक्षेत तथा मृत्युं वायुचारवशाद्बुधः[७१] ।।

समुदेति दिनस्यादौ विधौ वायुर्दिनत्रयम्[७२]।
ततो दिनत्रयं सूर्ये ततश्चन्द्रे ततो रवौ[७३] ।।३७।।

---

६३ नानाविधमयं तस्य मृत्योरन्यत्र कीर्तितं **य.**, विधफलं तस्य मृत्योरन्यत्र कीर्तितं **ल.**, फलं तस्य मृत्योरन्यत्र कीर्तनं **व.**, फलं तस्य **श.**

६४ **ल.**, विषुवत्कालमेषादौ संयाते तदनंतरं **य.**, विषकाले तु मेषादौ **र.**, संयाते **व.**, जायते तदनं...**श.**

६५ **य.**, **व.**, वहेद्यस्तु दक्षिणे **र.**, भवेद्वायुर्दक्षिणव्योमदेशतः **ल.**, कैकं वहे...**श.**

६६ संक्रमते वायुः सर्वेषां च सुखावहः **य.**, संक्रम्यते **र.**, संक्रमते वायुः सर्वेषां च स्वभावतः **ल.**, **व.**, शुभावहः **श.**

६७ विपर्यये विपर्यासः सर्वे...**य.**, विपर्ययाद्विपन्नं स्यात् **ल.**, द्विपर्यासः सर्वेषां **व.**, विपर्ययाद्विपत्तिः **श.**

६८ विषुवतः काले सव्ये **य.**

६९ **ल.**, **व.**, वहेत्तस्त न दुर्भिक्षं भवि...**य.**, र्यदि वहेद्यस्य दुर्भि..**र.**, क्षादि भवि.., य़ाम्ये यदि वहेद्वायुर्दुर्भिक्षादि भविष्यति इत्यधिकम् **श.**

७० यस्य कस्यापि **य.**, **व.**, यस्यापि मासस्य **ल.**, वादितः **श.**

७१ परीक्षते तथा **य.**, परिक्षीत तदा मृत्युं वायुचारवशात्ततः **व.**

७२ **व.**, **श.**, संवत्सरदिनस्यादौ **य.**, नास्ति **र.**, समुद्यति **ल.**

७३ **य.**, नास्ति **र.**, ततश्चांद्रे रवौ विधौ **ल.**, चन्द्रे रवौ विधौ **श.**, सूर्ये एवं चक्रे ततो विदुः **व.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कृष्णोप्येवं दिनस्यादौ सूर्ये चन्द्रे तथा रवौ[७४]।
चन्द्रे सूर्ये विजानीयादुदयं मातरिश्वनः[७५]।।३८।।
एतत्त्रयविपर्यासः पक्षत्रितयजन्मनि[७६]।
अर्धाहभागे पञ्चत्वं ततः संकीर्तयेद् बुधः[७७]।।
द्विपक्षेचेन्महीनाशः पक्षे चित्तोपपीडनम्[७८]।
अर्धपक्षे यदि वहेत् कलहादि भविष्यति[७९]।
याम्ये यदि वहेद्वायुर्दिनमेकं सदा तथा[८०]।।
वर्षत्रयात्तदा मृत्युर्द्विदिने वत्सरद्वयात्[८१]।
त्रिदिने वत्सरान्मृत्युर्दशाहे मासतो मृतिः[८२]।।३९।।
मासे त्वेकदिने मृत्युरेवं सोम्य वहेद्यदि[८३]।
रोगश्च धननाशश्च संतापः कोपविग्रहौ[८४]।।४०।।

---

७४ दिनं चंद्रे सूर्येणाह्नि तथा विधौ **य.**, नास्ति **र.**, प्येव दिनस्यादौ सूर्यचंद्रे तथा रवौ **ल.**, सूर्ये मार्गे तथा विधौ **व.**, सूर्येचंद्रस्तथा विधौ **श.**

७५ **ल.**, **व.**, दुभयेमाचरेत् पुनः **य.**, नास्ति **र.**, सूर्येचंद्रे..मातरिस्वनः **श.**

७६ **ल.**, नास्ति **र.**, एतद्यत्रापि पर्यायः पक्षद्वितय जन्मनि **य.**, एतत्त्रयं विपर्यासः पक्षतत्रयजन्मनि **व.**. त्रयविपर्यासात् पक्षत्रितय **श.**

७७ **ल.**, नास्ति **र.**, द्वितीयेभागे पंचत्वं ततः सर्वत्र षड्वयं **य.**, अर्धाहा भागे पंचत्वं ततः संकीर्तये ध्रुवं **व.**, अर्धार्धभागे पंचत्वं **श.**

७८ **व.**, पक्षे चिंतामपीहितं **य.**, विपक्षेचेन्मृतेर्नाशः पक्षे चेद्रोगपीडनं **र.**, चेन्महि नाशः पक्षे च ज्रेग पीडनं **ल.**, चेन्महान्नाशः पक्षे चेद्रोगसंभवः **श.**

७९ भवेद्दुःखं तस्य भविष्यति **य.**, **व.**, भवत्कष्टं तस्य भविष्यति **ल.**, **श.**

८० याम्ये किल वहे..मेकं यदा तदा **य.**, सदा तदा **ल.**, मंदा तदा **व.**, **श.**

८१ वर्षत्रयाद्भवेन्मृत्युर्म्रियाच्च वत्सर..**य.**, त्रयाद्भवेन्मृत्युर्द्विदिने वत्सरद्वयात् **ल.**, त्रयाद्भवेन्मृत्युर्दशाहे मासतो मृतिः **व.**, वर्षं यावद्भवेन्मृत्यु **श.**

८२ माशतो मृतिः **य.**

८३ **ल.**, मासादेकदिने मृत्युरेवं त्रयाद्भवेद्यदि **य.**, मासादेकदिने मृत्यु **एवं** सौम्य भवेद्यदि **र.**, मासात्वेकदिने मृत्युरेवं सौम्ये वहेद्यदि **व.**, **श.**

८४ **ल.**, **व.**, शोकश्च धननाशश्च संतापकोपविग्रहौ **य.**, रागश्च **र.**, मृत्युकालं च रोगं च संतापं शोकविग्रहौ **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चरेदुभयतश्चैवं याम्यवत्फलमुच्यते[८५]।
दिनमर्धं वहेत् सव्ये तदास्यादर्थनाशनम्[८६]।।४१।।

देशान्तरगतिर्याम्ये समचारे महाविपत्[८७]।
वायोश्चारं परीक्षते योगे सावित्रसंज्ञके[८८]।।४२।।

मृत्युकालश्च तेनापि ज्ञातव्यो योगवित्तमैः।
स्थितः सप्तमराशौ तु सवितुर्यदि चन्द्रमाः[८९]।।४३।।

जन्मराशिस्थितस्तत्र सावित्रो योग उच्यते[९०]।
तस्मिन्काले वहेद्वायुरेकत्रार्धदिनं यदि[९१]।।४४।।

चतुर्दशाब्दपर्याप्तौ तस्य मृत्युर्भविष्यति[९२]।
सावित्रयोगमारभ्य यस्यैकत्र दिनं वहेत्[९३]।।४५।।

---

८५ श्चैवं मृत्युस्तस्य न संशयः **य.**, तश्चैव **र.**, याम्येवत्फलमुच्यते **ल.**, याम्येयत्फलमु..**व.**, भवेदुभयतश्चैवं याम्ये यत्फलमुच्यते **श.**

८६ दिवसार्धं भवेत् सव्ये **य.**, दिनद्वयं वहेत् सव्ये तस्य स्यादर्थ..**ल.**, दिनमेकं चरेत् सव्ये तस्यस्यादर्थनाशनं **श.**

८७ **ल.**, **श.**, सव्येभागे महाविपत् **य.**, समयारे महा **र.**, देहान्तरगतिर्याम्ये **व.**

८८ संज्ञकं **य.**, वायोश्चात्र परीक्षेत **व.**

८९ **ल.**, **व.**, स्थिते...राशौ च **य.**, सवितुर्यस्य चंद्रमाः **र.**, राशौ च..**श.**

९० सावित्रं योगमुच्यते **ल.**

९१ यस्मिन् स्थाने चरेद्वायुरेकं चार्धदिनं **य.**, यस्मिन् काले वहेद्वायु..त्रर्धदिनं **र.**, अस्मिन्..द्वायुर्दिनं चार्धदिनं **ल.**, तस्मिन् स्थाने चरेद्वायुरेकं वार्धदिनं **व.**, रेकत्रर्धदिनं **श.**

९२ **ल.**, **व.**, ब्दयुन्याब्दौ **य.**, पर्याप्तो मृत्युस्तस्य भविष्यति **र.**, पर्यायौ तस्य मृत्युर्भविष्यति **श.**

९३ दिवा यस्य वहेद्वामे द्वादशाब्दं स जीवति **य.**, सावित्रं योग.. यस्यैकत्रदिनत्रयं। वहेद्वायुश्च तस्यायुः षड्वर्षांतं प्रकीर्तितं **ल.**, त्रं योग.. यस्यैव दिनत्रयं **व.**, मासाद्य..दिने वहेत् **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स याति द्वादशाब्दान्ते यमस्य सदनं मुने[९४]।
अहोरात्रं वहेद्वायुर्दशाब्दं तस्य जीवितम्[९५]।।४६।।

सावित्रं योगमारभ्य यस्यैकत्र दिनद्वयम्[९६]।
वहेद्वायुश्च तस्यायुरष्टावब्दान्तमुच्यते[९७]।।४७।।

सावित्रं योगमारभ्य यस्यैकत्र दिनत्रयम्।
वहेद्वायुश्च तस्यायुः षड्वर्षान्तं प्रकीर्तितम्[९८]।।
सावित्रयोगमारभ्य यस्यैकत्र चतुर्दिनम्[९९]।
वहेद्वायुश्च तस्यायुश्चतुरब्दान्तमुच्यते[१००]।।४८।।

सावित्रयोगमारभ्य पञ्चाहं त्वेकमार्गतः[१०१]।
यस्य वायुर्वहेत्तस्य त्रिवर्षान्मृत्युरुच्यते[१०२]।।४९।।

योगमेनं समारभ्य षडहान्येकतो वहेत्[१०३]।
चतुर्विंशत्यहर्न्यूनं त्रिवर्षं तस्य जीवितम्[१०४]।।५०।।

---

९४ **श.**, नास्ति **य.**, त्मद्यानि द्वादशाब्दानि यमस्य कुरुसत्तमः **र.**, सदने मुने **ल.**

९५ दशौब्दं तस्य जीवितिं **य.**, नास्ति **ल.**

९६ नास्ति **य.**, योगमाश्रित्य यस्यैकत्र दिनं वहेत् **श.**

९७ दिनद्वयं वहेद्वायुरष्टौ वर्षाणि जीवति **य.**, रष्टसाब्दान्तमुच्यते **ल.**, त्रयं वायुश्च तस्यायुरष्टाब्दांतं तदुच्यते **श.**

९८ **य.**, **र.**, **व.**, पुस्तकेषु नात्स्ययं श्लोकः **ल.**, पुस्तकस्थोऽयं पाठः। योगमाश्रित्य **श.**

९९ सावित्रं मासमारभ्य यदि स्याश्चेत्तपोधनः **य.**

१०० राब्दांतमुच्यते **य.**, चतुर्वर्षान्तमुच्यते **ल.**

१०१ सावित्रं मासमारभ्य पंचाहादेकमार्गतः **य.**, पंचमं त्वेकतो द्विज **श.**

१०२ वायुर्भवेत्तस्य वर्षांते मृत्युरिष्यते **ल.**, वहेद्वायुश्च तस्यायुस्त्रिवर्षा..**श.**

१०३ मेवं समारभ्य षट्दिनान्येकतो वहेत् **य.**, **ल.**, **श.**

१०४ **य.**, त्रयाब्दं तस्य **र.**, त्यहोन्यूनं षड्वर्षं तस्य **ल.**, त्यहान्यूनं षड्वर्षं तस्य भो मुने **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

योगमेनं समारभ्य सप्ताहं त्वेकतो वहेत्[१०५]।
द्विसप्ततिदिनैर्न्यूनं त्रिवर्षं तस्य जीवितम्[१०६]।।५१।।

योगमेनं समारभ्य वहेदष्टदिनं तथा[१०७]।
षड्विंशत्यधिकं सार्धं द्विवर्षं तस्य जीवितम्[१०८]।।५२।।

योगमेनं समारभ्य नवाहमेकतो वहेत्[१०९]।
चतुर्मासाधिकं तस्य जीवितं वत्सरद्वयम्[११०]।।५३।।

योगमेनं समारभ्य दशाहमेकतो वहेत्[१११]।
यस्य वायुस्तदा विद्यात् द्विवर्षं तस्य जीवितम्[११२]।।५४।।

एकादशदिनं यस्य समारभ्य वहेद्यदि।
चतुर्विंशत्यहन्यूनं द्विवर्षं तस्य जीवितम्[११३]।।५५।।

---

१०५ योगमेव समा..हात्वेकतो भवेत् **य.**, चेकतो वहेत् **र.**, सप्ताहं त्वेकधा भवेत् **ल.**, सप्ताहं त्वेकतो नयेत् **व.**, योगमेवं **श.**

१०६ दिनन्यूनं **य.**, द्विसप्ततिदिनं नूनं त्रिवर्षं तस्य जीवितं **ल.**, दिनान्युक्तं **व.**, दिनं न्यूनं **श.**

१०७ दिनं यदि **य.**, योग.. भवेदष्टदिनं यदि **ल.**, मेवं समा..दिनं यदि **व.**, नास्ति **श.**

१०८ षड्विंशदधिकं **य.**, नास्ति **श.**

१०९ योगमेव समारभ्य सप्ताहात्वेकतो भवेत् **य.**, योग.. नवाहान्येकतो भवेत् **ल.**, योगमेवं.. नवाहान्येकतो वहेत् **श.**

११० चतुर्विंशाधिकस्तस्य जीवितं वत्सरद्वयं **ल.**

१११ योगमेवं..दशाहात्त्वेकतो भवेत् **य.**, योग.. दशाहंत्वेकतो भवेत् **ल.**, मेवं समा.. दशाहंत्वेकतो वहेत् **व.**, **श.**

११२ **श.**, यस्यायुश्च तदा विंद्याद्विवर्षं तस्य जीवितं **य.**, वद्यात् **र.**, तस्य वायुस्तदा विंद्यात् **ल.**

११३ **य.**, **व.**, त्यहान्यूनं **र.**, त्यहोन्यूनं **ल.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

योगमेनं समारभ्य द्वादशाहं वहेद्यदि[११४]।
द्विसप्ततिदिनैर्न्यूनं द्विवर्षं तस्य जीवितम्[११५]।।५६।।

योगमेनं समारभ्य त्रयोदशदिनं यदि[११६]।
षड्विंशत्यधिकं सार्धं वत्सरैकं स जीवति[११७]।।५७।।

योगमेनं समारभ्य चतुर्दशदिनं वहेत्[११८]।
चतुर्मासाधिकं वत्स वत्सरं तस्य जीवितम्[११९]।।५८।।

तथा पञ्चदशाहानि समारभ्यैकतो वहेत्[१२०]।
यस्य वयुस्ततस्तस्य वत्सरान्ते मृतिर्भवेत्।।५९।।

योगमेनं समारभ्य षोडशाहं वहेद्यदि[१२१]।
द्वादशाविहीनाब्दपर्याप्तायुस्त्वसौ भवेत्[१२२]।।६०।।

तमारभ्य वहेत्सप्तदशाहं चैकतो यदि[१२३]।
षड्विंशति विहीनाब्दे यमाख्यं याति निश्चयम्[१२४]।६१।।

---

११४ योगमेव समारभ्य द्वादशाहे वहेद्यदि **य.**, द्वादशाहौ..**ल**, नास्ति **व.**

११५ दिनन्यूनं द्विवर्षं **य.**, **ल.**, दिनंन्यूनं **श.**, नास्ति **व.**

११६ योगमेव समारभ्य उभयोर्दशदिनं यदि **य.**, योग.. त्रयोदशदिनं भवेत् **ल.**, योगमेवं **व.**, **श.**,

११७ **व.**, विंशदधिकं **य.**, **र.**, **ल.**

११८ नास्ति **य.**, योगमेवं ..दिनं यदि **व.**, **श.**, **ल.**

११९ नास्ति **य.**, साधिके सार्धं वत्सरैकं स जीवति **ल.**, धिकं साध वत्सरैकं स जीवति **व.**, **श.**

१२० कतो मवेत् **ल.**, तथावस्यैकतो **व.**

१२१ योगमेवं **य.**, **व.**, **श.**, षोडशाहे **ल.**

१२२ हैर्विहीनाब्दपर्याप्तायुरसौ **य.**, विहीनाब्दपर्यंतायुरसौ **ल.**, **श.**, विहीनेब्देपर्याप्तायुरसौ **व.**

१२३ सप्तदशाहात्त्वेकमार्गतः **य.**, समारभ्य..दशाहं चेकतोयदि **र.**, हं त्वेक मार्गतः **ल.**, **व.** चैक मार्गतः **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१२४ **य.**, शद्दिनहीनाब्दे..यमास्यं..निश्चितं **र.**, **ल.**, हीनेब्दे **व.**

तमारभ्य वहेद्वायुरष्टादशदिनं यदि[१२५]।
द्विसप्ततिदिनन्यूने वत्सरान्ते मृतिर्भवेत्[१२६]।।६२।।
ऊनविंशदिनं यस्य सप्तमासाद्भवेन्मृतिः[१२७]।
दिनानां विंशतिर्यस्य षण्मासायुः प्रकीर्तितम्[१२८]।।

एकविंशदिनं यस्य तमारभ्यैकतो वहेत्[१२९]।
एकादशदिनन्यूने वत्सरार्द्धे मृतिर्भवेत्[१३०]।।
द्वाविंशतिदिनं यस्य तमारभ्यैकतो वहेत्[१३१]।
अष्टादशाहहीनेऽस्मिन् वत्सरार्धे मृतिर्भवेत्[१३२]।।६३।।
त्रयोविंशतिरह्नां तु तमारभ्यैकतो वहेत्[१३३]।

षड्विंशद्दिनहीनेऽस्मिन् वत्सरार्द्धे मृतिर्भवेत्[१३४]।।६४।।
चतुर्विंशतिरह्नां तु तमारभ्यैकतो वहेत्[१३५]।
चतुर्मासान्तमेवास्य जीवितं परिकीर्तितम्[१३६]।।६५।।

---

१२५ तेनारभ्य वहे..**य.**

१२६ **श.**, दिनन्यूनंवत्स..**य.**, **ष.**, दिनैर्हीनैर्वत्स..**र.**, दिनंन्यूनं **ल.**

१२७ **य.**, नास्ति **र.**, ऊनविंशति दिनं यस्य सप्तमासं स जीवति **ल.**, ऊनविंशति दिनं..मासान्तं तस्य जीवितं **व.**, तमारभ्य वहे द्वायुरूनविंशतिवासरं। चतुःपंचाशदधिकं वत्सरांतं स जीवति ।। **श.**

१२८ **ल.**, **व.**, नास्ति **र.**, षण्मासायुः प्रकीर्तिते **य.**, नास्ति **श.**

१२९ **य.**, नास्ति **र.**, एकविंशद्दिनं यस्य **ल.**, एकविंशति दिनं यस्य तमारभ्यैकतो वहेत् **व.**, तथैकत्र वहेद्वायुर्विंशतिं चैकविंशति। अष्टावहं शतं वायुश्चतुःसप्ततिसंहितं।। **श.**

१३० **य.**, नास्ति **र.**, **ल.**, **श.**, अष्टादशदिनान्यूने वत्सरार्द्धे मृतिर्भवेत् **व.**

१३१ नास्ति **ल.**, **व.**

१३२ नास्ति **य.**, **ल.**, **व.**

१३३ नास्ति **य.**, त्रयोविंशतिरह्नां तु तमा..**ल.**, शतिमह्नां तु **श.**

१३४ नास्ति **य.**, षट्त्रिंशद्दिनन्यूनेनवत्सरार्धे स जीवति **ल.**, विंशतिदिनन्यूने वत्स..**व.**, षड्विंशदिवसान्यूने वत्सरार्धे **श.**

१३५ चतुर्विंशतिर..**ल.**, तिमह्नांतु, नास्ति **य.**

१३६ जीवनं तु प्रकीर्तितं **य.**, मेवंस्याज्जीवितं तु ततो भवेत् **ल.**, मेवास्य जीवितान्तं ततो भवेत् **व.**, मेवास्य जीवनं तु ततो भवेत् **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पञ्चविंशतिरह्नां तु तमारभ्यैकतो वहेत्[१३७]।
त्रिमासान्मरणं तस्य विद्वद्‌भिः परिकीर्तितम्।।६६।।
षड्विंशतिदिनं यस्य वहेदेकत्र मारुतः[१३८]।
द्विमासान्मरणं तस्य विद्वद्‌भिः परिकीर्तितम्।।६७।।
सप्तविंशतिरह्नां तु वहेदेकत्र मारुतः[१३९]।
मासान्ते मरणं तस्य विद्वद्‌भिः परिकीर्तितम्।।६८।।
अष्टाविंशतिरह्नां तु वहेदेकत्र मारुतः[१४०]।
पञ्चविंशद्दिनस्यान्ते मरणं परिकीर्तितम्[१४१]।।
ऊनत्रिंशद्दिनं यस्य वहेदेकत्र मारुतः[१४२]।
दशाहान्मरणं तस्य विद्वद्‌भिः परिकीर्तितम्[१४३]।।
त्रिंशद्दिनं समारभ्य यदा वहति मारुतः[१४४]।
नाशः प्रपद्यते तस्य पंचाहान्नात्र संशयः[१४५]।।
एकत्रिंशद्दिनं यस्य वहेदेकत्र मारुतः[१४६]।
त्र्यहाद्वै मरणं तस्या विद्वद्‌भिः परिकीर्तितम्[१४७]।।६९।।

---

१३७ रह्नस्तु तमा..य., शतिमह्नां तु श.

१३८ षड्विंशद्दिवसं यस्य श.

१३९ रह्नां यो वहे..य., तिमह्नां तु श.

१४० ल., रह्नानि य., नास्ति र., अष्टाविंशतिन्यूविंशत्रिंशद्वाहानि मासतः। वहेत् पक्षदशाहेतु पंचाहे मरणं क्रमात्।। श.

१४१ ल., द्विनंन्यूनं मरणं ..य., नास्ति र., व., श.

१४२ ल., नास्ति य., र., व., श.

१४३ ल., नास्ति य., र., व., श.

१४४ ल नास्ति य., र., व., श.

१४५ ल., नास्ति य., र., व., श.

१४६ ल., श., नास्ति य., व.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१४७ श., त्र्यहात्तू ल., नास्ति य., व.

द्वात्रिंशद्दिनमेकत्र वहेद्यस्य प्रभञ्जनः[१४८]।
द्व्यहाद्वै मरणं तस्य विद्वद्भिः परिकीर्तितम्[१४९]।।७०।।

त्रयस्त्रिंशद्दिनं यस्य वहेदेकत्र मारुतः[१५०]।
एकाहान्मरणं तस्य विद्वद्भिः परिकीर्तितम्[१५१]।।७१।।

सव्ये यदि वहेदेवमुक्तकालेषु मारुतः[१५२]।
रोगचिन्तावहं तत्तु विद्वद्भिः परिकीर्तितम्[१५३]।।७२।।

पुत्रमित्रविनाशादि दुर्भिक्षादिभयं तथा[१५४]।
क्रूरं राजभयं चेति विद्वद्भिः परिकीर्तितम्[१५५]।।७३।।

---

१४८ द्वित्रिंशद्दिनमे ..ल., द्दिनमेवात्र वहेदेकत्र मारुतः **व**., नास्ति **य**., **श**.

१४९ द्विरात्रान्मरणं तस्य **ल**., **व**., नास्ति **य**., **श**.

१५० अत्र **य**. पुस्तके त्रयस्त्रिंशद्वहेद्यस्य योगमारभ्य मारुतः इति पाठः। ततः षड्विंशतिदिनं तस्य विद्वद्भिः मारुतः। द्विरात्रान्मरं तस्य विद्वद्भिः परिकीर्तितं। त्रयस्त्रिंशद्दिनं यावद्वहेदेकत्र मारुतः, इत्येवं पङ्क्तयो दृश्यन्ते ता लेखकप्रमादविलसितमिति स्पष्टमेव नास्ति **व**.

१५१ एकरात्रान्मृतिस्तस्य विद्वद्भिः परिकीर्तिता **य**., नास्ति **व**.

१५२ यदि भवेदेवं युक्तं कालेषु मारुतः **य**., नास्ति **व**., मुक्तिकालेषु **श**.

१५३ नास्ति **य**., **व**., यत्तु **र**., रसचिंताप्रवादेश्च विद्वद्भिः.. **ल**., क्रूररोगधनहानिर्विद्वद्भिः परिकीर्तितः **श**.

१५४ भयं भवेत् **श**.

१५५ चौरराजभयं चैव विद्वद्भिः **य**., **ल**., चौरराजभयं चैव **व**., नास्ति **श**.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

एकान्ते तु सुखासीनः परीक्षेत्तु शुभाशुभम्[१५६]।
अन्यथा निष्फलं याति विद्वद्भिः परिकीर्तितम्[१५७]।।७४।

✱ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे सप्तमोऽध्यायः।।७।।

---

१५६ एकांतेषु .. परीक्षेत **य**., एकांते सुखमासीनः परीक्षेत **ल**., एकांतेषु सुखा..**व**., शुभासीनः परीक्षेत **श**.

१५७ निष्फलं ज्ञेयं **य**., निष्फलं हीति **ल**., **श**.

✱ **व**., इति श्री वसिष्ठसंहितायां योगशास्त्रे षष्ठोध्यायः।।६।। **य**. इति वासिष्ठे योगकांडे पंचमोध्यायः इति **र** पुस्तके। तत्र पंचमोध्याय इति लेखकप्रमादविलसितमेव। ; ।। सप्तमोऽध्यायः **ल**., इति वाशिष्ठे योगकांडे षष्ठोध्यायः **श**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अष्टमोऽध्यायः

वसिष्ठ उवाच[१] -

बाह्यान्यपि च वक्ष्यामि मृत्योर्बहुविधानि ते[२]।
चिह्नानि तानि सर्वाणि श्रृणु पुत्रक सांप्रतम्[३]।।१।।
संध्ययोरुपरिष्टाद्यः पश्येद् धूमं स्वमूर्धनि[४]।
पञ्चाहं चेद्भवेत्तस्य मरणं वत्सरत्रयात्[५]।।२।।
चतुर्दिनं यदि भवेन्मरणं वत्सरद्वयात्[६]।
त्रिदिनं चेद्भवेत्तस्य मरणं त्वेकवत्सरात्[७]।।३।।
संध्ययोरुभयोर्बाह्योर्दोलनं लक्षयेद्यदि[८]।
ब्रह्मसूत्रविनाशो वा मृत्युस्तस्यापि वत्सरात्[९]।।
श्रोत्रद्वयेऽपि हस्ताभ्यां पिहिते देहवर्तिनः[१०]।
वह्नेर्गर्जितमस्यापि नास्ति चेद्वत्सरान्मृतिः[११]।।४।।

---

१ नास्ति **र.**, वशिष्ठ **य.**, **श..** श्रीवसिष्ठ **ल.**

२ ओं बा..च चिह्नानि मृत्यो..नि च **य.** च चिह्नानि मूलानि विविधानि च **श.**

३ वक्ष्यामि तानि सर्वाणि **य.**, **ल.**, **व.**, **श.**

४ **य.**, **व.**, **श.**, स्वमूर्धजम् **र.**, रुपविष्ठोयः पश्येद्ध मं स्वमूर्धनि **ल.**, वायु. १९.११

५ **ल.**, त्र्यहं चैव भवेन्मृत्युस्तस्य चेद्वत्सरत्रयात् **य.**, मरणंत्वेकवत्सरात् **र.**, पंचाहश्चेद्भवेत्तस्य मरणं **व.**, पंचाहाच्च भवेत्तस्य मरणं **श.**

६ नास्ति **व.**

७ **व.**, दिनानि पंच यस्य स्यात् मरणं **य.**, त्रयाहं चे **र..** त्रिदिने **ल.**, त्रिदिनं तु भवेत्तस्य मरणं वत्सराद्भवेत् **श.**

८ **ल.**, **व.**, भयोर्बाह्वो दोलायनं लक्ष..**य**, नास्ति **र. श.**

९ **य.**, **ल.**, विनाशस्तस्य वत्सरात् **य.**, नास्ति **र.**, **श.**

१० ..पि पिहिते हस्ताभ्यां देहवर्तिनः **व.**, वायु. १९.२८

११ **श.**, वायोर्गर्जित.. **य.**, **व.**, गर्दितमस्यापि **र.**, वायोर्नर्दितम् **ल.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्थानादुभययोर्बाह्वोर्युगपद्विगमो यदि[१२] ।
ब्रह्मसूत्रविनाशो वा नाशस्तस्यापि वत्सरात्[१३] ।।५।।
स्थौल्यं चाकस्मिकं यस्य कार्श्यं चाकस्मिकं भवेत्[१४]।
अतिक्रोधातिभीतिर्वा नाशस्तस्यापि वत्सरात्[१५] ।।६।।
विण्मूत्रक्षुच्छ्रमाश्चैते युगपत् संभवन्ति चेत्[१६]।
तन्मासात्तत्तिथौ वर्षे मृत्युस्तस्यापि विद्यते[१७]।।७।।
गन्धर्वनगरं पश्येत् वृक्षाग्रे यदि कुत्रचित्[१८]।
तस्यापि वत्सरादर्वाक् मरणं प्रतिभाव्यताम्[१९]।।८।।
यदि वाकस्मिकं वापि स्वदेहं कृष्णपिङ्गलम्[२०]।
वत्सरात् परितस्तस्य मरणं प्रतिभाव्यताम्[२१] ।।९।।
गृध्रश्वकाकगोमायुखरोष्ट्रैः सारसैस्तथा[२२] ।
शरीरं भक्षितं यस्य मरणं तस्य वत्सरात्[२३] ।।१०।।

---

१२ गच्छतोरुभयोर्बाह्वोर्युगपन्निर्गमो यदि **य.**, **व.**, द्विगमे यदि **र.**, गच्छतोरुभयोर्वायोर्युगपन्निर्गमो यदि **ल.**, द्विगमो भवेत् **श.**,

१३ मृत्युस्तस्यापि **य.**, ब्रह्मक्षेत्रविनाशो वा विनाशस्तस्य वत्सरात् **ल.**, विनाशोपि विनाशस्तस्य वत्सरात् **व.**

१४ वाकस्मि..वाक..**य.**, **व.**

१५ भीतश्च मृतिस्तस्यापि **य.**, भीतिश्च मृत्युस्तस्यापि **ल.**, अतिहर्षोतिभीतिश्च मृतिस्तस्यापि **व.**, क्रोधोतिभीतिश्च मृतिस्तस्यापि **श.**

१६ **ल.**, विण्मूत्रेक्षुक्षयं चैव भवेद्यदि यदातदा **य.**, क्षुत्त्रिषश्चैते...संभवो यदि **र.**, क्षुद्यदाश्चैते युगपत् **व.**, **श.**

१७ तन्मासे.. स्यापि दृश्यते **य.**, **ल.**, षण्मासे तत्ति..पि दृश्यते **व.**, तस्माद्धि चतुर्थे वर्षे..दृश्यते **श.**

१८ यत्रकुत्रचित् **य.**, **ल.**, **व.**, नगराकारं वृक्षाग्रे यस्तु पश्यति **श.**

१९ मरणं परिभाव्यते **य.**, मरणं परिभाषितं **ल.**, परिभाष्यताम् **व.**, **श.**

२० क्वापि स्वदेहं **य.**, **ल.**, कोपि **व.**, चापि **श.**

२१ वत्सराद्यत्ततस्तस्य मरणं परिभाव्यतं **य.**, परतस्तस्य मरणं परिभाषितं **ल.**

२२ गोमायूसेवितैस्तथा **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२३ **व.**, **श.**, भक्षते यस्य **र.**, नवमदशमश्लोकव्यत्यासः **श.**

स्वप्नेवाऽपि भवेदेभिर्भक्षितं देहमात्मनः[२४]।
तस्यार्वाक् वत्सरान्मृत्युर्भविष्यति न संशयः[२५]।।११।।

रक्षोभूतपिशाचाद्यैः स्पृष्टचैकाब्दमृत्युभाक्[२६]।
अरुन्धतीं ध्रुवं चैव सोमच्छायां महापथम्[२७]।।१२।।

यो न पश्येत् भवेन्मृत्युरर्वागब्दान्न संशयः[२८]।
यदि वा गुह्यमात्मीयं मुक्तलज्जश्च पश्यति[२९]।।१३।।

सोऽपि याति महास्थानमर्वागब्दान्न संशयः[३०]।
आकाशात् पतितं भानुमिन्दुं वा छविवर्जितम्[३१]।।१४।।

यः पश्येत्तस्य मृत्युः स्यादर्वागेवार्धवत्सरात्[३२]।
नक्षत्रमध्ये नालं स्याच्छुष्के यस्योष्ठतालुके[३३]।।१५।।

---

२४ **व.**, **श.**, स्वप्नेनापिभवेदेभिर्भक्षितं देह..**य.**, देतद्मक्ष्यते **र.**, स्वप्नेपि वा भवेदेतैर्भक्षितं देहमात्मनः **ल.**

२५ तस्यार्धवत्सरान्मृत्यु **य.**, **ल.**

२६ स्पृष्टश्चेदब्दमृत्युभाक् **य.**, श्चैवाब्द **ल.**, साष्टैकाब्दैकमृत्युभाक् **श.**

२७ वायु. १९.२, वत्सच्छायां **श.**

२८ पश्येच्च तस्यादर्वागब्दान्मृतिर्ध्रुवं **य.**, भवेद्विद्वान्न संशयः **ल.**, यो न पश्येत् स नो जीवेन्नरः संवत्सरात् परम् वायु. १९.२.

२९ अपि वा **य.**, वस्त्रमात्मीयं ज्वलंतं यस्तु पश्यति **र.**, यदि पश्यति **ल.**, त्यक्तलज्जश्च वक्तियः **व.**, अपिवा वस्त्रमा **श.**

३० यातियमस्थान..**य.**, **व.**, यमस्थानमब्दादर्वाङ् न संशयः **श.**

३१ पतितं सूर्यं बिंदुस्वाभाविवर्जितं **य.**, मिंदुर्वाभाविवर्जितं **ल.**, मिंदुं वापि दिविस्थितं **व.**, भानुंचंद्रं वापि दिविच्युतं **श.**

३२ **ल.**, **व.**, स्वप्नेनापिचयः पश्येन्मृत्युस्तस्यार्ध **य.**, दर्वागब्दार्ध **र.**, दर्वागब्दान्न संशयः **श.**

३३ ष्कं यस्यो..**य.**, नक्षत्रमंडलांसे स्यात् शुक्ले यस्योष्टतालुनी **र.**, नक्षत्रमंडलांभस्याच्छुष्येदास्योष्ठतालुकं **ल.**, मण्डलस्थं स्याच्छुष्के **व.**, **श.**।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तस्याप्यब्दार्धभावी स्यान्मृत्युः पुत्र न संशयः[३४] ।
अङ्गु लिद्वयमध्येन यदि पश्येन्न चन्द्रमाः[३५] ।।१६।।

तदाङ्गु लित्रयं यस्य स स्यादब्दार्धमृत्युभाक्[३६] ।
वक्रीभूतमथात्मानमागच्छन्ति सहस्रशः[३७] ।।१७।।

तेषु चादृश्यमानेषु षण्मासात् सोऽपि मृत्युभाक्[३८] ।
काकगृध्रावलीढाङ्गो रक्तगन्धानुलेपनः[३९] ।।१८।।

तैलाभ्यक्तोऽतिभीतश्च मुण्डितो रक्तवस्त्रभाक्[४०] ।
खरमारुह्य वेगेन दक्षिणां दिशमाव्रजन्[४१] ।।१९।।

यस्यात्मा दृश्यते स्वप्ने मृत्युस्तस्यार्धवत्सरात्[४२] ।
यदि वा सुरतान्ते तु घण्टानादः श्रुतो भवेत्[४३] ।।२०।।

---

३४ भागात्स्या **य.**, भागेस्या **ल.**, अब्दार्धभागे तस्यस्या **व.**, र्धभागेस्यान्मृत्युः **श.**

३५ लीद्वयमध्ये तु समादृश्येतचंद्रमाः **य.**, चंद्रमा **र.**, मध्येन यदा दृश्यते चद्रमाः **ल.**, मध्येत्तु पश्येच्चंद्रमसं यदि **व.**, मध्ये तु यदा पश्येत्तुचंद्रतां **श.**

३६ तदा तमेव यः पश्येत् सोप्यब्दार्धेन मृत्युभाक् **य.**, तदांगुलिद्वयं पश्येत् सोप्यब्दार्धेनमृत्यु **ल.**, त्रयं पश्येत् सोप्य..मृ **व.**, लीत्रयं पश्येत् सोब्दार्धे मृत्युभाग्भवेत् **श.**

३७ **य. व.**, भूतं स्वमात्मानं मार्गत्रिषु सह **र.**, स्वागतं च सह **ल.**, नास्ति **श.**

३८ तेषूपदृश्यमानेषु षण्मासात् **य.**, **ल.**, षड्मासात् **र.**, नास्ति **श.**

३९ **ल.**, **श.**, गृध्रश्चादष्टश्च **य..** गृध्रबलीवर्दअक्तगंधानुलेपनम् **र.**, गृध्राखुदंष्ट्रश्चेद्रक्तगन्धानुलेपनः **व.**

४० **य.**, क्तोपिजांतश्च..वस्त्रभृत् **र.**, तैलासक्तोतिभी..धृक् **ल.**, वस्त्रधृक् **व.**, तैलाभ्यंगोतिभीरुश्च..धृक् **श.**

४१ **व.**, **श.**, दक्षिणदिसमाव्रजन् **य.**, षरमा..णं दिशमाव्रजेत् **र.**, दिशमाक्रमेत् **ल.**

४२ स्यापि वत्सरात् **य.**, **व.**, यस्मान्ना दृश्यते **श.**

४३ षुघंटानादः स्वतोभवेत् **य.**, सरतांतेषु घण्टा **ल.**, यस्यात्मा सुरतां तेषु घण्टा **व.**, स्ततो भवेत् **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तस्य मृत्युर्भवेदर्वागब्दार्धान्नात्र संशयः[४४]।
गच्छन्तं गगने पश्येत् कृकलासं द्विरूपिणम्[४५]।।२१।।

यस्तस्य भविता मृत्युरर्वागेवार्धवत्सरात्।
पङ्के वा पांसुले वाऽपि यस्य खण्डं पदं भवेत्[४६]।।२२।।

मृत्युस्तस्य भवेदर्वागब्दार्धान्नात्र संशयः[४७]।
खद्योतवन्नपश्येच्चेदङ्गुल्या पीड्यमानयोः[४८]।।२३।।

नेत्रयोस्तस्य मृत्युस्यादर्वागर्धाच्च वत्सरात्[४९]।
अपीड्यमानयोरेव नेत्रयोर्यदि पश्यति[५०] ।।२४।।

खद्योतद्युतिवर्णं च त्रिमासान्मुत्युरुच्यते[५१]।
लोहदण्डधरं कृष्णं कृष्णवस्त्रपरिच्छदम्[५२]।।२५।।

---

४४ **ल.**, दर्वागब्दार्धाच्च न संशयः **य.**, गर्धाब्दा ..**श.**, एतदर्धानन्तरं प्रस्खलति (७.२७) इत्यादि **व** पुस्तके.

४५ इतः प्रभृति २७ तमस्य पूर्वार्धपर्यन्तो भागः नास्ति **य** पुस्तके, पश्येत् कृकलासं त्रिरूपिणं **ल.**, नगरं पश्येत् कर्कनाशं विरूपिणं **व.**, गमने पश्येत् कृक..त्रिरूपकं **श.**

४६ खण्डपदं भवेत् इति पाठभेदसहितमिदमर्धं २८ तमश्लोकानन्तरम् **य** पुस्तके, तदन्तरं च इन्द्रियाणि **न**, (२६ उ.) इत्याद्यर्धम्, तदनन्तरं भूमिच्छिद्रमित्यादि **य** पुस्तके, खण्डपदं **व.**, **श.**, अग्रतः पृष्ठतो वापि खण्डं यस्य पदं भवेत् वायु. १९.५.

४७ **ल.**, **व.**, **श.**, तस्य मृत्युर्भवेदब्दार्धादर्वाक् नात्रसंशयः **र.**, पांशुले कर्दमे वापि सप्तमासान् स जीवति वायु.१९.५.

४८ खद्योतं च न पश्येत् अंगुल्या **ल.**, खद्योतं तु न पश्येच्चेदंगुल्या नीयमानयोः **श.**

४९ दर्वागेवार्धवत्सरात् **ल.**, **व.**, **श.**

५० नास्ति **श.**, आपीड्य **व.**

५१ **व.**, चेत्तस्य त्रिमासान्मरणं भवेत् **र.**, द्युतिवत्तस्य त्रिमासान्मृत्युरिष्यते **ल.**, नास्ति **श.**

५२ धरं हस्ते नरं कृष्णपरिच्छदं **ल.**, **श.**, धरं हस्ते नरः कृष्णपदं यदि **व.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वप्ने प्रपश्यतस्तस्य त्रिमासान्मरणं भवेत्[५३]।
इन्द्रियाणि न गृह्णन्ति स्वकीयं विषयं यदि[५४]।।२६।।

मासान्ते मरणं तस्य भविष्यति न संशयः[५५]।
प्रस्खलति शिरो यस्य दिवोल्कापि च दृश्यते[५६]।।२७।।

नक्तमिन्द्रधनुर्वापि यस्याऽकस्माच्छिरो ज्वलेत्[५७]।
यस्य विद्युदमेघाऽपि सोऽपि मासान्मरिष्यति[५८]।।२८।।

दर्पणे चात्मनश्छायामप्सु वा यो न पश्यति[५९]।
तस्यापि मासतो मृत्यर्भविष्यति न संशयः[६०]।।२९।।

पश्येच्च मैथुनं वापि काकहंसशिखण्डिनाम्[६१]।
नातिशीतोष्णतापादीन् यदा मासान्मरिष्यति[६२]।।३०।।

---

५३ यः पश्येत्तस्य मृत्युः स्यात् त्रिरात्रेण न संशयः, एतदनन्तरं श्लो ४१ पू. **व.**, पश्येच्च तस्यापि द्विमासान् **श.**

५४ स्वकीय विषयान्यपि **र.**, गृह्नीयुः स्वकीयं विषयं यदि **ल.**, विगृह्नीयुः **व.**, णि न गृन्हीयुः स्वकीयं विषयं यदि **श.**

५५ एतदर्धानन्तरं भूमिच्छिद्र (३३) तस्यार्धमासान् रक्तपुष्पे (३४), सूर्यांशु (३२), भ्रूवोर्हि कंपनं (३५), यस्याचाकस्मिकी (३६), इत्येव महान् श्लोकक्रमव्यत्यासः **व.**

५६ प्रस्खलं तिमिरो यस्य दिवोक्तात् कावापि दृश्यते **र.**, लंति शिरो..दीपो वा नापि दृश्यते **ल.**, इदमर्धं २१ पूर्वार्धानन्तरं **श.**

५७ रक्तमिंद्र..च्छिरोपरि **य.**, कस्मात् स्थिरो भवेत् **ल.**, च्छिरो भवेत् **व.**, रक्तमिंद्रधनुर्वापि **श.**

५८ यस्य स्याद्विद्युद्व्योम्नोपि सोपि **य.**, विद्युदमेघेपि **ल.**, दमेघेन **श.**, वायु.१९.८

५९ नास्ति **य.**, वापि **न** पश्यति **श.**, वायु. १९.९

६० नास्ति **य.**

६१ नाति **य.**, हंसशषंडिनाम् **र.**, पश्येत्सुमैथुनं क्वापि **ल.**, पश्येत्तन्मैथुनं सर्प बकहंसशिखंडिनाम् **व.**, क्वापि काक **श.**

६२ नास्ति **य.**, रूक्षशीतोष्णवासादि **र.**, तापादिस्पृश्यो मासा..**ल.**, पादीन् मृत्युर्मासान् मरि..**व.**, शीतोष्णतापादिस्पृश्यमानान्म..**श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्नानमात्रेण यस्यापि हृत्पादौ च प्रशुष्यतः[६३]।
मासान्ते मरणं तस्य भविष्यति न संशयः[६४]।।३१।।

सूर्यांशुर्यदि शीतः स्यादुष्णश्चन्द्रांशुरेव च[६५]।
सोऽपि याति यमस्थानमर्धमासान्न संशयः[६६]।।३२।।

भूमिच्छिद्रमकस्माद्यः पश्येच्छिद्रं रवावपि[६७]।
अर्धमासान्मृतिस्तस्य भविष्यति न संशयः[६८]।।३३।।

रक्तपद्मोपमं वक्त्रे जिह्वा कज्जलच्छविः[६९]।
गात्रेष्वनेकशस्तद्वत् सोऽपि मासार्धमृत्युभाक्[७०]।।३४।।

हन्नाभिकम्पनं यस्य तालुकम्पनमेव च[७१]।
तस्यापि मरणं विद्यादर्धमासान्न संशयः[७२]।।३५।।

---

६३ नास्ति **य**., स्नातमात्रस्य यस्यापि हृत्पादौ संप्रशुष्यतः **ल**., श्रृंतिमात्रस्य यस्या..दौ संप्रशुष्यतः **व**., यस्यापि हस्तौ पादौ **श**., वायु. १९.११

६४ नास्ति **य**., इतः परं 'स्वेच्छया विकृताकारो (४०)' इत्यादि **व**., इतः परं 'यस्य चाकस्मिकी (३६)' इत्यादि **श**।

६५ सूर्यांशूर्यस्य शीतः स्याच्चंद्रांशुरुष्ण एव हि **य**., सूर्यासूर्यस्य शीतःस्यादुष्ण शीतांशुरेव च **ल**., र्यस्य शीतः **श**।

६६ स्थानं मासार्धान्नात्र संशयः **य**.

६७ **य**., द्यो पश्येच्छिद्रं नगावपि **र**., च्छेदं रवावपि **ल**., नास्ति **श**।

६८ नास्ति **श**।

६९ **ल**., **श**.; वक्त्रं रसा कज्जल..**य**., यस्य जिह्वाज्वलच्छविः **र**.; वायु. १९.२४

७० नास्ति **य**., गात्रे रुकचततः सोऽपि मासार्धन्मृत्युभाक् भवेत् **ल**., गात्रेप्यनेक **श**।

७१ भ्रूवल्लीकंपनं ..मेव वा **य**., स्कंधकंपनमेव वा **ल**., भ्रूवोर्हिकंपनं **व**.,

७२ **य**., **श**., विंद्या **र**., विद्यान्मासार्धान्नात्र संशयः **ल**।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यस्य चाकस्मिकी ज्वाला ज्वलन्तौ जायते तनौ[७३]।
स याति सप्त दिवसान्मृत्योः स्थानं न संशयः[७४]।।३६।।

ग्रहान् सप्त ऋषींश्चैव व्यभ्रे यस्तु न पश्यति[७५]।
स्वघ्राणरसने चापि सप्ताहान्मृत्युभाग् भवेत्[७६]।।३७।।

उष्णं यस्य शरीरार्धमर्धं वाप्यतिशीतलम्[७७]।
कर्मस्मृतिविनाशो वा सप्ताहात् स मरिष्यति[७८]।।३८।।

मण्डलीकृतनेत्रान्तस्थानाद्विगतचन्द्रिकः[७९]।
वक्रीभूतस्वनासो वा सप्तरात्रं न जीवति[८०]।।३९।।

---

७३ **ल.**, यस्य वाकस्मिकी ज्वाला जंतोस्तु जायते **य.**, यस्या चाकस्मि..ज्वलंती यायनेन नौ **र.**, ज्वाला चलंतीर्वापि देहिनः **श.**

७४ मृत्युस्थानं **य.**, स सप्तदिवसान्मृत्योः स्थानं याति न संशयः **ल.**, सप्ताहान्मरणं तस्य भविष्यति न संशयः **श.**

७५ सप्तमुखीन्वापि रात्रौ यस्तु न पश्यति **य.**, ऋषींश्चैव व्यक्तं चैव न पश्यति **ल.**, ऋषिंचैव **व.**, नास्ति **श.**

७६ **ल.**, स्वघ्राणवासने वापि **य.**, णं रसने चापि सप्ताहात् सोऽपि मृत्युभाक् **र.**, सव्यालवसने चापि **व.**, नास्ति **श.**

७७ मर्धं यस्य च शीतलं **य.**, **व.**, चापिशरी..मत्यंतशीतलं **ल.**, उष्णं चार्धशरीरं स्यात् सर्वं वाप्यतिशीतलं **श.**

७८ सप्तरात्रान्मरिष्यति **य.**, कर्णश्रुति विनाशो **र.**, तिर्विनाशो वा सप्तरात्रान्मरिष्यति **ल.**, कर्णश्रुतिविहीनं वा सप्तरात्रान्मरिष्यति **व.**, नेत्रश्रुतिविनाशो **श.**

७९ नीकृतनेत्रो वा हस्ताद्विगतकर्मकः **य.**, गतकर्णिकः **र.**, गतकर्णिक **ल.**, नेत्रो वा स्याद्विगतचन्द्रिकः **व.**, नेत्रांत..कर्णिकः **श.**

८० भूतं स्वनासाग्रं सप्तरात्रं सजीवति। अत्रैव 'इति वशिष्ठसंहिताया योगकांडे सप्तमोऽध्यायः।।७।।' इति समाप्तिवाक्यमध्यायस्यास्य **य.**, स्वनाशो वा **र.**, स्वनाशो सप्तरात्रान्मरिष्यति **ल.**, स्वनासेवा..स जीवति **व.**, तथाभूतस्वना..स जीवति **श.**; वायु. १९.२३.

©Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वच्छायाऽपि क्षताकारा यस्य वा दन्तकर्षणम्[८१]।
अकस्माच्छवगन्धो वा त्रिरात्रं तस्य जीवितम्[८२]।।४०।।
छायायां चोत्तरस्थायां दक्षिणां यस्तु पश्यति[८३]।
सद्य एव भवेत्तस्य विनाशो नात्र संशयः[८४]।।४१।।

यस्यान्नं भुज्यमानं तु कदाचिद् भुज्यते स्त्रिया[८५]।
तस्यापि सद्य एव स्यान्मृत्युरत्र न संशयः।।४२।।
पश्येद्भोजनकाले यः खमध्ये वृषवाहनम्[८६]।
अन्यं वा दण्डिनं पश्येत् सोऽपि सद्यो मरिष्यति।।४३।।
प्रकीर्णरक्तकेशां च तथा स्त्रीं पाशधारिणीम्[८७]।

पश्येद्भोजनवेलायां सोऽपि सद्यो मरिष्यति[८८]।।४४।।
✷ इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे अष्टमोऽध्यायः।।८।।

---

८१ इतः प्रभृत्यध्यासमाप्तिं यावन्नास्ति **य.**, स्वच्छाया विकृताकारा यस्य वादंतहासनं **ल.**, स्वेच्छया विकृताकारो यस्य..घर्षणं **व.**, स्वेच्छया विकृताकारा..घर्षणं **श.**

८२ अकस्माच्छ्रवणं गंधस्त्रिरात्रं इतः परं श्लो. २५ उत्तरार्धः **व.**, इतः परं लोहदण्डधरं हस्तं नरं कृष्णपरिच्छदं। यः पश्येत्तस्य मृत्युःस्याद्विरात्रेण न संशयः इत्याधिकः श्लोकः **ल.**, इतः परं 'लोहदंडधरं ह्रस्वं नरं कृष्णपरिच्छदं। यश्च पश्येत्तस्य मृत्युः स्यात् त्रिरात्रान्नसंशयः।।' इति श्लोकः (२५ उ. २६ पू. प्राक्तनसदृशः) दृश्यते **श.**; वायु. १९.१०

८३ **ल.**, चोत्तरस्थानं दक्षिणं यस्तु **र.**, श्चोत्तरं स्थानं **श.**

८४ तस्य सद्यो भवेन्मृत्युर्नरस्यात्र न संशयः **श.**

८५ **ल.**; स्त्रियाः **र.**; स्त्रियः **श.**

८६ तु खमध्ये **ल.**, **व.**

८७ केशाश्च तथा स्त्री पाशुधा..**र.**, नास्ति **ल.**

८८ जनकाले च सोऽपि मासान्मरिष्यति **ल.**, नास्ति **श.**

✷ समाप्ति वाक्यम् ३९ तमश्लोक टिप्पण्याम् **य.**, अत्र **र.**, पुस्तके अध्याय समाप्ति वाक्यं नास्ति। श्लोकसंख्याप्यग्रे केनोपायेनेत्यादिश्लोकस्य ४५ इत्याद्येव दृश्यते। परमन्ते अष्टमोध्याय इति दर्शनादयमनवधानमूलको लेखकप्रमाद एवेति स्पष्टं भवति।। अष्टमोध्यायः।। **ल.**, इति वसिष्ठसंहितायां योगकाण्डे अष्टमोध्यायः **व.**, । इति वसिष्ठयोगकांडे अष्टमोध्यायः। **श.**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - ५

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - ५

श्लोकार्ध सूची

अ

अकारमूर्तिमत्रापि ३.१४
अकारमूर्तिरेतेषाम् ३.५
अकारादिक्षकारान्ता २.१६
अक्षर त्रयमेतद्धि ३.८
अङ्गानि सम्यग्वक्ष्यामि १.३२
अङ्गुष्ठे नाभि नासाग्रे ३.३४
अङ्गुष्ठाभ्यामुभे श्रोत्रे ३.३७
अङ्गुष्ठौ च निबध्नीयात् १.७१
अग्रस्थो यदि चेत् प्रष्टा ५.४५
अग्रं दक्षिणमित्युक्तम् ५.४४
अण्डाकृतिवदाकारम् २.१२
अत्यच्छममलं नित्यम् ४.२१
अथवा मण्डले पश्येद् ४.४९
अथवाऽष्टदलोपेते ४.४१
अथेदानीं प्रवक्ष्यामि ४.१
अदृश्यं दृष्यमध्यस्थं ४.२४
अधश्चोर्ध्वंच विज्ञेया २.३५
अधस्तादण्डयोः सूक्ष्मां ३.४३
अधीतस्य तथान्यस्य १.६१
अनुतिष्ठन्ति ये नित्यम् ४.७२
अनेक शास्त्र विभ्रान्तो १.१६
अनेनोत्पद्यते नादः ३.३८
अन्यान्यपि बहून्याहुः ४.५६
अपानमूर्ध्वमाकृष्य ३.३६
अपानवायोः कर्मैतद् २.५१
अपानो मेढ्रपायोश्च २.४५
अपि भ्रूणहनं मासात् ३.१८
अर्थ हानौ च बन्धूनां १.४६
अलम्बुषा च विप्रेन्द्र २.३४
अलम्बुषा च सर्वासां २.२३
अलम्बुषा वामभागे २.४०
अल्पमूत्रपुरीषः स्यात् ४.१४
अवच्छिन्नस्य जीवस्य ५.४
अवष्टभ्य धरां सम्यक् १.७६
अव्यक्ता चैव विज्ञेया २.२६
अष्टप्रकृतिरूपाऽसावष्टधा २.१६
अष्टमे मरणं विन्द्यात् ५.५३
अष्टाङ्गात्मकमेतद्धि ४.६७
अष्टादशसु यद्वायोः ३.६१
अष्टैश्वर्य दलोपेते ४.३२
अष्टौग्रासा मनेरुक्ताः १.५०
अस्तेयमिति तत् प्रोक्तं १.४२
अहमेव परं ब्रह्म ४.४५
अहिंसा, सत्यमस्तेयं १.३८

आ

आकाशे धारयेद्देवमव्यक्तं ४.९
आकाशे परमानन्दे ३.५६
आकाशे वायुमारोप्य ४.१४
आकाशे विग्रहं विन्द्यात ५.३८

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आकृष्य श्वसनं बाह्यात् ३.१०
आगमान्तैक सम्बोध्यो ६.१४
आग्नेयांशे चरन्नूर्ध्वं ५.३६
आजानोः पायुपर्यन्तम् ४.६
आत्मजेनैवमुक्तस्तु १.३०
आत्मदेहस्थमुत्सृज्य ६.४७
आत्यस्थं परमात्मानं ६.४५
आत्मजं कृपयालोक्य ६.२
आत्मानं सर्वजगतः ४.४९
आत्मानं हृदयाब्जस्थम् ४.६४
आदित्यमण्डलं देवं ४.६६
आदौचत्वारि बाह्यानि १.३४
आनन्दमजरं गुह्यं १.१७
आनन्दमजरं नित्यं १.११; ४.२३
आपायोर्हृदयान्तं यत् ४.६
आभ्यन्तरं तु बुद्धयैव १.२३
आभ्रूमध्यात्तु मूर्धान्तम् ४.७
आमूर्द्धो वर्तते नादो ३.३९
आयुर्विद्यातकृत् प्राणस्तु ३.४६
आर्तेभ्यः श्रद्धया युक्तो १.५६
आविशन्ति तदेकस्य राशेः ५.२९
आसनाद्वाहनादन्यैर्न ४.१६
आसनानां च सर्वेषाम् १.३५
आसनानि च वक्ष्यामि १.६७
आसनेऽनन्यधीरास्ते ३.४५
आसव्य कर्णाद्विप्रर्षे २.३८
आस्ते यत्र कृपाबुद्धिर्दया १.४८
आहृन्मध्याद् भ्रुवोर्मध्यं ४.७

इ

इड्या पूरयेद्वायुं २.६४
इडा च पिङ्गला चैव २.२७
इडायां चन्द्रमा ज्ञेय : २.२८
इडा तस्याः स्थिता सव्ये २.२७
इडा तु सव्यनासान्तं २.३९
इडायां पिङ्गलायां च २.२८
इतरस्मिंस्तथैवोरुं १.८७
इति ब्रह्मा मम प्राह ६.६
इति मे ब्रह्माणः कोशं ६.२४
इति वेदावसानज्ञः स्वयम्भूः ६.१६
इत्युक्तः शक्तिना योगी २.४
इत्युक्ता योगिना योगी ५.१
इत्युक्त्वा भगवान योगी १.१०
इत्येवं कर्मसर्वस्वं १.२६
इदमग्रे सदेवासीत् सौम्य ६.८
इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु ३.५८
इष्टदेवं गुरूं नत्वा २.६०

ई

ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः ६.२२

उ

उकार मूर्तिस्त्वत्रस्था ३.६
उकारमूर्तिमत्रापिसंस्मरन् ३.११
उक्तमेतन्मिताहारम् १/५०
उक्तान्येतानि चत्वारि ३/५७
उच्चैर्जपादुपांशुश्च १/६५
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते १.९
उत्पात्ते चापि नाडीनां २.२

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उदानः सर्व संधिस्थः २.४७
उदान कर्म तत्प्रोक्तं २.५२
उद्गारादि गुणो यस्तु २.५३
उन्निद्रहृदयाम्भोजे ४.४१
उपदिश्य तदा ब्रह्मा १.२६
उमाऽर्द्धदेहं वरदं ६.३९

ऊ

ऊरूमध्यात्तथा वत्स ३.३८
ऊर्ध्वरेतं विरुपाक्षं ६.३४
ऊर्ध्वरेता विरुपाक्षः ६.१४, ५०
ऊर्वोरुपरि विप्रेन्द्र १.७१

ऋ

ऋजुकायस्तथासीनः १.६८
ऋतं सत्यं परं ब्रह्म ६.३४
ऋतावृतौ स्वदारेषु १.४४
ऋतुभिश्च त्रिभिर्विद्यादयने ५.२८
ऋतुभिः षड्भिरब्दः स्यात् ५.२८
ऋषिरालोक्य नेत्राभ्यां १.८

ए

एक एव हि भूतात्मा ५.५
एक जन्म कृतं पापं ४.७०
एकं ज्योतिर्मयं शुद्धं ४,२१
एक पादमथैकस्मिन् १.७२
एकधा बहुधा चैव ५.५
एकाक्षरं परं ज्योतिः ३.९
एकाक्षरं परं ब्रह्म ३.५४
एकाङ्गुलं तु तन्मध्ये २.१०
एकैकस्मिन् भवन्त्यत्र ५.३४
एतच्छ्रुत्वा वसिष्ठोक्तं १.२८
एतद्वा स्वस्तिकं प्रोक्तं १.६९
एतानि पंच वस्तूनि ५.८
एतास्वन्याः समुत्पन्ना २.४१
एतेन नाभिमध्यस्थो ३.४९
एते नाडिषु सर्वासु २.४३
एतेषां पृथिवीस्थाने ४.८
एतेषु पञ्च वर्णानां ४.४
एतेषु वायवः पञ्च २.४३
एवं चापिजयोपायः ६.३१
एवं ध्यानामृतं कुर्वन् ४.४६
एवं पृष्टः स भगवान् ६.२
एवं यद्वेदनं तच्च ४.४५
एवं राशिस्थभूतेषु ५.४२
एवं वा विजयोपायः ६.५३
एवं वायुजयोपायः ३.३५
एवं वा हृदयाम्भोजे ६.३७
एवमेव भ्रमेज्जीवो ५.१४
एष प्राणजयोपायः ३.३२
एषा च धारणा प्रोक्ता ४.३
एह्येहि मुनिशार्दूल १.१३

ओ

ओंकारं मूर्ध्नि निक्षिप्तं ६.२०
ओंकारस्त्वयमागत्य ६.२३
ओंकारो वाचकस्तस्य ६.१६

क

कण्ठकूपात्तु जिह्वायामूलं ३.७१
कदाचित् गत्वाऽहं १.१५

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

कन्दं तु कीदृशं प्रोक्तम् २.२
कन्दमध्ये स्थिता नाडी २.१९
कन्दमस्ति शरीरेऽस्मिन् २.११
कन्दस्य मध्यमे पुत्र २.२५
करणानि वशीकृत्य ३.३६
कर्तव्यं देहिना पुत्र मुक्तये ४.७३
कर्मक्षयादात्मशुद्धिः ५.१४
कर्मणा मनसा वाचा १.३९, ४२, ४३
कर्माणि यानि नित्यानि ३.६०
कर्मात्मकावुभावेतौ १.१९
कल्पान्तानलवद्वर्णं ४.५०
कारणादभवद्बीजं ६.९
किं च प्राणजयोपायं ३.३३
किञ्चात्मा योगिनां साक्षात् ६.२१
किं पुनर्नित्यमुक्तस्यं ४.४७
किरीटकेयूर धरं पद्म ४.२८; ६.५५
कुण्डलीं याति वह्निश्च ३.५०
कुर्यादेतानि कर्माणि ५.४६
कुर्वन् विध्युक्त कर्माणि ६.४
कुहूश्च वरणा चैव २.२२
कुह्वाश्च हस्तिजिह्वाया २.३२
कूर्मासनं भवेदेतदिति १.८०
कृत बुद्धिषु कर्तारः ५.१९
कृत्वा तु नाडिका शद्धिं १.८३
केनोपायेन भगवन् ६.१
केनोपायेन शुद्धाः स्युः २.१
केनोपायेन संसाराद् १.६
केवले कुम्भके सिद्धे ३.३०
क्षमासाविति गदिता १.४७
क्षेत्रज्ञोयमिति प्रोक्तो ५.७
क्षेत्रनाशे स्थितिस्तस्य ५.१२
क्षेत्रवानेव विद्वांश्च ५.२०
क्षेत्रस्य नाशकालस्तु ज्ञायते ५.१५

ग

गच्छेद्यदि तदा मोहाद् ५.४८
गरुत्मद्वाहिनी चापि ३.६
गान्धारायाः सरस्वत्याः स्थिता २.३३
गान्धारी सव्यनेत्रान्तम् २.३८
गान्धारी हस्तिजिह्वा च २.२३, ३१
गायन्नारायणं देवं १.१०
गुणज्ञं सर्वभूतेषु १.२
गुदं निरुध्य गुल्फाभ्यां १.८०
गुदातु द्वयंगुलादूर्ध्वम् २.१०
गुरुणाचोपदिष्टेन यत् १.६३
गुरुराहू च वायव्ये ५.३८
गुरुर्बुधो भृगुश्चन्द्र ५.४०
गुल्फाज्जंघस्य मध्यं तु ३.६६
गुल्फान्तरं विनिक्षिप्य १.८१
गुल्फौ च वृषणस्याधः १.७३, ७९
गुहाप्रविष्ट ममृतं ६.२९
गुहायां तु स्थितं रुद्रं ६.२८
गुहायां यदि निष्कामो ६.२८
ग्रहैः सार्धं प्रतिदिनं ५.२९

घ

घटिकाः पंच राशिः ५.२७
घ्राणे गलेऽक्षिदेशे च २.४६

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

च

चक्रेऽस्मिन् भ्रमते जीवः २.१३
चतुरंगुलमुत्सेधमायतं २.११
चतुर्थी तु तुरीयाऽऽख्या ५.९
चतुर्थी वारुणी ज्ञेया ५.३५
चतुर्थे धननाशः स्यात् ५.५२
चतुर्दशाङ्गुल नाभेः ३.७०
चतुर्भुजमुदाराङ्गम् ४.२७; ६.५४
चन्द्रस्तामस इत्युक्तः २.२९
चरत्यास्ये नासिकयोः २.४४
चरस्थिरोभयात्मानो ५.३१
चराचराणां स्रष्टारं १.१४
चरात्मकाश्च चत्वारो ५.३२
चित्योर्मूले च जानू च ३.६२
चिह्नैराभ्यन्तरैर्बाह्यैर्ज्ञात्वा ५.१६
चेतसा सम्प्रपश्यन्ति ६.१८

ज

जगत्कारणमव्यक्तं ४.४०
जगन्नाथं हृषीकेषं प्रणम्य १.१२
जंघामध्याच्चितेर्मूलं ३.६६
जंघोदरे च कटयां च २.४५
जघोर्वोरन्तरे तत्र ३.४३
जपश्च द्विविधः प्रोक्तः १.६४
जपेत्तत्र स्मरेन्मूर्तिं ३.१५
जपेद्वा तारकं ब्रह्म ६.५
जपेद्वा नित्यकर्माणि ६.४१
जातस्य द्विविधौ ज्ञेयौ १.१९
जानूर्वोरन्तरं १.६८
जानोर्नवाङ्गुलं प्राहुः ३.६७
जितासुरेव कार्याणि ६.२७
जितेन्द्रियं जितक्रोधं १.३
जीवन्मुक्तस्य न क्वापि ४.४७
जीवस्यमूल चक्रेऽस्मिन् २.१४
ज्ञात्वा वैश्वानरं देवं ४.३७
ज्ञात्वैवं नाडिसंस्थानं २.५५
ज्ञानं गुह्यतमं पुण्यं ४.६७
ज्ञानं प्राप्य कथं तस्मात् १.७
ज्ञान योगात्मक विद्धि १.३१
ज्ञानानले महत्कन्दे ४.३३
ज्ञानभक्तिसमा युक्तः १.२४
ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वापि १.२५
ज्ञानेन सह कर्माणि ४.४८
ज्ञानेनैव सहैतेन नित्य ४.६८

त

ततः पिंगलयाऽऽपूर्य ३.१४
ततः स वह्निना नागः ३.५०
ततस्त्वमपि विप्रेन्द्र १.२७
ततोऽग्निं पूर्ववद्ध्यायेत् २.६४
तत्र रम्ये शुचौ देशे २.५७
तत्राभ्यन्तर चिह्नानि ५.२१
तथापि नश्यतस्तेन ३.२६
तथावस्थाश्चतस्रस्तु ५.९
तथैव च पुनः कुर्यात् ३.१७
तदप्योंकारनिर्दिष्टं ६.१२
तदहं ते प्रवक्ष्यामि ६.७
तदहं श्रोतुमिच्छामि ६.१

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तदानन्दी भवेद्देही ३.४१
तदेतदोमिति ब्रह्म ६.९
तदेतद् ब्रह्मभुवनं ६.१०
तदेव ज्ञानसंयुक्तं १.२१
तदेव द्विविधं प्रोक्तं ४.१९
तदेव निर्गुणं ध्यानं ४.२५
तद्द्रष्टुमिच्छतः शक्ते ६.१५
तन्तु पञ्जर मध्यस्थो २.१४
तन्नाशे कः समर्थः स्यात् ५.१७
तन्मध्यं नाभिरित्युक्तं २.१२
तन्मध्ये तु शिखा तन्वी २.९
तपः सन्तोषमास्तिक्यं १.५३
तपोवनं ततो गत्वा २.५७
तपोवनगतं सौम्यं १.३
तमागमान्तसंबद्धममृतं ६.१५
तमागमान्तात् संसिद्धममृतं ६.२०
तयोः कालवशान्नित्यं ५.२३
तयोराभ्यन्तरं कुर्यात् १.२४
तयोर्नाशे समर्थः स्यात् ३.२६
तस्माच्चिह्नैः सदा विन्द्यात् ५.२४
तस्माज्ज्ञानेन देहान्तं ४.७३
तस्मात् त्वमपि विप्रेन्द्र ४.४८, ५५
तस्मात् स्वात्मानमद्वैतं ६.४८
तस्मादर्धाङ्गुलं विद्धि ३.७२
तस्मिन् भवति या लज्जा १.६२
तस्मिन् विश्वाधिको रुद्रो ६.१४
तस्य विश्वाधिको रुद्रो ६.५०
तस्यात्मनि महादेवः ६.२१
तस्यैव नित्यशुद्धस्य ५.४
तस्योर्ध्वं कुण्डली स्थानं २.१५
तानि सर्वाणि कुर्वीत ५.४७
तापयन्तं स्वकं देहम् ४.३४
तावद्वर्णाश्रम प्रोक्तं १.२५
तावेव सकलं धत्तः २.२९
तारकेण जपेन्नित्यं ६.५
तालुमूलं च नासायाः ३.६४
तासुमुख्यतमास्तिस्रः २.२४
तिष्ठतीति यतस्तस्मिंस्त्वं ६.२३
तिष्ठत्यस्मिन् जगत् प्राणः ३.४८
तिष्ठन्ति परितः सर्वाः २.१९
तुरीयाख्ये भवेदात्मा ५.११
तृतीये चैव राशौ तु ५.५२
तेन कालोऽपि विज्ञेयः ५.२०
तेनामृतेन संपूर्णः ४.४४
तेनैव पूरिते व्योम्नि ३.५३
तेषां प्राप्तो च सर्वत्र १.४६
तेषामात्मन्यनुष्ठानं ३.६०
तेषु मुख्यातमः प्राणः २.४४
तेषूत्तमानि चत्वारि १.३५
तेष्वेव पञ्च देवानां ४.५
त्रयाणां कारणं ब्रह्म ३.८
त्रिंशद्दिनानि मासःस्याद् ५.२७
त्रिकालस्नानसंयुक्तः २.५८
त्रिकोणं मनुजानां च २.८
त्रिचतुर्वत्सरं चाथ २.६७
त्र्यम्बकमुदारांगं ६.२९

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

त्र्यम्बकेति निष्कामो जपेद् ६.३७
त्र्यम्बकेत्यृचा चान्यैर्यजेत् ६.४३
त्र्यम्बकेन विधानेन यजेत् ६.४१
त्वं चोक्तेन विधानेन ६.२५

द

दक्षिणेतर गुल्फेन ३.४२
दक्षिणंसव्य गुल्फेन १.७३
दक्षिणेऽपि तथा सव्यं १.७०
दण्डहस्ता सती बाला ३.५
दयार्जवमिताहारः १.३८
दशमे देहसंतापोऽपरस्मिन् ५.५४
दिवसस्याद्य राशौ च ५.५०
दिवसस्यान्त्यराशौ तु ५.५४
दृष्ट्वा तस्य शिखामध्ये ४.३५
दृष्ट्वा मां सु प्रसन्नात्मा १.१८
देवदत्तस्य विप्रेन्द्र २.५४
देव देव जगन्नाथ १.१६
देहमध्यं तथा पायोः ३.६८
देहमध्यं तु कुत्रेति २.९
देहमध्यात् पुनर्मेढ्रं ३.६९
देहमध्ये शिखिस्थानं २.८
देहश्चोत्तिष्ठते तेन ३.२४
देहातीते जगत् प्राणे ३.५६
देहे द्वात्रिंशदस्थीनि २.६
देहे यद्यपि तौ स्यातां ३.२५
द्वात्रिंशच्च गृहस्थस्य १.५०
द्वादशाङ्गुलनाले ४.२६; ६.३२
द्वादशारयुतं चक्रं २.१३
द्वितीया नाडिकाऽऽग्नेयी ५.३५
द्वितीये चैव राशौ तु ५.५१
द्वि सप्ततिसहस्त्रेषु २.४९

ध

धनंजयस्य शोषादि २.५४
धनहानिश्च दुःखं च ५.५१
धर्माधर्मेषु विश्वासो १.५६
धर्मार्थकाम सिद्ध्यर्थम् १.६६
धारणं यदिदं वायोः ४.१६
धारणा ध्यान संयुक्तः ४.५८
धारणा पञ्चधा प्रोक्ता १.३७
धारणा प्रोच्यते सद्भिः ४.२
धारयेत् पञ्चघटिका ४.१०, ११, १३, १४
धारयेत पूरितं पश्चाद् ३.११
धारयेद्व्योम्नि विप्रेन्द्र ३.५२
धारितं रेचयेत् पश्चात् ३.१६
धूमध्वज जयं यावत् ३.४७
ध्यानं समाधिरेतानि १.३३
ध्यानं सम्प्रति वक्ष्यामि ४.१७
ध्यानमात्मस्वरूपस्य ४.१९
ध्यानमेव हि जन्तूनां ४.१७
ध्यानमेव हि मोक्षस्य ४.५४
ध्यानयोग बलादेव भवेन् ५.१५
ध्यानेनानेन सौरेण ४.५५
ध्यायन्नन्त्याक्षरं तत्र ३.१३
ध्यायन्नात्मानमत्रैव ४.६२, ६५, ६६
ध्यायन्नात्मानन्दं ४.६१
ध्यायन् [illegible] ४.६४

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

ध्यायन् यथा यथाऽऽत्मानं ४.६०
ध्यायन् विरेचयेत् पश्चात् २.६५
ध्यायन् वैश्वानरं तत्र ४.६३

न

न तस्य दुर्लभं किञ्चित् ३.३०
न रसं न च गन्धाख्यम् ४.२२
नागः कूर्मः कृकरको २.४२
नागादि वायवः पञ्च २.५०
नाडीनामपि सर्वासां २.२०
नाडीशुद्धिमवाप्नोति २.६८
नाडी संशोधनं कुर्याद्यथा २.५५
नादं चोत्पादयेत्यष ३.३१
नादाभिव्यक्तिरित्येतच्चिह्न २.६९
नादोपरि महादेवं ६.१७
नानाविधभयोपेतात् १.७
नान्यत् पश्यामि भैषज्यं ६.१९, ५२
नाभिं न हृदयं वत्स ३.६३
नारायणं जगन्नाथं ६.५४
नाशकालः कथं तस्य ५.३
नासस्याधो वहेद्वायुः ५.३७
नासायां तु सदा सम्यक् २.६२
नासाग्रे शशभृद्बिम्बं २.६२
नासा पार्श्वे वहे द्वायुः ५.३६
नासापुटौ मध्यमाभ्यां ३.३८
नासामध्ये वहेद्वयोम्नि ५.३७
नासामूलं तु जिह्वाया ३.७१
निःश्वासोच्छ्वासकासादि २.५१
निःश्वासोच्छ्वासको तस्य ३.२५
नित्यं धर्मरतं नित्यं १.४
नित्यकर्मान्वितान् ४.७२
नित्यमेवं प्रकुर्वीत् ३.१७
निमीलनादि कूर्मस्य २.५३
नियमा दशधा प्रोक्ता १.५३
निर्गतामृत धाराभिः ४.४३
निर्भयस्तु प्रसन्नात्मा ६.३
निर्वतकं च वेदेषु द्विविधं १.२२
निर्वतकं भवेदेतज्जन्मस्तु १.२१
निर्वातदीपवत्तस्मिन् ४.३५
निवृत्तफलसंगस्य ४.६८
नीत्वा वायुंपृथिव्यां ४.१०
नीवार शूकवद्रूपं ४.३६
नेत्रस्थानं तु तन्मूलाद् ३.७२
नेत्राभ्यां दक्षिणं गुल्फं ३.४४
नेत्राभ्यां लोकयन्नाभिं ३.४८
न्यस्तमन्त्रतनुर्धीरः ६.२७
न्यायार्जितं धन धान्यम् १.५७

प

पञ्चमी धारणेयं स्यात् ४.१५
पञ्चवक्त्रं महादेवं ६.३५
पद्मच्छविपदद्वन्दं ४.३०
पद्मासनं भवेदेतत् १.७१
पद्मासनं समास्थाय १.७८
पद्मासनस्थितं सौम्यं ४.५१
पद्मासने सुखासीनं १.१४
पद्मोदरदलाभाक्षं ४.५१
पद्मोदरदल[illegible] ६.५५

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu. Collection

पद्मोदरदलाभौष्ठं ४.२९
पप्रच्छ पितरं शक्तिः १.५
पयस्विनी च विप्रेन्द्र २.३७
परमात्मस्थितिः प्रोक्तो ४.५९
परे वा बन्धुवर्गे वा १.४८
पादांगुष्ठात्तु पादस्य ३.६५
पादङ्गुष्ठेऽपि स प्राण २.४४
पादादिजानुपर्यन्तं ४.६
पादान्मानं तु गुल्फस्य ३.६५
पापास्तु शुभदाः सव्ये ५.४१
पायुमूलं ततः पश्चात् ३.६३
पार्थिवे वारुणांशे च ५.४९
पार्श्वपादौ च प्राणिभ्यां १.७९
पिङ्गला चोर्ध्वगा याम्ये २.३६
पुण्यपापवशाद्देहं ५.१३
पुत्रेणैवं पिता पृष्टः १.८
पुनः पिङ्गलयापूर्य २.६६
पुनः प्राह मुनिश्रेष्ठं १.२८
पूरितं धारयेत् प्राणं ३.१५
पूरितं रेचयेत् पश्चात् ३.१२
पूर्वं पूर्वं प्रकुर्वीत ३.२३
पूर्व भागे सुषुम्णायाः २.३४
पूर्वद्धारणाद्वह्नौ ४.१२
पूर्वोदितास्तु सर्वत्र ५.३९
पूषा पयस्विनी चैव २.२२
पूषायशस्विनि चैव २.३१
पूषायाश्च सरस्वत्याः २.३३
पृथिव्यां धारयेद्विद्वान् ४.९
पृष्टवानिममेवार्धं यत् १.१५
पृष्ठमध्यस्थितेनास्थ्ना २.२५
पृष्ठस्थितस्य तस्यापि ५.४५
पोषणादि समानस्य २.५२
प्रणम्यदण्डवद् भूमौ १.५
प्रणवं व्याहरन् वाचा ६.३०
प्रत्यहारं प्रशंसन्ति ३.६१
प्रत्याहारः स च प्रोक्तो ३.५९
प्रत्याहारादि चत्वारि ३.५७
प्रत्याहारो भवेत् सोऽपि ३.६०
प्रपश्यन्तिधिया नित्यं ६.१०
प्रबोधे संस्फुरत्यस्मिन् ३.५१
प्रभाभिर्भासयद्रूपं ४.३०
प्रयाणं कुरुते वायुः २.७
प्रवर्तकं भवेदेतत् १.२०
प्रवृत्तौ वा निवृत्तौ वा १.४९
प्रवेशे शुभदाः सर्वे ५.४१
प्रसन्न गुरुणा पूर्वम् १.६६
प्रस्वेजनको यस्तु ३.२२
प्राङ्मुखोदङ्मुखो वा २.६१
प्राणमुन्मोचयेत् पश्चात् ३.५५
प्राणसंयमनं कृत्वा ६.२५
प्राणसंयमनं नाम ३.३२
प्राणद्दृढो भवेज्जीवः २.१५
प्राणापानसमायोगः ३.२
प्राणायामपराः पूता ३.४२
प्राणायामपराः सर्वे ३.१८
प्राणायाममथेदानीं ३.१

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राणायामस्तथा शक्ते १.३३
प्राणायामास्त्रिधा प्रोक्तः १.३६
प्राणायामास्त्रिभिः प्रोक्तो ३.२
प्राणायामादि सर्वाणि १.८४
प्राणायामादृते नान्यत् ३.१९
प्राणायामेर्विकसिते ४.२६; ६.३३
प्राणायामैर्विशुद्धा ये ते ३.१९
प्राणायामो भवेदेष ३.१३
प्राणायामोऽयमित्युक्तः ३.२७
प्राणोऽपानः समानश्च २.४२
प्राणोलयति तेनैव ३.२४
प्रियाप्रियेषु सर्वेषु १.४७
प्रोक्तस्तेयं महामार्गो ३.३१
प्रोक्ताः प्रीतेन ते भक्त्या १.५२
प्लावितं परुषं तत्र ६.३६
प्लावितं पुरुषं दृष्ट्वा ४.४४

ब

बलादाहरणं विचरतां ३.५८
बहिरन्तश्च सर्वेषां ५.२२
बहिर्यद्रेचनं वायो ३.२१
बालसूर्य प्रतीकाशं ६.११
बाह्यं बहिः क्रियेत्वेवं १.२३
बाह्यमाभ्यान्तरं चेति १.२२
बाह्यात् प्राणं समाकृष्य ३.३४
बाह्यदापूरणं वायोरुदरे ३.२१
बिन्दुमध्यस्थमालोक्य २.६३
बिन्दोरुपरि नादश्च ६.१३
बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठाः ५.१८
ब्रह्मचर्यं च तत् प्रोक्तं १.४४
ब्रह्मनिर्गुणमत्रैव ४.६१
ब्रह्मब्रह्ममयोऽहं स्याम् ४.२५
ब्रह्मरन्ध्रगतेनादो ३.४०
ब्रह्मरन्ध्रे सुषुम्णाया ३.३९, ५१
ब्रह्मवित्सु परं किञ्चित् ५.१९
ब्रह्मविद्भिर्महाभागैः १.४
ब्राह्मणेषु च विद्वांसो ५.१८

भ

भगवन् केन गच्छेयं १.१७
भगवन् ब्रूहि मे तात २.१
भगवन् सर्वशास्त्रज्ञ १.६
भद्रासन भवेदेतत् १.७९
भवपाशनिबद्धश्च ४.५७
भावयन् मनसा सार्धं ३.४५
भावाभावविनिर्मुक्तं ६.६१
भासयन्त जगत् सर्वं ४.५३
भुक्तं सर्वरसं गात्रे २.४८
भूतं भव्यं भविष्यच्च ५.३३
भूतानां क्षेत्रिणः श्रेष्ठाः ५.१८
भूमिरापस्तथा तेजो ४.४
भूमौ निवेश्य संस्थाप्य १.७८
भूम्यां बुधोरविर्ज्ञेयौ ५.३८
भोक्ता भोग्यं च भुक्तिश्च ५.८
भोक्त्री सुषुम्णा कालस्य २.३०
भोगायतनदेहेऽस्मिन् ५.७
भोग्यमाभ्यन्तरं बाह्यं ५.७
भोजनं मैथुनं युद्धं ५.४६

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भ्रान्त्यारूढः स एवात्मा ५.६
भ्रुवोर्मध्यं ललाटं च ३.६४
भ्रुवोर्मध्येऽप्यधीशानं ४.६५
भ्रुवोर्मध्येतथाऽऽत्मानं ४.३९

म

मकारश्चैव कुम्भश्च ५.३१
मकारमूर्तिः शुक्लाङ्गी ३.७
मकारमूर्तिमत्रापि ३.१६
मण्डलं तद्विहङ्गानां २.८
मध्यमः कम्पनात् प्रोक्त ३.२२
मनः शुद्धिश्च विज्ञेया १.५१
मनसालोक्य सोऽहं ४.४०
मनसाऽऽलोक्य देवेशं ४.३१
मनोजवत्वं लभते ३.३०
मन्त्रन्यस्ततनुर्धीरः २.५९
मयूरासनमेतद्धि १.७७
मयैवमुक्तः सन्तुष्टः १.१८
मरुतां मरुतां स्थाने ४.१३
मर्मस्थानानि चैतानि ३.६४
मर्मस्थानानि नाडीनां ४.१८
मायूरं कुक्कुटं चैव कूर्मं १.६७
माहेश्वरी तु सा प्रोक्ता ३.७
मुक्तासनं तथा तेषां १.६७
मुक्तिमार्गेषु सुषुम्णा सा २.२४
मुक्तिरुक्ता त्वया द्वाभ्यां १.२९
मुखेन सा समावेष्ट्य २.१७
मुख्यान्येतानि चैतेभ्यो ४.५६
मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं १.५१
मृतसंजीवनीं तात ६.४२
मृत्युकालं च तैर्ज्ञात्वा ५.२१
मृत्युभीतस्त्वशुद्धोऽपि ६.५१
मृद्वासनोपरि कुशान् २.५९
मेढ्रादुपरि निक्षिप्य १.८१
मेढ्रान्नाभिश्च विज्ञेया ३.६९
मेषश्च वृषभश्चैव ५.३०
मोक्षपन्थाः सुषुम्णा सा २.२६

य

य इदं पठते नित्यं ४.६९
य एवं कुरुते विद्वान् ३.७५
यकारं धारयेद्वायौ ४.८
यतः कर्मेवकुर्वन्ति १.२७
यतः क्षेत्रं विजानाति ५.६
यत् प्रसन्नस्वभावेन १.५८
यत्रभागे मरुन्नास्ति ५.४३
यत्र वायुस्थितिस्तत्र ५.४३
यथावत् सर्वमेतन्मे ५.३
यथावद्वायुचारं च २.१६
यथाश्वत्थदले तद्वद् २.४१
यथोक्त वर्णदेवेन ४.११
यदृच्छालाभसन्तुष्टं १.५५
यद्यत् पश्यति तत् सर्वं ३.५९
यद्यात्मा निर्गुणः शुद्धः ५.२
यद्वा समाधिमभ्यस्य ६.५८
यमाश्च दशधा प्रोक्ता १.३५
यमश्च नियमश्चैव १.३३
यमादिगुणसम्पन्नो ४.५८

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यमादिगुणसंयुक्ते ४.२
यमादिगुणसंयुक्तः २.५६
यमैश्चनियमैश्चैव १.८३
यशस्विनी च याम्यस्य २.३५
यशस्विन्याः कुहोर्मध्ये २.३२
यस्तु विश्वात्मकं रुद्रं ६.४३
यस्तु स्वात्मन्यशक्तः ६.४९
यस्त्वेतत् शृणुयान्नित्यं ४.७०
यस्त्वेनं परमात्मानं ६.२९
यात्राविवाह कर्माणि ५.४७
या धीस्तामृषयः प्राहुः १.५५
याम्ये पूषा च नेत्रान्तं २.३६
यावत्केवलसिद्धिः स्यात् ३.२९
यावत्क्षेत्री भवेत् ५.१६
यावदेतानि सम्पश्येत् २.६९
यावद्वा शक्यते ३.११, १६
यावन्मनोलयस्तस्मिं ३.४९
येन पश्यंति विद्वांसः ६.१०
योगकाले त्वपानेन २.१७
योगेन परमात्मानं ६.४
योगिनस्त्वपेरह्यत्र ३.४१
योगिनां हृदयाकाशे २.१८
यो वेदादौस्वरः प्रोक्तो ३.४

र

रागादपेतं हृदयं १.५९
राशिष्वेतेषु देहेस्मिन् ५.३३
राशिष्वेतेषु भूतानां ५.५५
राहुः कुजो रविः सौरिरेते ५.४०
रेफं च बिन्दुसंयुक्तम् २.६५
रेचनं पूरणं मुक्त्वा ३.२७

ल

ललाटं तु भ्रुवोर्मध्याद् ३.७३
ललाटाद् व्योमसंज्ञं ३.७३
लिंग देहेन सर्वत्र ५.१३

व

वकारं धारयेदप्सु ४.८
वक्तुमर्हसि तत्त्वेन २.३
वक्ष्यामि सुखदं नित्य १.९
वक्ष्येदेवं जगद्योनिं १.११
वत्सरान्मुक्त एव स्यात् ४.४६
वर्णत्रयात्मका ह्येते ३.३
वर्णाश्रमाणां कर्मेव १.२०
वसिष्ठं वाग्विदां श्रेष्ठं १.१
वहन्यादित्यशशाङ्कानां ६.३८
वह्निस्थाने निरुध्येत ३.३६
वामेऽपि वायावग्नौ ५.४८
वायुः प्रवर्तते देहे ५.२५
वायुर्वह्निस्तथा भूमिरापः ५.३४
वायुर्वायुसखेनैव २.१८
वायुश्चरति देहे ५.२२
वायुस्तिष्ठति तत्रैव ३.४६
वायूनां स्थान कर्माणि ४.१८
वासुदेवं जगन्नाथं ४.२७
विजानन्तं सदा सर्वान् ४.५२
विज्ञातव्यानि यान्यस्मिन् २.३
विशाय स्वशरीरेऽस्मिन् ६.२६

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

विद्ध्येतत् सर्वजन्तूनां २.५
विधाय विधिवन्न्यासम् ६.२४
विधिनोक्तेन मार्गेण १.५४, ६४; ६.५७
विध्युक्तं कर्म विप्रेन्द्र १.२९
विध्युक्तकर्म संयुक्तः २.५६
विनायकं सुसंपूज्य २.६०
विनियोगं तु विश्वात्मा ६.२४
विनिश्चित्यात्मनः कालं ६.३
विरेच्यापूर्य यं कुर्यात् ३.२८
विशुद्ध चेतसः शक्ते ६.१३
विशुद्ध चेतसा नित्यं यः ६.४५
विशुद्ध चेताश्चोङ्कार ६.२६
विश्वार्चिषं महावह्निं ४.३३
विश्वोदरा तु या नाडी २.४०
विषं भास्करभागे स्यात् ५.२३
विष्णुमप्स्वनले रुद्रं ४.९
विष्णोः पदे च परमे ६.२७
विहितेषु च सर्वेषु १.६३
विहितेषु तदन्येषु १.४९
वृथाक्लेशो भवेत्तस्य १.८४
वेदलौकिक मार्गेषु १.६२
वैश्वानरं जगद्योनिं ४.३४
वैश्वानरत्वं सम्प्राप्य ४.३८
व्यात्तवक्त्रो निरीक्षेत १.७४
व्यानः श्रोत्राक्षि मध्ये तु २.४६
व्योमरन्ध्रगते वायौ ३.४०
व्योमांशेऽपि न गन्तव्यं ५.४९

श

शक्तिः पुत्रो महाभागं ५.१
शक्तिमालोक्य नेत्राभ्यां १.१२
शंख ध्वनिनिभश्चादौ ३.४०
शनैः पिंगलया पुत्र ३.१२
शनैरारोपयेद् मूर्ध्नि ३.५२
शनैः षोड्शभिमात्रैरकारं ३.१०
शरीरं तावदेवं हि २.५
शरीरं विसिसृक्षुश्चेदेवं ३.५४
शरीर लघुता दीप्ति २.६८
शरीर शोधनं प्राहुः १.५४
शरीरदधिकः प्राणोः २.७
शुद्ध स्फटिकसंकाशं ४.२९; ६.३५, ४०
शुभाशुभं तदा ज्ञात्वा ५.४२
शुश्रूषा च गुरोर्नित्यं १.४५
शून्यतामभ्यसेन्नित्यं ६.६०
शून्यता सा तु विज्ञेया ६.६०
श्रृणु त्वं ब्रह्मणा प्रोक्तं १.१३
श्रृणुयाघः सकृद्वापि ४.७१
शौचं च द्विविधं प्रोक्तं १.५१
श्रीवत्सवक्षसं विष्णुं ४.२८
शलाघ्या व्यासादयो ६.१८
श्वास संख्याभिरप्यत्र ५.२६

ष

षट्कृत्व आचरेदेवं २.६७
षडंगुलस्तु ह्न्मध्यात् ३.७०
षष्टि श्वासो भवेत् प्राणः ५.२७
षष्ठे च प्रत्यवायः स्यात् ५.५३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu. Collection.

षोडशच्छन्दसंयुक्तं शिरः ४.४३; ६.३६

स

स एष प्रणवः प्रोक्तः ३.३
सम्पश्यन्नात्मयाजी स्यात् ६.४४
सम्पूर्ण कुम्भवद्वायोर्धारणं ३.२१
सम्भवत्युत्तमे पुत्र ३.२३
संसारपाशबद्धानां ६.१९
संसारार्णवमग्नानां ३.२०
संसृतिस्तात कस्य स्यात् ५.२
संहार संज्ञकं चापि ६.११
स कालं समतिक्रम्य ६.२९
स कालं तमतिक्रम्य ६.६
सगुणं पञ्चधा प्रोक्तम् ४.२०
सगुणेषूत्तमं ह्येतत् ४.३७
सदात्माराजते तत्र ३.५३
सप्तमस्य तु वर्गस्य २.६३
समग्रीवशिरः कायः २.६१
समग्रीवशिरः स्कन्धः ३.४४
समाधिः शून्यता प्रोक्ता ६.५९
समाधिः समतावस्था ४.५९; ६.५९
समाधिः समता प्रोक्ता १.३७
समानः सर्वदा देहे सर्वं २.४८
समानवायुरेवेको देहं २.४९
समाधिमधुना वक्ष्ये ४.५७
समाहिततमो भूत्वा १.३२
समाहितमना भूत्वा ३.१; ४.१
समुन्नतशिरः पादो दण्डवत् १.७७
सम्पीडय सीवनीं सूक्ष्मां १.८२
सम्भिद्य मनसा मूर्ध्नि ३.५५
सम्यक् विचारयेदेव स ४.७१
स याति ब्रह्मसदनं ३.७५
स योगोष्टांगसंयुक्तः १.३१
सरस्वती कुहूश्चैव २.३१
सरस्वती तथा चोर्ध्वम् २.३७
सरस्वती शूलहस्ता ३.७
सर्वत्र मैथुनत्यागं १.४३
सर्वदृक सर्वतः पादं ४.२४
सर्वपापविनिर्मुक्तः ४.६९
सर्वभूत भयं विन्द्याद् ५.५५
सर्वभूतस्थमात्मानं ६.४६
सर्वभूतहितं शान्तं १.२
सर्वभूतेषु चात्मानं ६.४४
सर्वरत्न समाकीर्णं ४.५२
सर्वशास्त्रार्थ तत्त्वज्ञं १.१
सर्वाधारं जगद्रूपम् ४.२३
सर्वावस्थस्तु सर्वत्र ६.५१
सर्वेकालस्य वशगाः ५.२४
सर्वेषामपि राशीनां ५.३५
सव्यं दक्षिण गुल्फेन १.८२
सव्य भागे जया ज्ञेया २.३९
सव्ये च दक्षिणे चापि ५.२५
सव्ये दक्षिणं गुल्फं तु १.७०
सहस्रगुणमुत्कृष्टं १.६५
सहितं केवलं चाथ ३.२८
सांख्यादयोऽपि विद्वांसः ६.१७
सिंहः कन्या तुला चैव ५.३०

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

सिंहासनं भवेदेतत् १.७५
सिद्धान्तश्रवणं चैव १.५३
सिद्धान्तश्रवणं प्रोक्तं १.६०
सीवन्यामात्मनः पार्श्वे १.६९
सुधारसं विभुञ्चद्भिः ४.४२; ६.३३, ३८
सुप्रीती भगवान् रुद्रो ६.२२
सुशोभनं मठं कृत्वा २.५८
सुषुप्तिः स्वात्मरूपेण ५.११
सुषुम्नेडा ततः पश्चात् २.२१
सूक्ष्मे लिंगशरीरेऽस्मिन् ५.१२
सृष्टि स्थित्यात्मकावेतौ ३.४
सोऽपिपुत्रविशेषेण ६.६१
सोऽहमात्मनि विज्ञानं ४.३१
सोऽहमात्मेति या बुद्धिः ४.५३
सोऽहमोमितिमन्त्रेण ६.४८
स्थाणुवन्मूर्ध पर्यन्तं ४.३९
स्थानात् स्थानात् समाकृष्य ३.६१, ७४
स्थानानि चैव वायूनां २.३
स्थानेष्वेतेषु मनसा ३.७४
स्थिरात्मकाश्च याम्ये ५.३२
स्थूलं सूक्ष्ममनाकाशम् ४.२२
स्फुरन्ती हृदयाकाशात् २.१८
स्मरन्नारायणं देवं ६.५६
स्मरन् ब्रह्मपुरे त्वस्मिन् ६.५६
स्वकीय शाखाध्ययनम् १.६१
स्वप्नेऽपि बाह्यशून्यस्य ५.१०
स्वयमुत्पन्नलिङ्गेऽपि ६.४९
स्वस्तिकं गोमुखं पद्मं १.६७
स्वात्मजं कृपयालोक्य २.४
स्वात्मन्यवस्थितं वापि ६.४६
स्वात्मानमर्भकाकारं ४.४२
स्वाहाप्रियालयात् प्राणं ३.४७

ह

हस्तयोः खर्परे चापि १.७६
हस्तस्थं रत्नमुसृज्य ६.४७
हस्ताभ्यां बन्धयेत् सम्यक् ३.३७
हस्ति जिह्वा तथा सव्यपादा २.३९
हस्तौ जानौ च संस्थाप्य १.७४
हानोपादानचेष्टादि २.५१
हिंसादिरहितं कायम् १.५९
हिरण्यश्मश्रुकेशं च ४.५०
हृज्ज्योतीयमकारान्ते ६.१२
हृत्पद्मे परमात्मानं ४.६२
हृत्पद्मेष्ट दलोपेते ४.२६; ६.३२
हृत्सरोरुहमध्येऽस्मिन् ४.३२
हृदयाम्बुजमध्यस्थं ४.६३
हृदयेऽयान्तराकाशे यद् ४.३

Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट - ६

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिशिष्ट-६

विशेष शब्दसूची

- ० -

अकार ३.५, १०, १४
अक्षर ३.८, ९, १३, ५४; ६.९
  ११, १६, २६.
अक्षि २.४६; ३.६४
अग्नि २.६४, ६५; ३.४६, ५२;
  ५.३८, ४८.
अग्निकुल ३.४६
अंग (योग) १.३१, ३२, ३३.
अंगुल २.५, ७, १०, ११
अंगुलि १.७४; २.५
अंगुष्ठ १.७१; ३.३४,
  ३७,
अच्युत ६.५
अज ४.२३,
अजर १.११, १७; ४.२३;
  ५.२
अजिन २.५९
अण्ड ३.४३
अद्वैत ६.४८
अधम ३.२२
अधर्म १.५६
अधीशान ४.६५
अध्ययन १.३, ६१
अध्यात्मविद्या १.५१
अनल ४.९,५०
अनन्तक ४.६१
अनिल ३.१२, १६
अनृत १.५९
अन्त ४.५०
अन्तक ३.४, ३१
अन्तर ५.२०
अन्तराकाश ४.३
अन्तरात्मन् ६.५६
अपान(कर्म)२.१७, ४२, ४५
  ५१; ३.२, ३६
अब्द ५.२८
अभिचार १.४०
अभ्यर्चन १.५८
अमर ५.२
अमूर्त ४.२३
अमृत ४.४३, ४४, ४६, ६४;
  ५.२३; ६.१५, १६, २०
  ४०
अमृत (परमा) ६.२४, २६.
अमृत (धारा) ६.३६
अयन ५.२८,
अयोगिन् ६.१९
अरण्यसासिन् १.५०
अर्चन १.५८
अर्थ १.६६

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अलम्बुशा (सा.षा.) २.२३
३४, ४०
अल्पभोजन १.५०
अल्पमूत्रपूरीष ४.१४
अवच्छिन्न ५.४, १२
अवस्था ५.९; ६.५१
अवस्था (समता) ६.५९
अव्यक्त ४.९, ४०
अव्यय ४.४२,
अशुभावह ५.४१
अश्वत्थ २.४१
अष्टाङ्ग १.३१; ४.६७
अस्तेय १.३८, ४२
अस्थि २.६, १२, २५, ५०
अहिंसा १.३८, ४०, ५२.
आकाश ३.५६; ४.४, ७, ९, १४
आकाशग ४.३
आगम ६.१४, १५, २०
आग्नेयांश ५.३६
आग्नेयी ५.३५
आत्मदेहस्थ ६.४७
आत्मन् १.२३, ३१; ३.५६,५९,
६०; ४.२, १९, ३२,
३९, ४२, ४९, ५३,
६०, ६१, ६२, ६४,
६५,६६.
आत्मयाजिन् ६.४३, ४४
आत्मवेदन ५.१४
आत्मशुद्धि ५.१४
आदित्य (मण्डल) ४.४९, ६६
आनन्द १.११, १७, २४;
४.२३, ६१
आप् (अप) ४.४, ६, ८, ९,
११; ५.३४.
आभ्यन्तर (आनन्द) १.२२,
२३, २४, ३४, ५१;
३.५७
आभ्यन्तर (चिह्न) ५.७, १६
२१
आयु ३.३६; ५.२८
आर्जव १.३८, ४९.
आसन १.३३, ३५, ६७, ८१;
२.५९, ६०; ३.२४,
३५, ४५; ४.१६
आस्तिक्य १.५३, ५६
आस्य २.४४, ६१
आह्निक १.४
इडा २.२१, २७, २८, ३१
३८, ३९, ६४, ६६;
३.१०, १६, १७.
इतिहास १.६१
इन्द्रिय ३.४०, ५८; ५.७, ८,
इष्टदेव २.६०
ईश ४.३१; ६.२२
ईशान ४.६५
ईश्वर १.११; ३.५४; ४.९,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३०, ३४, ३५, ६३, ६५
ईश्वरपूजन १.५३,५८,५९
उकार ३.६, ११
उच्च १.६५
उच्छवास २.५१; ३.२५
उत्तम (व्यान) ४.४०
उत्तम (प्राणायाम)३.२२, २३.
उदङ्मुख २.६१
उत्थान ३.२२
उदर २.४५; ३.२१, ४४
उदान (कर्म) २.४२, ४७, ५२
उपांशु १.६४, ६५
उपायग्रहण १.६६
उमा ६.३९
ऊरु १.६८, ७१, ७२, ७८;
२.४५
ऊरुद्वय ३.६२
ऊरु (मध्य) ३.६८
ऊर्ध्वरेतस् ६.१४, ३४, ५०
ऋत ६.३४
ऋषि १.८, ५५; ६.२४
ओंकार ३.५१; ६.१२, १५,
१६, २०, २३, २६,
कटि २.४५
कण्ठकूप ३.६३, ७०, ७१
कन्द २.२, ११, १९,
२५, ३४; ४४; ३.४८
कन्दमध्य २.१९, २५, ३४;
४.२६; ६.३२.
कन्या ५.३०
कम्पन ३.२२
कर १.७६, ७८; २.६२
करण ३.३६, ३७
कर्कट ५.३०
कर्ण २.३७, ३८
कर्तृ ५.१९
कर्म १.१९, २०, २४-२७, २९
३९, ४२, ४३, ४९,
६२; ३.६०; ४.४८;
५.४६, ४७.
कर्मकाण्ड १.२६
कर्मक्षय ५.१४
कर्म नित्य १.२४; ३.६०; ४.६८
७२, ७३.
कर्म (नैमित्तिक) ६.४, ४१.
कर्म (परिक्षय) ५.१४.
कर्म (विध्युक्त) ६.४
काम १.२०, २१, ६६; २.५६
कामवर्जित ६.५
काय १.४९, ५९, ६८; २.६१.
कारण ३.८; ४.२३, ३६, ३९
४०, ५०; ६.८, ९, २७,
कारणत्रय ६.३९.
कारुणिक १.५
काय ६.२६.
काल २.२९, ३०; ५.२०, २४

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२६; ६.१, ३, ६, १३,
५३
कालजित ६.३०, ५७.
कालवश ५.२३,
कालवित् ५.२६; ६.१.
कालसूचक ५.१५.
कास २.५१.
किरीट ४.२८, ५२.
कुक्कुट १.६७, ७८.
कुज ५.३८, ४०.
कुण्डलीकृता २.१६
कुण्डलीस्थान २.१६
कुम्भक ३.२, ३,९, २१, २६,
२७, २८, ३०, ३१
कुश २.५९.
कुहू २.२२, ३१, ३२, ३४.
कूर्मकर्म २.४२, ५३.
कूर्मासन १.८०
कृकरक २.४२, ५३.
कृकाटि २.४६.
कृच्छ्र १.५४.
कृतबुद्धि ५.१८, १९
कृपाबुद्धि १.१२, १८, ४८
केयूर ४.२८
केवलकुम्भक ३.२७, २८, ३०
क्रोध १.३
क्लेश १.३९, ४०, ८४
क्षमा १.३८, ४
क्षेत्रयोग ५.१७
क्षेत्रवान ५.२०.
क्षेत्रज्ञ ५.६, ७.
क्षेत्रिन् ५.१६, १८.
ख ५.३४.
खमध्य ३.५५
खर्पर १.७६
गदा ४.२७.
गल २.४६.
गान्धारी २.२३, ३१, ३३, ३८.
गायत्री ३.५; ६.२५.
गिरिप्रस्स्रवण ३.४०
गुद १.८०; २.१०.
गुरुभक्त, गुरु १.१३, ४५, ६३;
२.६०.
गुल्फ १.६९, ७०, ७३, ७९, ८०,
८१, ८२; ३.४४, ६५, ६६.
गुहा ६.२४, २८, २९.
गुह्य १.१७.
गृहस्थाश्रम १.४४, ५०.
गोमुख १.६७, ७०.
ग्रह ५.२९.
ग्रहोदय ५.३३, ४२
ग्रीवा २.६१; ३.४४.
घटिका ४.११, १३, १४; ५.२७
घ्राण २.४६
चक्र २.१३, १४
चक्षु ३.३७

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चतुरानन १.१४
चतुर्मुख १.१६
चतुर्वर्णात्मक ६.९
चतुष्पद २.८
चन्द्र २.२८; ४.२८; ५.३८, ४०
चन्द्रभास्करभाग ५.२२,२३.
चान्द्रायण १.५४,
चितिमूल ३.६२, ६६, ६७,
चित्त १.४६; ६.२८
चित्तक्षोभ ५.५०
चिह्न २.६८, ६९; ५.१६,
२०,२४.
चेतस् ६.४, १३, १८, ४५, ५०.
चेतस् (युक्त) ६.१२, २३.
छन्दस् ६.२४
जगदीश्वर ४.९.
जगद्योनि १.११.
जगन्नाथ १.१२, १६; ४.२७.
जङ्घा २.४५; ३.४३, ६२, ६६
जठराग्नि २.६८.
जन्तु २.५; ४.१७.
जन्म १.७; ३.५६; ४.७०;
६.८, २८.
जप (उपांशु) १.६४,
जया २.३९.
जरा १.७
जल ५.३८
जलचन्द्र ५.५.
जाग्रत् ५.९.
जानु १.६८, ७८; २.४५;
३.६२, ६७; ४.६.
जितक्रोध १.३.
जितासु ६.१२.
जितेन्द्रिय १.३, १३; ३.४५;
४.५८.
जिह्वा २.३७.
जिह्वामूल ३.७१.
जीव २.१३, १४, १५; ५.४, १४.
जीवन्मुक्त ४.१४, ४७.
जीवसंज्ञ ५.६, १३.
जीवात्मन् ४.५९.
ज्ञान १.७, २१, २४, २७, २९, ३०,
३१; ४.३३, ४८, ६१, ६७, ६८,
६९, ७२, ७३.
ज्ञानचक्षुस् ६.१७.
ज्ञानिन १.२५, २७.
तत्व४.९.
तत्वज्ञ १.१.
तत्वदर्शिन् १.४२.
तपस् १.५४; ३.५७; ४.६७.
तपोवन १.३.
तर्जनी ३.३७.
तामस २.२९.
तारक ३.२०; ६.५, २९.
तालुमूल ३.६४.
तुरीय ५.९, ११.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तुला ५.३०
तेजस् ४.४.
तैजस् ५.१२.
त्रिकालज्ञ १.१.
त्रिकालस्नान २.५८.
त्र्यम्बक ६.३९, ४१, ४३, ५०,
त्रिलोचन ६.३५, ३९.
त्रैयम्बक ६.१९, ५२.
त्वक् २.१२, ५०.
दया १.३८, ४८.
दशबाहु ६.३५.
दान १.५३, ५७.
दिवा २.२९.
दीप्ति २.६७.
द्विज ५.२०.
दुःख १.६; ४.१५, ४७;
५.५१, ५२.
देव १.१०, ११, १६; २.६०;
४.५, १०-१४, ३१, ३७,
७२.
देवता ३.६.
देवदत्त २.४२, ५४.
देवालय २.५७.
देवेश ४.३१.
देह १.२५; २.१, १३, १५,
४८, ५२; ३.२४, २५,
५६; ४.३४, ६४; ५.७,
१३, २२, २५, ३३.
देहमध्य २.८, १०, ११;
३.६८, ६९; ५.२२.
देहिन् २.१; ३.४१; ४.६४;
५.२५.
धनञ्जय २.४२, ५४.
धनु ५.३०.
धर्मरत (धर्म) १.४, ३१, ५१,
५६, ६६,
धारण (णा) १.३३, ३७; ३.११,
३४; ४.१-५, १२,
१५, १६, ५८.
धी १.५५; ६.१०.
धीर २.५९.
धृति १.३८, ४६.
ध्यान १.३३, ३७; ४.१७, १८,
१९, २५, ३१, ३७, ४०,
४५, ५३-५५, ५८.
ध्यानामृत ४.४६.
ध्यानयोग ५.१५.
ध्येय १.११.
नर ५.१८.
नरक ३.१९.
नाग २.४२, ५०, ५३; ३.५०.
नाडि २.१, २, ६, १९, २०,
४०, ४१, ४३, ४९, ५५.
नाडिका ५.२९, ३५.
नाडिकाशुद्धि १.८३, ८४; २.१,
५५, ६८.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नाडिचक्र २.१९.
नाडिमार्ग २.४९.
नाडिसंस्थान २.५५; ४.१८
नाद ३.३१, ३८, ३९, ४०;
६.१३, १७, १८.
नादाभिव्यक्ति २.६९.
नाभि (मण्डल) १.७६; २.१५,
४४, ४५; ६.३४,
४८,४९, ६३, ६९,
७०.
नारायण १.१०; ४.२७; ६.५४.
नाश ५.१७.
नाशकाल ५.३, १५.
नास (नासिका) २.३६, ३९, ४४.
नासा ध ५.३७.
नासाग्र २.६२; ३.३४.
नासापार्श्व ५.३६
नासापुट ३.३८.
नासामध्य ५.३७.
नासामूल ३.७१.
निःकाम ६.३७.
निःश्रेयस् ५.२०.
निःश्वास २.५१; ३.२५.
निःस्पृहा १.४२
निःत्यकर्म १.२४; ४.६८,
७२, ७३;
नित्यमुक्त ४.४७.
नित्यशुद्ध ५.४.
नियम १.३३, ३५, ५३, ८३.
निरञ्जन १.११.
निर्गुणध्यान ४.१९, २०, २५,
६१; ५.२.
निर्द्वन्द्व ६.३.
निर्भय ६.३.
निर्वतक (न) १.१९, २१, २२.
निवृत्ति १.४९.
निष्काम ६.५, २८.
नेत्र २.३६, ३८, ६३; ३.४४, ४८.
नेत्रस्थान ३.७२.
नैमित्तिक कर्म ६.४, ४१.
न्यस्त तनु २.५९.
न्यास ६.२४.
पञ्चवक्त्र ६.३५.
पद्मासन १.१४, ६७, ७१, ७८;
२.६१; ४.५१.
पयस्विनी २.२२, ३३, ३७
परमपद १.१७.
परमात्मन् ४.३०, ३५, ४५, ५९,
६२; ६.४, २९, ५९.
परमानन्द १.११.
परमानन्द विग्रह ६.२८, २९, ४३,
४५,४६, ४८.
परमामृत ६.१०.
परमेश्वर १.१४.
परार्थैक प्रयोजनम् १.२.
पलित ३.३०.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पश्चिमा ३.७.
पादतल १.६८, ६९, ७१, ७७;
२.४७; ३.६५; ४.६, २४.
पादाङ्गुष्ठ २.३५, ३९, ४४;
३.६२, ६५.
पाप १.६९; ४.६७, ६९, ७०;
५.३९, ४१.
पापफल ५.४१.
पायुमूल २.४०, ४५; ३.६३, ६८; ४.६.
पार्थिव ५.३६, ४९.
पार्थिवी ५.३५.
पावकी २.९.
पिंगला २.२१, २७, २८, ३१,
३६, ३९, ६५, ६६;
३.१२, १४.
पितामह १.१७.
पुण्यपाप ४.६९; ५.१३.
पुराण १.६१.
पुरीष ४.१४
पुरुष ४.४४, ४९, ६४; ६.३४, ३६.
पुरुषोत्तम ४.३०
पूरक (पूरण) ३.२, ३, ९, २१
२७, ३०, ४२.
पूर्वाह्निक १.४.
पूषा २.२२, ३१, ३३, ३६, ३९
पृथिवी ४.९, १०.
पृथिवीजय ४.१०.
पृथिवीस्थान ४.६, ८
पृष्ठ ३.४४.
प्रकृति ४.३२.
प्रणव ३.१, ३, ९, ११, १३,
४५, ४८; ६.६, १०.
१७, १८, २०, २५, ३०.
प्रत्यगात्मन् ४.५९.
प्रत्यवाय ५.५३.
प्रत्याहार १.३३, ३६; ३.५७-६१, ७४.
प्रवर्तक (न) १.१६, २०, ४९.
प्रवेश ५.४१.
प्रसन्नात्मा ६.३.
प्रस्वेद ३.२२.
प्राङ्मुख २.६१.
प्राण २.७, १४, १५, ४२-४४, ६६;
३.२, १३, १५-१८,
२०, २४, ३४, ४६,
४७, ४८, ५२, ५५; ५.२६.
प्राणकर्म २.५१.
प्राणसंयम ३.२०, ३१, ३२.
प्राणायाम १.३३, ३६, ८३, ८४; ३.१,
२, ३, ९, १३, १७-१९,
२२, २३, २७ २८,४५;
४.२६, ३३; ६.२५.
प्रिय १.४१.
बन्ध ४.१७.
बाह्य १.२२, २३, ३४, ५१, ६३;
५.७, १६, २०; ६.४९.
बाह्यकाश ४.३.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बिन्दुरूप २.६३, ६५; ६.११-१३.
बीज ६.९.
बुद्धि १.२३; ४.५३.
बुद्धिजीवन् ५.१८.
बुद्धिनाश ५.१३.
बुद्धिमत् १.९; ५.१८.
बुध ५.४, ३८, ४०.
ब्रह्मन् (-देव) १.१३, १४, २६; ३.८,
५५, ५६; ४.९, २५,
४५, ६१; ६.५, ९,२४,
२९, ३०, ३४.
ब्रह्मचर्य १.३८, ४३, ४४.
ब्रह्मचारिन् १.५०.
ब्रह्मज्ञ १.३.
ब्रह्मज्ञान ६.९.
ब्रह्मपुर ६.५७.
ब्रह्मभुवन ६.१०.
ब्रह्मसदन ३.७५.
ब्रह्मरन्ध्र २.१७, २६; ३.३९,
४०, ५१, ५५.
ब्रह्मवित् १.४, १०; ५.१९; ६.६, २९.
ब्रह्मवेदिन् ५.१९.
ब्रह्मा ५, ४८; ६.६.
ब्राह्मण १.४; ५.१८.
ब्राह्मणप्रिय १.३.
भक्ति १.२४, ५२, ५८; ४.७०
भगवत् १.६, १०, ११; २.१;
५.३; ६.१, २.
भद्रासन १.६७, ७९.
भय १.७.
भवनाशन (पाश) १.९; ४.५७.
भवपाश ४.५७.
भवभाव ५.११.
भविष्य ५.३३.
भव्य ५.३३.
भस्मधर २.५९.
भावाभाव ६.६१.
भास्कर २.२८.
भास्करभाग ५.२२.
भुक्ति ५.८, १०.
भूत १.३९, ४१, ४३; ४.३१;
५.५, १८, ३३, ३४, ४२,
५५; ६.३५, ४४, ४६.
भूतात्मन् ५.५.
भूमि ४.४; ५.३४, ३८.
भृगु ५.३८, ४०.
भोक्तृ ४.४२; ५.८, १०.
भोगसाधन ५.७.
भोगायतन ५.८.
भोग्य (अभ्यन्तर, बाह्य) ५.७, ८.
भ्रुवोरन्तर ३.७२.
भ्रूमध्य ३.६४, ७२.
भ्रूणहन् ३.१८.
मकर ५.३१.
मकार ३.४, ७, १६, ३१.
मठ २.५८.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मण्डल ६.३८.
मति १.५३, ६३; ४.३७.
मद १.७.
मध्यदेह ३.६३; ४.३९.
मध्यम (प्राणायाम) ३.२२.
मनस् १.३९, ४२, ४३, ४९, ५५; २.६३; ३.१, ४०, ४५, ४८, ५५, ६०, ७४; ४.१, २, १९, ३१, ४०.
मनःशुद्धि १.५१.
मनुज २.८.
मनोजव ३.३०.
मनोलय ३.४९.
मन्त्र २.५९; ६.२७.
मन्त्राभ्यास १.६४.
मयूरासन १.७७.
मरण ५.५३.
मरुत् ४.१३; ५.४३.
मर्मस्थान ३.६१, ६४; ४.१८.
महत् ४.९, ३३.
महर्षि ६.१४.
महाकारुणिक १.५.
महात्मन् ५.१.
महादेव १.१७, २१, ३५.
महाप्राण ३.५५.
महामार्ग ३.३१; ४.५४.
मात्रा २.६४; ३.१०, ११, १२, १४
मानस १.६४, ६५.
मायूर १.६७.
मारुत ४.९.
माहेश्वरी ३.७.
मिताहार १.३८, ५०.
मिथुन ५.३०.
मीन ५.३१.
मुक्त १.७; ४.४७, ४८; ५.२१.
मुक्तासन १.६७, ८१, ८२.
मुक्तिमार्ग १.१३, २२, २५, २९, ३५; २.२४; ४.३८, ४७, ५५, ६८, ७३; ५.१५.
मुनि १.५, १३, २८, ४२, ५०.
मुमुक्षु १.२७.
मूत्र ४.१४.
मूर्धन् २.२५; ३.३९, ५२, ५५, ६४; ४.७, ३९; ६.२०, २३.
मूलचक्र २.१४.
मृतसंजीवनी ६.४२, ५१.
मृत्युकाल ५.२१.
मृत्यु १.७; ६.१९, ५२.
मृत्युजित् ४.४६; ६.६१.
मृत्युञ्जय ६.४८.
मृत्युभीत ६.५१.
मेघध्वनि ३.४०.
मेढ्र १.८१; २.१०, ३४, ४५; ३.६९.
मेष ५.३०.
मैथुनत्याग १.४३.
मोक्ष २.२६; ४.१७, ५४; ६.५२.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यकार ४.८.
यमसदन (स्थान) १.३३, ३५, ३८, ५२, ८१; २.५६; ४.२, ५८.
यशस्विनी २.२२, ३१, ३२, ३५
योग १.१, ३१; ३.७५; ६.४, २८.
योगनिष्ठ १.२६; ६.२४.
योगवित् १.८०; ३.५९; ४.३७; ६.६१.
योगशास्त्र ४.२.
योगस्थान ४.७१.
योगाङ्ग १.३३, ८४; ३.५७.
योगिन् १.१०, ११, ३९, ७५; २.४, १८; ३.४१, ६१; ५.१; ६.१९, २१.
रवि २.२८; ५.३८, ४०.
राग १.५९.
राजस २.२९.
रात्रि २.२९.
राशि ५.२७, २९, ३१, ३३, ३६, ३८,४२, ५०-५२, ५४, ५५.
राहु ५.३८, ४०.
रुद्र ४.९; ६.१४, १६, २२, २८, ४३, ५०.
रेचक (रेचन) ३.२, ३, ९. २१, २७, ३०, ४२.
रेफ २.६५; ४.८
रोग ४.११.
लकार ४.८.
लक्षण (बाह्याभ्यन्तर) १.१.
लज्जा १.६२.
ललाट ३.६४, ७३.
लिंग ६.४९.
लिंगदेह ५.१३.
लिंगशरीर ५.१२.
लौकिकमार्ग १.६२.
वंश २.६.
वकार ४.८.
वक्त्र १.७४.
वरणा (वारणा) २.२२, ३५.
वरुणांश ५.३७.
वर्ण ३.३; ४.४, ११, १३, १४, ५०.
वर्णाश्रम १.२०, २५.
वसिष्ठ १.१, १०, २८, ३०; २.५; ३.१; ४.१; ५.१, ४; ६.३.
वस्तु ५.८.
वह्नि २.१७, ४८; ३.४६, ५०; ४.६, ८, १२, ३५; ५.३४.
वह्निस्थान ३, ३६; ४.६.
वाक् १.३९, ४२, ४३, ४९, ५९.
वाग्वित् १.१./
वाचक ६.१६.
वाच्य ६.१६.
वायव्य ५.१२, ३५.
वायव्यांश ५.३६.
वायु २.२, ३, १८, ४३, ५०, ६४; ३.२१, २७, ३५, ३६, ४०, ४१, ४६, ५०,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

५१, ५२, ५५, ६१, ७४; ४.४, १०, ११, १३, १४, १६, १८; ५.२२, २५, ३४,३६, ३७, ४३, ४६-४८.
वायुकर्म ४.१८.
वायुचार २.१६; ५.२१, २२.
वायुजय ३.३५.
वायूदय ५.५०.
वायुस्थान २.५५; ४.१८.
वायुस्थल ४.७.
वारणा २.३२.
वारुणांश ५.४९.
वासुदेव ४.२७, ६२; ६.५४.
विग्रह ३.६; ५.३९.
विजितेन्द्रिय ६.३.
विज्ञान ४.३१.
विद्या ४.३२.
विद्वान् १.४८; ३.७५; ४.९; ५.१८, २०; ६.१०, १७.
विधि १.४०, ५४, ६४.
विधियुक्त १.२६, ४०; २.५६; ६.४.
विनायक २.६०.
विरूपाक्ष ६.१४, ३४, ५०.
विशुद्ध ६.१८.
विशुद्धचेतस् ६.१३, १८, २६, ४५.
विशुद्धरूप ६.३४.
विश्वात्मन् ६.२४.
विश्वास १.६०.
विश्वोदरा १.२३, ३२, ४०.
विष १.७९.
विषय ३.३६, ५८.
विषुव ५.२८.
विष्णु १.५८; ४.९, २८; ६.२७.
विहंग २.८.
विहित ३.६०.
वीणा ३.३९.
वीर १.६७.
वीरासन १.७२.
वृश्चिक ५.३०.
वृषण १.७३, ७९; २.४५.
वृषभ ५.३०.
वृषभध्वज ६.१८.
वेद (मार्ग) १.१९, २२, ६२; ३.४; ६.१६.
वेदवादी १.४१; ६.२.
वेदान्त १.६०; ३.४.
वैश्वानर ४.३४, ३७, ३८, ६३.
वैष्णवी २.२६.
व्याधि १.७९.
व्यानकर्म २.४२, ४६, ५१.
व्यापार ५.११.
व्योम १.७७; ३.५२, ५३, ७३; ४.८, २१; ५.३७.
व्योमग ४.१३.
व्योमांश ५.३७, ४९.
व्योमाख्य ५.३५.
व्रत १.५३, ६६.
शक्ति १.५, ६, ८, ९, १२, २९, ३३;

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२.१, ४; ४.१७; ५.१, २;
६.१, २, १३, १५.
शंखध्वनि ३.४०.
शंखिनी २.२२, ३३, ३८.
शनैश्चर ५.३८.
शरीर १.५४; २.५, ७, ११,
६८; ३.५४, ६०.
शशांक ६.३८.
शान्त १.२०.
शास्त्रज्ञ (वित्) १.१, ६, १६.
शास्त्रार्थतत्वज्ञ १.१.
शिखिस्थान २.८.
शिरःपद्म ४.४३; ६.३६.
शिरस् १.७७; २.६१; ३.४४; ४.२४.
शिरा ३.४२.
शुद्ध ५.२, १४.
शुभ ५.४०, ४३.
शुभकार्य ५.४७.
शुभद ५.४१.
शुभावह ५.४०, ४१.
शुभाशुभ ५.७, ३३, ४२.
शूश्रूषा १.४५.
शून्यता ६.५९, ६०.
शून्यपद ३.५६.
शौच १.३९, ५१.
श्रद्धा १.२८, ५१, ६३; ४.७०.
श्रीवत्स ४.२८.
श्रोत्र २.४६; ३.३७.
श्वसन ३.१०.
श्वास ५.२५-२७, २९.
संग २.५६.
सन्तोष १.५३.
संसार १.६, २०; ३, २०.
संसारपाश ६.१९, ५२.
संसृति ५.२, ४.
संस्थिति ५.११.
सगुण (ध्यान) ४.१९, २०, २५,
३१, ३७, ४५.
सत् ६.८.
सत्य १.३८, ४१; ४.६१, ६९.
सत्यसंघ १.२.
सदानन्द (मय) ५.२, ४.
सदाशिव ६.३४, ५०.
समतावस्था १.३७; ३.५९; ४.५९.
समाधि १.३३, ३७; ४.५७-६६,
६.५८, ५९-६१.
समान (कर्म) २.४२, ४८, ४९, ५२.
समाहित १.३२, ६७, ७४; २.५८;
३.१; ४.१, १७, ४४.
सरस्वती २.२१, ३१, ३३, ३७; ३.७.
सर्वज्ञता ४.७१; ६.१०.
सर्वधर्म १.३१.
सर्वभूतहित १.२, ६.
सर्वभूतहृदिस्थित १.१०; ४.३१.
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञ १.१.
सहितकुम्भक ३.२८, २९.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy Kathmandu Collection

सांख्य ६.१७.
साधन १.२५.
साध्य ५.१६.
सिंह ५.३०.
सिंहासन १.६७, ७५.
सिद्धान्तश्रवण १.५३, ६०, ६१.
सीवनी १.६९, ७३. ७९, ८२; ३.४२.
सुख १.९, ५५; ५.७.
सुधारस ४.४२; ६.३३, ३८.
सुषुप्ति ५.९, ११.
सुषुम्णा २.१८-२१, २४-२६, ३०, ३१, ३४; ३.३९, ५१.
सूक्ष्म ४.२२; ५.१२.
सूरि १.२२; ४.५५; ९.१०.
सूर्य २.२९.
सृष्टि ३.४; ४.५०.
सोमभाग ५.२३.
सोममण्डल ४.४१.
सौम्य ५.४०, ४१.
सौरिन् ५.४०.
स्कन्ध ३.४४.
स्थिति ३.४; ४.५०; ५.२, १२.
स्फटिक ४.२९.
स्थूल ४.२२.
स्वकीय शाखा १.६१.
स्वप्न ५.९.
स्वयम्भू १.१८; ६.१६.
स्वस्तिक १.६७, ६८, ६९.
स्वात्मरूप ५.११.
स्वायम्भुव ६.४४.
हकार ४.८.
हरि ६.५४.
हव्यवाहन ४.३५.
हस्त १.७१, ७४; २.४७; ३.३७.
हस्तिजिह्वा २.२३, ३१, ३२, ३९.
हिंसा १.४०, ५९.
हित १.२, ६, ४१.
हृत् (हृदय) १.१०, ५९; २.४४; ३.६३, ७०; ६.१२, २१, ३७, ५६.
हृतपद्म ४.२६, ४१, ६२, ६३, ६४; ६.३२, ७३.
हृदयाम्बुज ४.२६, ४१, ६२, ६३, ६४; ६.३२, ३७.
हृदयाब्ज ४.२६, ४१, ६२, ६३, ६४; ६.३२, ३७.
हृदयाम्भोज ४.२६, ४१, ६२, ६३, ६४; ६.३२, ३७.
हृदयाकाश २.१८.
हृषीकेश १.१२.
ह्री १.५३, ६२.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"प्राय: भ्रमवश तत्त्वज्ञान की कोरी तार्किक कसरत को ही अध्यात्मज्ञान की पराकाष्ठा समझ लिया जाता है। किन्तु स्मरण रहे कि मात्र बुद्धिवाद पर आधारित आस्थाएं तथा प्रशिक्षण लेशमात्र भी ईश्वरीयसत्ता के समीप ले जाने में सक्षम नहीं हो सकते । इसलिए अध्यात्म के उदात्त शिखरों में विचरण हेतु अभ्यासमूलक स्वानुभुतियों को निश्चित रूप से योग की मनोकायिक प्रक्रियाओं के माध्यम से ही सम्भव बनाया जा सकता है।"

\- स्वामी कुवलयानन्द

कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मन्दिर समिति
स्वामी कुवलयानन्द मार्ग,
लोनावला, जि. पुणे
महाराष्ट्र (भारत) पिन - ४१० ४०३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

acenter@vsnl.com